लोक प्रशासन

ISSN: 2249-2577

अर्धवार्षिक शोध पत्रिका

वर्ष 14 | अंक 1 | जनवरी–जून 2022

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में संस्थाओं की पतनशीलता
शशि भूषण कुमार 1

आत्मनिर्भर भारत अभियान की अवधारणा–प्रमुख क्षेत्र एवं संभावनाएँ
गाँधीजी राय 13

शिकायतों का निवारण और सूचना का अधिकार
श्वेता मिश्रा 25

गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन में खादी की भूमिका
श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी 38

राजस्थान के ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका (बाड़मेर जिले के विशेष संदर्भ में)
मांगी लाल 179

INDIAN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान

Hkkjrh; ykd i’kklu lLFkku

v/;{k

egkfun'kd] vkb- vkb- ih- ,-]
ub fnYyh

lEiknd

çk- ,l- ,u- feJ
uk,Mk

lg-lEiknd

Mk- lkdr fcgkjh
ub fnYyh

lEikn eMy

ik- d- d- ik.M;
vkb- vkb- ih- ,-] ub fnYyh

ik- vferk flg
t-,u-;-] ub fnYyh

ik- Jhidk'k flg
fnYyh fo'ofo|ky;] fnYyh

Mk- ioh.k dekj
ikpk;] ';keyky dkyt] fnYyh

Mk- v'kkd dekj ik.M;
Hkrio vkb-,-,l-] ub fnYyh

ikB-l'kk/kd

Lugyrk

;g ykd i'kklu ;-th-lh- d;j fyLV e nt l g ¼xi-1½

okf"kd 'kYd % आजीवन सदस्य–रू. 150, व्यक्तिगत ग्राहक–रु. 200, संस्थागत ग्राहक–रू. 300
lkekU; vad % आजीवन सदस्य–रू. 75, व्यक्तिगत ग्राहक–रु. 100, संस्थागत ग्राहक–रू. 150
fo'k"kkd % आजीवन सदस्य–रू. 100, व्यक्तिगत ग्राहक–रु. 200, संस्थागत ग्राहक–रू. 200

Hkkjrh; ykd i’kklu lLFkku

bUnizLFk ,LVsV] fjx jkM] ub fnYyh&110002

Ykkd i:'kk lu

[kM-14] vd-1] tuojh- tu 2022

vuØef.kdk

Yk[k	i"B
भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में संस्थाओं की पतनशीलता शशि भूषण कुमार	1
आत्मनिर्भर भारत अभियान की अवधारणा–प्रमुख क्षेत्र एवं संभावनाएँ गाँधीजी राय	13
शिकायतों का निवारण और सूचना का अधिकार श्वेता मिश्रा	25
गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन में खादी की भूमिका श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी	38
'माईगव' की ई-प्रशासन में भूमिका उमेश कुमार	44
रक्षा और कृषि क्षेत्रों में आत्मनिर्भर भारत के बढ़ते कदम शीला कुमारी	50
राष्ट्र निर्माण में बहुलवर्गः संकल्पनाएँ एवं परिणति साकेत बिहारी	64
भारत में समाज और लोक प्रशासन कमलेश नारायण मिश्र एवं अंजुलता मिश्र	71
हरियाणा प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण हेतु प्रयासों की समीक्षा राजबीर सिंह दलाल	78
राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम : स्वस्थ ग्राम आधार स्तम्भ ब्रजेश कुमार मिश्र	89
हिमाचल प्रदेश पंचायती राज संस्थाओं में युवाओं की बढ़ती भागीदारी बलदेव सिंह नेगी	97

i"B

कोरोना वायरस : प्रकृति का तांडव एवं मानव जीवन संहिता
श्याम मोहन अग्रवाल एवं सुमित्रा देवी शर्मा 115

भारत में सकारात्मक कार्यवाही
पिंकी पुनिया एवं ऋतेश भारद्वाज 125

असंगठित क्षेत्र कोविड-19 का प्रभावः महिला घरेलू कामगारों के संदर्भ में
सुरेन्द्र कुमार 135

प्रशासकीय न्यायाधिकरण की अवधारणा
स्निग्धा त्रिपाठी 142

महिला सशक्तिकरण और कुटीर उद्योगः विकास का नवीन उपागम
ओमप्रकाश लाल श्रीवास्तव 149

मनरेगा : ग्रामीण विकास की कुंजी
मो. ताहिर अंसारी 157

प्रशासन में पर्यवेक्षण की भूमिका
महेश कुमार सिंह 164

स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में नैतिक मुद्देः समस्या और समाधान
श्याम सुन्दर प्रसाद 172

राजस्थान के ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका
(बाड़मेर जिले के विशेष संदर्भ में)
मांगी लाल 179

y[kd

डॉ. शशि भूषण कुमार – सह-आचार्य, स्नातकोत्तर, राजनीति विज्ञान विभाग, आर. एन. कॉलेज, हाजीपुर, वैशाली, बिहार।

डॉ. गाँधीजी राय– आचार्य (अ.प्रा.), राजनीति शास्त्र विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार।

श्वेता मिश्रा– सह-आचार्या, राजनीति शास्त्र विभाग, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली।

प्रो. श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी– कुलपति, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश।

डॉ. उमेश कुमार– आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, लोक प्रशासन विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार।

डॉ. शीला कुमारी– व्याख्याता, वीर कुंवर सिंह इंटर महिला कॉलेज, मेदिनीपुर, नासरीगंज, रोहतास (बिहार)।

प्रो. साकेत बिहारी– सह-आचार्य, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, दिल्ली।

डॉ. कमलेश नारायण मिश्र– सह-आचार्य एवं अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, म. मो. मा. पी. जी. कॉलेज भाटपारानी, देवरिया, उत्तर प्रदेश।

डॉ. अंजुलता मिश्र– सहायक-प्राध्यापिका, इतिहास विभाग, अवध सेन्टर फॉर वीमेन कॉलेज, संत कबीर नगर, उत्तर प्रदेश।

प्रो. राजबीर सिंह दलाल– विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़, हरियाणा।

डॉ. ब्रजेश कुमार मिश्र– सहायक-आचार्य, राजनीति शास्त्र विभाग, अखिल भारतीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रानापार, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

डॉ. बलदेव सिंह नेगी– संकाय सदस्य, ग्रामीण विकास, अंतर्विषयक अध्ययन विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला।

डॉ. श्याम मोहन अग्रवाल– सहायक-आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

डॉ सुमित्रा देवी शर्मा– सहायक-प्राध्यापिका, प्रभादेवी मेमोरियल विश्वविद्यालय, जयपुर।

डॉ पिंकी पुनिया– सह-आचार्या, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

डॉ. ऋतेश भारद्वाज– सहायक-आचार्य, राजनीति शास्त्र विभाग, श्यामलाल कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार– सह-आचार्य, स्नातकोत्तर, राजनीति-शास्त्र विभाग, पाटलीपुत्र विश्वविद्यालय, पटना।

स्निग्धा त्रिपाठी– शोध छात्रा, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

डॉ. ओमप्रकाश लाल श्रीवास्तव– सहायक प्राध्यापक, स्नातकोत्तर अर्थशास्त्र विभाग, हिंदू पी.जी. कॉलेज जमानियाँ, गाजीपुर (उ.प्र.)।

मो. ताहिर अंसारी– शोध छात्र, राजनीति शास्त्र विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

डॉ. महेश कुमार सिंह– शोध छात्र, राजनीति शास्त्र विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

श्याम सुन्दर प्रसाद– सहायक-आचार्य, राजनीति शास्त्र विभाग, श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

मांगीलाल– शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर, राजस्थान।

lEikndh;

यद्यपि लोक प्रशासन के प्रसार ने विकास की गति को त्वरित किया है तथापि कोरोना एवं ओमिक्रॉन जैसी महामारियों ने लोक संस्थाओं की प्रासंगिकता को सुपष्ट किया है। यह संदर्भ न केवल लोक हितों को प्राथमिकता प्रदान करता है अपितु लोक एवं तंत्र के बीच के सह-संबंध को भी दर्शाता है। हमारे राष्ट्र के संघटन में गाँवों का योगदान कोई कम नही है। परंतु गाँवों तक राष्ट्रीय कंपनियों की भागीदारी सीमित है। आपदाओं से मुक्ति के लिए लोक संस्थाओं ने अपनी अहम भूमिका निभाई है, इस तथ्य में किंचित मात्र भी संदेह नही है। परिवर्तनशील सामाजिक परिवेश में प्राचीन एवं अद्यतन सामाजिक मूल्यों के बीच लोक प्रशासन ने समन्वय स्थापित करने में मुख्य भूमिका निभाई है। लोक प्रशासन ने समाज के बदलते हुए मूल्यों के साथ सामंजस्य भी स्थापित करने में अपनी सक्रिय एवं अर्थपूर्ण भूमिकाएँ निभाई हैं। अपने देश में लोक प्रशासन से संबंधित प्रणालियों को सामाजिक सक्रियता के योजक कड़ी के रूप में देखा जाता है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों एवं विश्वासों में परिवर्तन के आलोक में स्थानीय सरकारों एवं निकायों की आपेक्षित भूमिका, लोक प्रशासन द्वारा ही तय की जाती है। संपोषित विकास, नृजातीयता, गरीबी, बेरोजगारी, महिलाओं की उत्पादन प्रक्रिया में कम भागीदारी, सांस्कृतिक विरोधाभास जैसे मुद्दे लोक प्रशासन की सहायता से न केवल उजागर हुए हैं अपितु इनको सरलीकृत कर पर्याप्त हल भी प्रदान किए गए हैं। सच तो यह है कि जनता के लिए नीति-निर्माण राजनीतिज्ञ करते हैं लेकिन इन्हें अमली जामा पहनाने का कार्य लोक प्रशासन द्वारा ही होता है। विदित हो कि संवैधानिक प्रक्रियाओं के विकास में संशोधनों का परिपेक्ष्य लोक कल्याणकारी भाव से भी अभिप्रेरित है। वस्तुतः प्रशासनिक बदलाव न केवल लोक प्रशासन की आख्या है बल्कि यह नवीन रचनात्मकता की अर्थपूर्ण व्याख्या भी है। लोक प्रशासन के बदलते हुए नए आयामों का संदर्भ लेते हुए यह अंक समसामयिक विषयों पर अनुसंधानात्मक रचनाओं की अर्थपूर्ण व्याख्या को अपने अर्न्तगत समेटता है। इस अंक का संदर्भ इसलिए भी प्रासंगिक है क्योंकि शोध पत्र न केवल लोक प्रशासन की पहलुओं की व्याख्या करते हैं बल्कि सुशासन के कार्यकारी रूप को आकड़ों के माध्यम से स्थापित भी करते हैं। समाज के वंचित वर्ग यथा, बुजुर्ग, बच्चे, महिलाओं, तथा मानवीय व भौतिक आपदाओं पर यह अंक एक विहंगम दृष्टि प्रदान करता है। यदि शोध पत्रों के अनुमोदनों को स्वीकार किया गया तो वास्तव में लोकतंत्र जनता का, जनता द्वारा एवं जनता के लिए शासन होगा। इन्हीं संदर्भों के साथ इस अंक में कुल बीस शोध पत्र प्रकाशित किए गए हैं।

भारतीय राजनीति व्यवस्था में समस्याओं में आपेक्षित तथा समय पर सुधारात्मक उपाय न खोजे जाने के कारण आज सह समस्याएँ पतनशीलता की ओर अग्रसर हैं। हमारी सामाजिक संरचना, परंपरा, तथा राजनीतिक संस्थाओं में परस्पर अनुकूलता के

अभाव के अलावा कहीं ज्यादा गंभीर कारण गाँधी की सलाह को न मानना है। इस अंक के प्रथम लेख में *शशिभूषण कुमार* ने अलग-अलग संदर्भों द्वारा संस्थाओं की पतनशीलता का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है।

गाँधीजी राय के अपने आलेख में यह बताया गया है कि आत्मनिर्भर भारत अभियान के अंतर्गत देश की अर्थव्यवस्था, बुनियादी ढांचा, प्रौद्योगिकी, उद्यमों तथा देशी उद्योगों का जीर्णोद्धार होगा और रोजगार के नए अवसरों से बेरोजगारी से जूझते युवाओं को अपने कौशल को प्रदर्शित करने का अवसर मिलेगा। इस अभियान की अवधारणा के भिन्न-भिन्न क्षेत्र हैं। इसके सफल और पारदर्शी क्रियान्वयन से देश निश्चित रूप से स्वावलंबी बनकर लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा।

सूचना का अधिकार विकेन्द्रित शासन को सुनिश्चित करने का एक प्रभावी यंत्र मात्र नहीं है बल्कि नागरिकों की शिकायत निवारण का यंत्र भी है नागरिक इसे नियमित रूप से प्रयोग कर रहे हैं तथा सरकार पर दबाव डालकर अपनी शिकायत संबंधी आवश्यक सूचना प्राप्त कर रहे हैं। इसके लिए नागरिकों का सदुपयोग और समर्थन काफी हद तक आपेक्षित है। अतः हम कह सकते हैं कि शिकायत निवारण उपायों के व्यवस्थित क्रियान्वयन का नागरिकों के ऊपर प्रत्यक्ष प्रभाव हो सकता है। इसका विश्लेषण *श्वेता मिश्रा* ने अपने लेख में किया है।

खादी के माध्यम से स्वदेशी को सफल बनाने और पुनः स्वराज की प्राप्ति में गाँधीजी का महत्वपूर्ण योगदान आजादी के बाद भी प्रासंगिक है। तभी तो द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान खादी तथा ग्रामोद्योग की स्थापना हुई। *श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी* ने अपने आलेख में इसका विवरण दिया है कि किस प्रकार खादी ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उत्पन्न कराकर लोगों को आत्मनिर्भर बनाया है तथा सुदृढ़ ग्रामीण सामाजिक भावना का निर्माण किया है।

माईगव एक ऐसा मंच है जो नागरिकों को चर्चा करने, कार्य करने, तथा प्रसार करने के माध्यम से विचारों, सुझावों और जमीनी स्तर पर उनके योगदान व भागीदारी को प्रोत्साहित करता है। *उमेश कुमार* ने अपने लेख में माईगव (मेरी सरकार), की ई-शासन में भूमिका का वर्णन किया है साथ ही उन पहलुओं को भी उल्लेखित किया है जो इसे और उपयोगी एवं समावेशी बना सकते हैं।

किसी भी देश को महाशक्ति बनने के लिए रक्षा व कृषि क्षेत्र में आत्म निर्भर बनने की आवश्यकता है। इन दोनों क्षेत्रों में भारत के बढ़ते कदमों का *शीला कुमारी* ने अपने लेख में विश्लेषण किया है कि किस प्रकार रक्षा क्षेत्र में विकास को बढ़ावा देकर हम उच्च क्षमता वाले हथियार बनाने में सक्षम होंगे। वहां कृषि क्षेत्र में नए-नए अनुसंधानों से देश को अन्न के मामले में स्वावलंबी बनाकर औरों की भी सहायता करेंगे।

राष्ट्र निर्माण एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। जिसमें काल एवं अवधि के आलोक में संरचनाएँ नवीन करने योग्य हो जाती है। जब तक सामाजिक व्याधियों को समूल नष्ट नहीं किया जायेगा तब तक राष्ट्र निर्माण में उर्जा का प्रवाह सम्यक रूप से नहीं

हो सकेगा। *साकेत बिहारी* ने अपने विशेष लेख में यह बतलाने का प्रयास किया है कि, किस प्रकार भारत के निर्माण की श्रृंखला में विभिन्न वर्गों की सक्रिय भागीदारी संकल्पित है।

भारत एक नव राष्ट्र है, जिसकी आयु 74 वर्ष हुई है लेकिन यह देश निश्चित रूप से प्राचीन समुदाय है। *कमलेश नारायण मिश्र व अंजुलता मिश्र* ने अपने लेख में देश के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक संस्थानों और प्रक्रियाओं तथा लोक प्रशासन के बीच संपर्क तथा अंतर-संबंधों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। यह संपर्क दो तरफा है। इस प्रक्रिया के दौरान दोनों आपस में प्रभावित होते हैं।

अपने लेख में *राजबीर सिंह दलाल* ने हरियाणा प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के लिए किए गए प्रयासों का अध्ययन किया है। इन प्रयासों का महिलाओं पर पड़े प्रभाव का आंकलन करना और उनके मार्ग में आ रही चुनौतियों को उजागर कर, इसको और अधिक प्रभावी बनाने के सुझाव दिए हैं कि किस प्रकार पंचायती राज व्यवस्था से महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है।

स्वास्थ्य किसी भी राज्य के विकास का मूल आधार है। भारत सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोंगों को सुलभ, वहनीय और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की शुरुआत की है। इस मिशन का प्रमुख उद्देश्य मातृ और शिशु की स्वास्थ्य सेवाओं को पहुँचाना है। इसी का विश्लेषण *ब्रजेश कुमार मिश्र* ने अपने लेख में किया है।

पंचायती राज संस्थाओं में देश की जनसंख्या के बड़े हिस्से, युवाओं की विशेष भागीदारी है, यह शोध का विषय है। *बलदेव सिंह नेगी* ने हिमाचल प्रदेश में 2021 के प्रारंभ में हुए पंचायती चुनावों में चुनकर आए प्रतिनिधियों की सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया है। जिसके लिए आंकड़ों का भी प्रयोग किया गया है। इस लेख में हिमाचल प्रदेश पंचायती राज चुनावों में युवाओं की भागीदारी का भी उल्लेख है।

श्याम मोहन अग्रवाल एवं सुमित्रा देवी शर्मा ने अपने लेख ''कोरोना वायरसः प्रकृति का तांडव एवं अपने जीवन संहिता'' में यह बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार इस वायरस की वजह से दुनिया एक मुश्किल दौर से गुजर रही है। अपने लेख में कुछ विद्वानों के विचारों का संकलन करते हुए यह कहने का प्रयास किया है कि हमें मानव जीवन की रक्षार्थ प्रकृति की रक्षा और संरक्षणों का दायित्व निभाना होगा।

समानता का मुद्दा प्रत्येक राष्ट्र में एक चुनौतीपूर्ण मुद्दा रहा है। सकारात्मक कार्यवाही की अवधारणा समानता के सिद्धान्त के रूप में जुड़ी है। *ऋतेश भारद्वाज एवं पिंकी पुनिया* ने अपने लेख में सकारात्मक कार्यवाही से संबंधित भारतीय संविधान में मौजूद प्रावधानों, सिद्धांतों और व्यावहारिक पहलुओं का अध्ययन करते हुए नरम और कठोर सकारात्मक कार्यवाही के प्रयासों की समीक्षा की है।

कोविड-19 महामारी ने जीवन और जीविका दोनों को ही प्रभावित किया है। *सुरेन्द्र कुमार* के लेख में महिला घरेलू कामगारों की महामारी के दौरान स्थिति का आकलन

किया है और सामाजिक, आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के उपाए भी सुझाए हैं क्योंकि सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ व कार्यक्रमों को चलाए जाने के बावजूद सहायता इन तक पर्याप्त रूप में नहीं पहुँची और न ही नियोक्ताओं ने इनका वेतन दिया।

भारत में भी अन्य देशों की भांति विभिन्न प्रकार के प्रशासकीय न्यायधिकरणों की अतिशय वृद्धि परिलक्षित हो रही है। इनको प्रशासनिक न्यायालय के रूप में भी अभिव्यक्त किया गया है। हालांकि अधुनातन समय में प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने अनिवार्य स्वरूप धारण कर लिया है। परन्तु इसमें न्याय का पुट पंखुरित होना परमावश्यक है। इसका विश्लेषण *स्निग्धा त्रिपाठी* ने अपने लेख में किया है।

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य पुरुषों की बराबरी करना न होकर उन्हें आर्थिक सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्र में प्रत्येक स्तर पर भागीदारी से है तथा उन्हें स्वावलंबन बनाने से है। इस प्रकार जब कृषि तथा कुटीर उद्योगों का विकास होगा तो महिलाएँ सशक्त होंगी तथा उनकी स्थिति भी सुदृढ़ होगी। जब महिलाएं आत्मनिर्भर होती हैं तो समाज भी लाभान्वित होता है तथा विकास का यह नवीन उपागम है। यह *ओम प्रकाश लाल श्रीवास्तव* ने अपने लेख में बखूबी बतलाया है।

मो. ताहिर अंसारी ने अपने शोधपत्र में दुनिया की सबसे बड़ी रोजगार गारन्टी योजना का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए उत्तर प्रदेश से सुदूर पूर्व में अवस्थित कुशीनगर जनपद के मनरेगा से संबंधित द्वितीय प्रदात्तों के आधार पर मनेरगा की वस्तु स्थिति को समझाने का प्रयास किया है। जिनका उन्होंने तालिकाओं के माध्यम से विवेचन किया है।

प्रशासन ने किसी भी संगठनात्मक कार्य को सुचारू रूप से सम्पन्न करने में पर्यवेक्षक की खास भूमिका होती है। पद सोपानिक वाले संगठन में पर्यवेक्षण स्वाभाविक ही होता है क्योंकि उसका प्रत्येक स्तर ही स्वयं से नीचे के स्तर का पर्यवेक्षण करता है और अपने ऊपर के स्तर द्वारा पर्यवेक्षित किया जाता है। इसका विश्लेषण *महेश कुमार सिंह* ने अपने लेख में प्रस्तुत किया है।

किसी भी क्षेत्र में नैतिकता के गुणों की उपस्थिति या कमी समाधानों और समस्याओं की ओर ले जाती है। स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में नैतिक मुद्दों का विशेष स्थान है। चिकित्सकीय नैतिकता का अभिप्राय चिकित्सा क्षेत्र के सभी मानकों से है जो सार्वभौमिक, व्यावहारिक, वस्तुनिष्ठ, तार्किक, न्यायपूर्ण, प्रासंगिक और व्यावहारिक हों। इसका विवेचन *श्याम सुन्दर प्रसाद* ने अपने लेख में किया है।

वर्तमान कोविड-19 महामारी के दौरान राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका में बड़ा बदलाव आया है तथा इनका महत्व देखते हुए निरंतर अध्ययन करना आवश्यक है। *मांगीलाल* ने अपने शोध पत्र में राजस्थान के बाड़मेर जिले में ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका पर विश्लेषण किया गया है।

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में संस्थाओं की पतनशीलता

शशि भूषण कुमार

lkjk'k *राजनीतिक व्यवस्था में नेतृत्व की सकारात्मक भूमिका एवं संस्थाओं के पारदर्शी कार्य-संचालन पर बहुत हद तक संस्थाओं का उत्तरोत्तर विकास निर्भर करता है। दुर्भाग्यवश, हमारे देश के संदर्भ में उपरोक्त दोनों ही बातें नकारात्मक रूप में साठ के दशक के अंतिम वर्षों से ही दृष्टिगोचर होने लगीं। जिन प्रतिमानों पर राजनीतिक व्यवस्था की नींव रखी गई, वो मजबूत होने की बजाय धीरे-धीरे कमजोर होने लगे। अपेक्षित एवं समय पर सुधारात्मक उपाय नहीं खोजे जाने के कारण आज समूची राजनीतिक व्यवस्था पतनशीलता की ओर अग्रसर है। हमारी सामाजिक संरचना व परंपरा तथा राजनीतिक संस्थाओं में परस्पर अनुकूलता का अभाव संस्थाओं की पतनशीलता का कारण हो सकता है लेकिन इन कारकों से कहीं ज्यादा गंभीर तत्कालीन नेतृत्व के द्वारा भारतीय शासन व्यवस्था के संदर्भ में गांधी के सलाह को सम्मान न दिया जाना है। एक तरफ सदाचार एवं सादगी में विश्वास के विचार प्रदर्शित हो रहे थे जो भारतीयता के अनुरूप कल्याण के कारण बनते, तो दूसरी ओर उपभोक्तावाद, भौतिकवाद, विज्ञान और तकनीक के प्रयोग, शहरीकरण और केन्द्रीकृत योजनाओं के द्वारा गरीबी -उन्मूलन के विचार प्रदर्शित हो रहे थे। प्रस्तुत आलेख में उपरोक्त संदर्भ में ही संस्थाओं की पतनशीलता के विश्लेषण का प्रयास किया गया है।*

प्रस्तावना

i"BHkfe vkj ifji{;

राष्ट्र-राज्यों के पिछड़ेपन के कारण कुछ विचारक सांस्कृतिक, भौगोलिक, पारिस्थितिक या सामाजिक कारकों में खोजते हैं[1] किन्तु हम मानकर चलते हैं कि उनके पिछड़ेपन का मूल कारण उनकी सुदृढ़ और स्वायत्त संस्थाओं को विकसित न कर पाने की असफलता है। भारत के संदर्भ में इस असफलता का विशेष मौलिक कारण है। वैचारिक धरातल पर जवाहरलाल नेहरू, बल्लभ भाई पटेल और बाबा साहेब भीमराव

अम्बेडकर ने गांधी के विचारों को सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक धरातलों पर जिस तरह अस्वीकृत किया (जिसकी अब तक के शोधकर्ताओं और विद्वानों ने जानबूझकर अनदेखी की है)- उसमें भारत की राजनीतिक संस्थाओं के पिछड़ेपन और अर्द्धविकास के कारण विद्यमान हैं। विचारों से प्रतिमानों (Models) का निर्माण हुआ एवं प्रतिमानों से संस्थाएँ बनीं या बिगड़ी हैं। मोहनदास करमचंद गांधी[2], विनोबा भावे[3], रबीन्द्र नाथ टैगोर[4] और सर्वपल्ली राधाकृष्णन[5] जैसे लोगों के विचार सदाचार एवं सादगी में विश्वास को प्रदर्शित करते थे किन्तु नेहरू उपभोक्तावाद, भौतिकवाद, विज्ञान और तकनीक के प्रयोग, शहरीकरण और केन्द्रीकृत योजनाओं के द्वारा गरीबी-उन्मूलन में विश्वास रखते थे। अक्टूबर-नवम्बर 1945 में गांधी और नेहरू के बीच के पत्राचार (गांधी ने दो चिटिठ्याँ लिखीं, नेहरू ने एक का ही जवाब दिया; *दूसरा* अनुत्तरित रह गया)[6] में व्यक्त विचारों के अन्तर नए राष्ट्र-राज्य में संस्था-निर्माण की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हैं। 5 अक्टूबर 1945 को गांधी ने नेहरू को पहला पत्र लिखा जिसके अंश सुधीर चंद्रा द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित *'द टाईम्स ऑफ इंडिया'*, 08.11. 1987 में इन शब्दों में प्रस्तुत है :

I believe that if India is to attain true freedom, and through India the world as well, then sooner or later we will have to live in villages-in-huts, not in palaces. A few billion people can never live happily and peaceably in cities and palaces; nor by killing one another, that is, by violence, or through untruth…

That truth and non-violence we can glimpse only in the simplicity of villages… The essence of what I say is that the things required for human life must be individually controlled by every person– the individual cannot be saved without this control…

गांधी के अनुसार 'स्व का अर्थ है–आत्म नियंत्रण और अपने हाथों और पैरों से काम करना, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वस्तुओं का उत्पादन करना; और स्वराज का अर्थ है–राष्ट्रीय स्तर पर नियंत्रित सरकार की स्थापना।[7] पर गांधी चाहते थे कि ग्रामीण गणतंत्र राष्ट्रीय सरकार को नियंत्रित करें।[8] नेहरू और अम्बेडकर इसके विपरीत विचार रखते थे कि ग्रामीण भारत ''स्थानीयता, अज्ञानता, संकीर्णता और सम्प्रदायवाद का कुंड (Sink) है।[9] अतः गांधी के विकेन्द्रित गांव से संसद की ओर तक जाने वाले राज्य (Bottom-up state) की जगह पर नेहरू-पटेल-अम्बेडकर केन्द्रित संसद से गांव की ओर वाले राज्य (Top-down state) के पक्षधर थे जो उनके अनुसार भारत के नियोजित विकास का माध्यम बनेगा। ग्रामीण उद्योगों, स्वदेशी, कुटीर उद्योगों और अपनी अनिवार्यताओं के अनुसार चीजों को उत्पादित करने की ग्रामीणों के द्वारा प्रयासों पर गांधी का आर्थिक प्रतिमान आश्रित था पर नेहरू-पटेल-अम्बेडकर के विकास प्रतिमान में उनकी जगह एक नागरीय और भारी उद्योग पर आधारित केन्द्रीय शासन द्वारा निर्मित और संचालित योजनाबद्ध विकास के प्रतिमान ने ले ली। नेहरू ने

योजना आयोग नामक संविधानेत्तर संस्था को 'सुपर कैबिनेट' के रूप में प्रतिस्थापित किया।

हिन्दू-मुस्लिम विवाद की जड़ें भी गांधी-नेहरू विभेद में खोजी गयी हैं। *रूडोल्फ और रूडोल्फ* नेहरू के 1929 के 'पूर्ण स्वराज' के प्रस्ताव को भारत-पाकिस्तान के विभाजन और हिन्दू-मुस्लिम कलह की जड़ें मानते हैं। गांधी ने 1929 में पत्र लिखकर नेहरू को कहा था कि आपका प्रस्ताव जल्दीबाजी में लिया गया प्रस्ताव है।[10] गांधी, तेज बहादुर सप्रू, मोतीलाल नेहरू 1927 से ही *'डोमिनियन स्टेट्स'* की मांग के पक्षधर थे और उसी के अंतर्गत स्वतंत्रता चाहते थे, जैसा कनाडा में हुआ। 'डोमिनियन स्टेट्स' में ब्रिटेन का हस्तक्षेप रहता जिससे भारत के अल्पसंख्यक अपने प्रतिनिधित्व और सुरक्षा के विषय में निश्चिंत अनुभव करते। नेहरू-पटेल ने इसकी जगह पर बहुमत पर आधारित संसदीय सरकार की स्थापना के लिए 1929 से ही गांधी की इच्छा के विरूद्ध काम करना शुरू कर दिया।[11] इससे मुसलमान भयभीत हो गए कि हिन्दुओं का निर्दय बहुमत उनपर मनमानी से शासन करेगा और वे स्वतंत्र भारत में हिन्दुओं के अधीन रहकर जीवन-यापन करने को विवश हो जायेंगे। *रूडोल्फ और रूडोल्फ* का संकेत है कि स्वतंत्रता के बाद मुसलमानों को पंथनिरपेक्षता के नाम पर सुरक्षा देने का दिखावा किया गया। यदि गांधी की बात मानी जाती तो भारत-पाकिस्तान उपमहाद्वीप में 1946 के विभाजन काल में इतना बड़ा साम्प्रदायिक नरसंहार नहीं होता। गांधी बहुल संस्कृति के प्रबंधक, बहुल धर्म में आस्थावान तथा बहुलता में एकता के प्रतीक थे; वे धर्म और राजनीति की पृथकता के ब्रिटिश बनावटी ढकोसले में विश्वास नहीं करते थे और जीवन में अध्यात्म और नैतिकता की अनिवार्यता पर बल डालते थे, चाहे वे राजनीतिक जीवन ही क्यों न हो। उनके अनुसार नैतिकता सभी धर्मों की मूल और मानवता का आधार है। गांधी हिन्दू-मुस्लिम-पारसी-ईसाई किसी भी धर्म के अनुयायियों में भेद नहीं करते थे लेकिन यह विश्वास नहीं करते थे (जैसा राजीव गांधी ने 1989 में प्रधानमंत्री के रूप में अपने निर्णयों से किया) कि मुस्लिम कुरान या शैरियत में लिखे गए कानून से शासित हों और हिन्दू सनातनी शास्त्रों से। सभी धर्मों के लोगों के लिए भारतीय संविधान के नीति-निर्देशक तत्वों में सामान्य सर्वव्यापी संहिता के निर्माण का प्रावधान है किन्तु ऐसी संहिता का निर्माण नहीं हो सका। रूडोल्फ यह तर्क भी प्रस्तुत करते हैं कि नेहरू एकात्मक राज्य में विश्वास करते थे जबकि गांधी विभिन्न स्तरों में विभाजित संघीय राज्य की स्थापना में।[12] उपर्युक्त गांधी-नेहरू विचारधारात्मक अंतर भारत की राजनीतिक सस्थाओं के निर्माण, विकास और सत्तर-अस्सी के दशक आते-आते पतन के कारण बने। नेहरू ने गांधी की बात न मानकर संस्थाओं के लिए संकट उत्पन्न किया।

jktuhfrd.vkfFkd ekudksa dk iHkko lkiru

1950 के दशक में राजनीतिक या प्रशासनिक कार्यपालिका में सादगी और सदाचार बाद के दशकों से तुलनात्मक ढ़ंग से एक हद तक संतोषजनक थे। किन्तु यह

एक सापेक्ष वक्तव्य है। 1946 के जीप घोटाले में तत्कालीन भारत के ब्रिटिश उच्चायुक्त बी. के. कृष्णा मेनन; मुंद्रा कांड में तत्कालीन केन्द्रीय मंत्री टी. टी. कृष्णाचारी; नेहरू मंत्रिपरिषद के दो राज्य मंत्रियों; कई घोटालों में पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों और ओडिशा (तब का उड़ीसा) के तत्कालीन मुख्यमंत्री बीजू पटनायक की संलिप्तताओं के आरोप लगाए जाते थे परन्तु नेहरू ने प्रधानमंत्री के रूप में इन आरोपों के विरूद्ध कोई कठोर कदम नहीं उठाया। कैरों को प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने नेहरू द्वारा नियुक्त दास कमिटी, जिसका प्रतिवेदन जानबूझकर नेहरू के शासन काल के पश्चात ही प्रस्तुत किया गया, के आधार पर हटाया और बीजू पटनायक को शास्त्री ने अपने स्थान पर दूसरे मुख्यमंत्री को मनोनीत करने की छूट प्रदान करते हुए उन्हें भी पदमुक्त किया। बिहार के मंत्रियों के कदाचार की जाँच के लिए अय्यर आयोग का गठन पाँच कांग्रेसी मंत्रियों, जिनमें बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री के. बी. सहाय तथा अन्य पाँच मंत्रियों महेश सिन्हा, सत्येन्द्र नारायण सिन्हा, राम लखन सिंह यादव, राघवेन्द्र नारायण सिंह तथा अंबिका शरण सिंह शामिल थे, के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच के लिए गठित हुआ जिसने अधिकांश आरोपों को सही पाया।[13] मधोलकर आयोग ने 19 नवम्बर 1967 को महामाया प्रसाद सिन्हा के मुख्यमंत्रित्व काल में गठित संयुक्त मोर्चा मंत्रिपरिषद के 14 मंत्रियों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों को सही पाया।[14] कार्यपालिका में व्याप्त भ्रष्टाचार का प्रश्न संस्थाओं के पतन की भयानक समस्या बन गई।

कार्यपालिका के चरित्र का आदर्शपरक मानक कौटिल्य और प्लेटो से लेकर प्रशासनिक सुधार आयोगों (1967 और 2009 में गठित) ने प्रस्तुत किया है। प्रशासनिक सुधार आयोग (2009) ने एक प्रतिवेदन में विधि द्वारा शासित, प्रत्युत्तरदायी, जवाबदेह, संस्थात्मक, विकेन्द्रीकृत, पारदर्शी, नैतिक शासन एवं असैनिक सेवा (जिसमें 2014 में नरेन्द्र मोदी सरकार के द्वारा पुलिस कानून सुधार का प्रस्ताव भी जोड़ा गया है), परिष्कृत प्रक्रियाएँ, शासन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए सेवाओं के स्वतंत्र और आवधिक मूल्यांकन के प्रावधान, न्याय साम्यता और कार्यकुशलता को सुशासन के मानक माने और फरवरी 2009 के उपर्युक्त आयोग के प्रतिवेदन ने शासन की नागरिक के प्रति प्रतिबद्धता को अनिवार्य माना। 15 अप्रैल 2009 में समर्पित इसी आयोग के प्रतिवेदन ने सरकार के लिए पाँच कार्यवाहियोंः ग्रामीण विकास, पेय जलापूर्ति, आवास उपलब्धता, नागरीय निर्धनता उन्मूलन, शहरी विकास और पंचायती राज व्यवस्था के संचालन को प्राथमिकता देने की अनुशंसा की।[16] 1946 में गांधी ने अपने आर्थिक प्रतिमान में इन्हीं मानकों को समाहित किया था पर 2009 में (संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों के द्वारा स्थानीय संस्थाओं को मान्यता प्रदान करने के बाद भी) उन्हें ही दुहरा रहे हैं और 72 वर्षों में स्थानीय संस्थाओं को समुचित ढ़ंग से संचालित नहीं कर पाए। 2009 के प्रतिवेदन में भी आयोग ने सामान्य व्यक्ति की सामान्य आवश्यकताओं जैसे अन्न, वस्त्र, चिकित्सा, शिक्षा, पौष्टिकता, सुरक्षा (विशेषतः महिला सुरक्षा एवं शिशु

कल्याण) पर आवश्यक बल नहीं दिया जो राष्ट्रीय विकास के विस्मयकारी एवं दुर्भाग्यपूर्ण अनुभूतिहीनता के द्योतक हैं। अन्न सुरक्षा कानून, छह से 14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा, सूचना और सेवा श्रम के अधिकार बाद में दिए गए पर ये सभी समुचित रूप से लागू नहीं हैं।

भारत की स्वतंत्रता की अर्द्धरात्रि में संविधान सभा में राधाकृष्णन ने कहा था कि स्वतंत्र भारत का मूल्यांकन इस बात पर निर्भर करेगा कि वह अपने सामान्य व्यक्तियों के हितों को किस तरीके से और कितनी अवधि में पूर्ण करता है।[17] गांधी ने अंत्योदय को भारत का लक्ष्य घोषित किया था और राजनीतक अभिजनों के जीवन में सरलता और सादगी को अपनाने को अनिवार्य माना था। विनोबा अपनी पदयात्रा के लिए प्रसिद्ध थे। राजेन्द्र प्रसाद और पटेल सादे पोशाक पहनने और मितव्ययिता के साथ जीवन-यापन के लिए प्रसिद्ध थे। जब राजनीतिक कार्यपालिका ऐसा प्रतिमान उपस्थित करती तो नौकरशाही, जिसे गरीब जनता से सीधे संपर्क बनाना था, भी जनजीवन को प्रतिविंबित करती, न कि पश्चिमी या नागरीय सभ्यता या संस्कृति को। पर गांधी, टैगोर, विनोबा या राधाकृष्णन की ये आशाएँ पूरी नहीं हुई। गांधी-नेहरू विकास प्रतिमान में जो महान अंतर छिपा है, वही आगे चलकर पारंपरिक संस्थाओं के पतन का कारक बन गया।

गांधी ग्राम गणतंत्रों की स्वायत्तता तथा ग्राम पंचायतों के समूहों को मिलाकर राष्ट्रीय पंचायत के गठन के पक्षधर थे।[18] लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों को विकसित और हाथों से बने कपड़े (खादी), गुड़ और नीरा के प्रयोग पर बल डालते थे। संविधान सभा ने श्रीमन् नारायण द्वारा प्रस्तुत पंचायती राज की अवधारणा पर आधारित भारतीय संविधान के प्रारूप को अस्वीकार कर दिया। गांधी दलितों की सेवा किया करते थे और उन्होंने नेहरू को सलाह दी कि कांग्रेस के मंत्रिगण यदि दलित बस्तियों में निवास करें तो यह दलित के लिए सम्मानजनक होगा और मंत्रीगण भी उपभोक्तवादी संस्कृति से मुक्त रहेंगे। *हिन्द स्वराज* में गांधी ने ब्रिटिश संसद को वेश्या की संज्ञा दी थी। संसद की संस्था के विषय में उनकी यही सामान्य राय थी। वे मशीनी सभ्यता के विकास के विरोधी थे, विशेषतः वैसी मशीनें जो सामान्य मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरी न करती हो। उन्होंने भांप लिया था कि मशीनी ज्ञान की क्रांति आय में असमानता को बढ़ायेगी और यह असमानता एक बिंदु के बाद सामाजिक तनाव उत्पन्न करेगी।[19] गांधीवाद से प्रभावति होकर विनोद खोसला जैसे कम्प्यूटर और सूचना तकनीक के विख्यात विशेषज्ञ स्वीकार करने लगे हैं कि बाजार में बड़ी मात्रा में सामानों के होने, विकास दर की वृद्धि होने और बेहतर शिक्षा और कौशल के बावजूद अस्सी प्रतिशत जनता का भाग आवश्यक गति से बुद्धिमान सॉफ्टवेयर सिस्टम को पराजित नहीं कर सकेंगे।[20] मार्क एंडरसन के अनुसार यह नौकरियों की उपलब्धता में भी भारी कमी लाएगी।[21] अधिकांश लोगों के जीवन-स्तर की गुणवत्ता कम हो जाएगी

और वे संस्कृति, कला, विज्ञान, रचनात्मकता, दर्शन, प्रयोगात्मकता, खोज और रोमांच में भाग नहीं ले सकेंगे।[22] अतः थॉमस पिकेटी जो गांधीवादियों, समाजवादियों और विनोबा की भाषा का प्रयोग करते हुए आधुनिक सामाज में आय के पुनर्वितरण की जोर-शोर से वकालत कर रहे हैं, की बात माननी होगी।[23] *रूडोल्फ एवं रूडोल्फ* (1984 और 2009 में लिखित पुस्तकों) के अनुसार गांधी– परम्परा, आधुनिकतावाद और नव आधुनिकतावाद– तीनों के पोषक थे जबकि नेहरू आधुनिकतावाद के, जिन्होंने गांधीवाद के पूर्व आधुनिकतावाद के कई मौलिक तत्वों का प्रतिकार किया। वे भूतपूर्व ब्रिटिश सेनाध्यक्ष के लंबे-चौड़े आवास को तीन मूर्ति भवन के रूप में परिणत कर स्वयं निवास करने लगे। अन्य मंत्रियों को भी बड़े-बड़े बंगले दिल्ली के लंबे-चौड़े राजपथों पर आवंटित किए गए। राष्ट्रपति भी गवर्नर जनरल के 352 कमरों वाले आवास, जिसमें मुगल गार्डन भी सम्मिलित था, में रहने लगे। सादगी का कहीं कोई प्रतीक के रूप में भी प्रदर्शन नहीं था।

नेहरू ने 'समाज के सामजवादी प्रतिमान' को अपनी आर्थिक नीति का मूलाधार कांग्रेस के अवाडी सत्र, 1955 में घोषित किया। 1957 में द्वितीय पंचवर्षीय योजना अर्थशास्त्री महालनोविस की सलाह पर निर्मित हुई जिसमें भारी उद्योगों पर बल डाला गया। नेहरू सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों को बढ़ावा देने के पक्षधर थे हालांकि घनश्याम दास बिड़ला जैसे बड़े पूँजीपति कांग्रेस कार्य समिति के सदस्य थे और आर्थिक नीति के निर्माण में वे नेहरू के पक्षधर रहते थे।

भारत के संविधान की प्रस्तावना एवं मूल अधिकारों तथा राज्य नीति के निर्देशक तत्वों वाले अध्याय में भारत की तत्कालीन 40 करोड़ (अब 1.30 अरब) जनता के लिए समाजवादी और उदारवादी लक्ष्यों को समाहित किया गया। स्वतंत्रता, समानता, न्याय, बंधुता एवं व्यक्ति की गरिमा जैसे आदर्श प्रस्तावना में शामिल किए गए। धन का एक ही हाथों में संकेन्द्रण को रोकने तथा वितरणात्मक न्याय की स्थापना करने के आदर्श राज्य नीति के निर्देशक तत्व में शामिल किए गए। लेकिन यह संस्थाओं एवं नेतृत्व के पतन का द्योतक है कि आजादी के 74 वर्षों के बाद भी पूरी दुनिया के कुछ गरीबों में से एक-तिहाई भारत में रहते हैं।

2017 में प्रति व्यक्ति आय की दृष्टि से भारत का स्थान 190 देशों में 122वाँ था। भारत में तीस लाख लोग टी. बी. से पीड़ित हैं। हम स्थापित आदर्शों से इतनी दूर क्यों रह गए? यदि 1985 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कहा कि दिल्ली से भेजे गए सौ पैसे में जनता तक 15 पैसे पहुँचते हैं तो कौन सी संस्थाएँ और किन-किन प्रकार के बिचौलियों (यथा– राजनीतिक नेताओं, असैनिक सेवा के सदस्यों, कार्यकर्ताओं, राजनीतिक दलों, गैरसरकारी संगठनों या अपराधी तत्वों) को इस भ्रष्टाचार के लिए जिम्मेवार माना जाए?

नेहरू के समाज का समाजवादी प्रतिमान, 80-90 के दशक से भारत का उदारीकरण की ओर झुकाव और 2014 में उदारीकरण के संवर्धित रूप को भारत की

आर्थिक और वैदेशिक नीति में समाहित करना संविधान के लक्ष्यों के विपरीत है। समानता, स्वतंत्रता, न्याय और जनतंत्र जनता के बड़े भाग के लिए अनुपलब्ध हैं। समाजवाद संविधान की आधारभूत विचारधारा में सन्निहित है जबकि उदारीकरण, जैसा गांधी, एंडरसन, खोसला और पिकेटी को आशंका थी, इसका प्रतिवाद है। असमानता की हदें 74 वर्षों के बाद भी बढ़ रही है। भारत के दस प्रतिशत उद्योगपति विश्व के धनी व्यक्तियों में गिने जाने लगे हैं जबकि 33 प्रतिशत गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रहे हैं। जीवन-यापन के लिए सबों को यथेष्ट रूप से अन्न, वस्त्र, आवास, पौष्टिक पदार्थ, चिकित्सा, शिक्षा की सुविधाओं की उपलब्धता नहीं है और अंत्योदय के सपने साकार नहीं हो पा रहे हैं। बढ़ती असमानता और भ्रष्टाचार के लिए याराना पूँजीवादी (crony capitalism) काल में राजनीतिक कार्यपालिका, असैनिक सेवा और औद्योगिक एवं व्यापारिक घरानों के बीच तालमेल जिम्मेवार है। शिक्षित युवा रोजगार 1967, 1989 और 2014 के चुनावों का मुख्य मुद्दा था पर अभी भी बहुत बड़ी संख्या में बेरोजगारी और मूल्य वृद्धि के चलते वे, किसान और मजदूर भूख के शिकार हैं। विकास की दर उदारीकरण के प्रथम चरण में बढ़ी, पुनः घटी और 2014 में 5.5 प्रतिशत थी। आज कोरोना काल में विकास दर की बात ही बेमानी लगती है जबकि चीन को छोड़कर समूचे विश्व की अर्थव्यवस्था नकारात्मक स्थिति में है जिसकी एक-दो वर्षों में ऊपर बढ़ने की संभावना नगण्य है। नेहरू और उत्तर नेहरू नेताओं में अधिकांश का आधुनिकतावाद, पश्चिमीकरण और उपभोक्तावाद गांधीवादी स्वदेशी की अवधारणा के विरूद्ध खड़ा हो गया और नरेन्द्र मोदी का *'मेक इन इंडिया'* भी आशानुरूप विदेशी निवेशकों को आकर्षित करने में बहुत ज्यादा कामयाब न हो सका है। इंदिरा गाँधी के 'गरीबी हटाओ' के नारे केवल जनवादी उभार लाने और सत्ता पाने के, न कि सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के, कठोर प्रयास थे। इसीलिए बांग्लादेश के विजय के बाद 'दुर्गा' की उपाधि प्राप्त होने पर भी उनकी राजनीतिक छवि फीकी हो गई। भारत के गांव आज भी संरचनात्मक विकास और नगर नागरीय सुविधाओं से वंचित हैं। नगरीकरण की जगह मलीन बस्तियों का भरमार हुआ; पर्यावरण का प्रदूषण हुआ और मानव चरित्र का अवमूल्यन हुआ। जनता का बड़ा भाग साक्षरता, शिक्षा, वस्त्र, स्वास्थ्य, अन्न सुरक्षा, पौष्टिकता और आवास जैसी जीवन-यापन की मूलभूत आवश्यकताओं से आज भी वंचित है। कमजोर वर्गों की समस्याएँ और भी विकट हैं। 2014 एवं 2019 के आम चुनावों में किए गए मोदी के वादे भी छलावा साबित हो रहे हैं। अर्थव्यवस्था में गिरावट एवं रोजगार के पर्याप्त अवसरों की व्यवस्था न हो पाना इसके संकेत मात्र हैं।

डारोन एसमोगलू और जेम्स राबिंसन के अनुसार समावेशी आर्थिक संस्थाएँ ही समावेशी बाजार विकसित कर सकती हैं।[24] समावेशी बाजार के बिना जनता अपनी योग्यता के अनुसार व्यवसाय चुनने का अवसर नहीं प्राप्त कर पाती। बाजारीकरण उन्हें बराबरी का मौका नहीं प्रदान करता; यदि उनमें व्यापार या सेवा का मेधा रहता भी

है तो बड़े व्यापारियों या कॉरपोरेट घरानों के शोषण के चलते उनके मेधा का उपयोग या विकास अवरूद्ध हो जाता है। विकास वास्तव में आम आदमी के लिए पतन का कारक बन जाता है। अमृत्य सेन, स्ट्रिगलिज और थॉमस पिकेटी कहते हैं कि विकास दर की वृद्धि शिक्षा, स्वास्थ्य, बालकों/बालिकाओं को पौष्टिक भोजन, महिला सुरक्षा, नागरिक सुरक्षा और जीवन-यापन की अन्य सुविधाओं को आम आदमी को उपलब्ध कराने में अभिव्यक्त नहीं होता। सामान्यतः यह बड़े पूँजीपतियों या उद्योगपतियों के विकास, होटलों या मॉलों के विकास, ट्रांसपोर्टर्स या बिल्डर्स के विकास तक सीमित रह जाता है जबकि विकास मानव की खुशहाली में प्रदर्शित होना चाहिए। अतः भारत का सामाजिक-आर्थिक विकास चाहे वह सार्वजनिक या निजी उपक्रमों के माध्यम से हुए हों। गरीबी, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति आदि मौलिक समस्याओं को दूर करने की अक्षमता के चलते पतन का कारक बन गए हैं और चुनावी नारे नेतृत्व की अवसरवादिता के सूचक।

विचारधारा के स्तर पर वामपंथ के लोग नेहरू के पक्षधर थे और गुटनिरपेक्ष आंदोलन के पुरोधा होते हुए भी कई कारणों से सोवियत संघ के निकट थे। आजादी के पहले भी वे मार्क्सवाद और समाजवाद की बात किया करते थे और गांधी ने 1946 में जब प्रदेश कांग्रेस कमिटियों के बहुमत की इच्छा को ठुकराते हुए नेहरू को कार्यकारी परिषद का वाइस प्रेसिडेंट (जिसे स्वतंत्रता मिलते ही प्रधानमंत्री हो जाना था) मनोनीत किया था तो उसके कुछ वर्ष पूर्व ही कहा था कि आज नेहरू मेरी भाषा नहीं बोलते हैं लेकिन मेरी मृत्यु के बाद वे मेरी भाषा बोलेंगे। संस्थाओं के उत्थान और पतन से जुड़ा गूढ़ प्रश्न है कि क्या प्रधानमंत्रियों में नेहरू अथवा किसी अन्य प्रधानमंत्रियों, लाल बहादुर शास्त्री और मोरारजी देसाई (जिनपर भी दोषारोपण हुआ था), ने गांधी की भाषा का प्रयोग किया जिसमें सादगी, ग्रामीण सभ्यता और लघु उद्योगों के तत्व रहने थे और संसदीय संस्थाओं को करोड़पतियों एवं अपराधियों या दागियों के चंगुल से बचाना था? नेहरू के दो वाक्य– भारत के तत्कालीन 40 करोड़ जनता के लिए आश्वासनकारी थे। पहला वाक्य था ''मैं हरेक देशवासियों के आँखों के आँसू पोछ दूँगा'' और दूसरा ''मैं कालाबाजारी करने वालों को समीपवर्ती लैम्प पोस्ट पर फाँसी दे दूँगा''। नेहरू के प्रसिद्ध *ट्राइस्ट विथ डेस्टिनी* के भाषण के साथ राधाकृष्णन ने अनिवार्यता जताईः

Unless we destroy corruption in high places, root out every trace of nepotism, love of power, profiteering and black-marketing which have spoiled the good name of this great country in recent times, we will not be able to raise the standards of efficiency in administration as well as in the production and distribution of the necessary goods of life.[25]

राधाकृष्णन का 1946 में दिया गया वक्तव्य प्रमाणित करता है कि भ्रष्टाचार का भय और उस पर रोक लगाने के लिए संस्थात्मक उपाय की आवश्यकता 1968-2010

में नहीं, बल्कि 1946 में ही अनुभव की जा रही थी, भले ही चुनावी या अन्य कारणों से राजनेतागण इस पर अंकुश लगाने से प्रारंभ से ही कतराते रहे।

प्रशासनिक सुधार आयोग-1 ने 1969 में भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए लोकपाल और लोकायुक्त जैसी संस्थाओं के स्थापित किए जाने की अनुशंसा की किन्तु 1968-2013 तक इन संस्थाओं से संबंधित विधेयकों के सदनों में प्रस्तुत होने पर करीब-करीब सभी राजनीतिक दलों का निषेधात्मक व्यवहार होता था जो प्रमाणित करता है कि राजनीतिक दलों की भ्रष्टाचार के विरोध में खड़े होने की न तो इच्छाशक्ति थी, न मनोबल। सशक्त लोकपाल निर्माण के लिए अरूणा राय द्वारा प्रस्तुत लोकपाल विधेयक का प्रारूप या अन्ना हजारे के नेतृत्व में आंदोलनकारियों के द्वारा प्रस्तुत प्रारूप (2011-12) भी उन्हें सक्रिय न कर सका और तत्कालीन प्रधानमंत्री की ओर से दिल्ली में जंतर-मंतर रोड की सभा में किए गए वादों से प्रधानमंत्री और उनके दल के सदस्य मुकर गए। लोक सभा में पारित होने के बाद राज्य सभा में उस विधेयक में विभिन्न राजनीतिक दलों ने इतनी बड़ी संख्या में संशोधनों का प्रस्तुतीकरण किया कि विधेयक को संसद की कमिटी में विचार के लिए भेजना पड़ा। दिल्ली विधान सभा के 70 सीटों पर जब तीन बार से विजयी कांग्रेस पार्टी को मात्र सात सीटें मिलीं और नरेन्द्र मोदी के प्रचार के बावजूद जब भाजपा बहुमत अंक के नीचे रह गयी एवं एक नई गठित *आम आदमी पार्टी* (जो संगठन या संसाधन से अधिक भ्रष्टाचार विरोधी प्रदर्शनों के आधार पर लोकप्रिय हुई थी) उभरकर आयी तो यूपीए और अन्य राजनीतिक दलों ने अतिशय लोक दबाव का अनुभव करते हुए 2013 में लोकपाल एवं लोकायुक्त विधेयक लोक सभा में पेश किया और यह अधिनियम का रूप ले सका। सर्च कमिटी के सदस्यों की योग्यता के प्रश्न अधिनियम निर्माण के उपरांत भी विवादग्रस्त हैं और 2014 से अभी भी वह संशोधनों के घेरे में है। राजनीतिक दलों के चुनावी व्यवहार, उनके संगठन में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव, आय-व्यय के लेखा-जोखा (चुनाव आयोग के 2014 के नियम-निर्माण के बाद भी) आदि का अभाव और सामान्य सदस्यों (स्टार्टा) के प्रति दल के पदाधिकारियों का अनुत्तरदायी होना और सभी दलों द्वारा (वामपंथ के कुछ दलों को छोड़कर) चुनावी उम्मीदवारों के चयन में ''सफलता'' के नाम पर अवांछनीय तत्वों की बड़ी संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। 2014 से लेकर अभी हाल तक के संपन्न लोक सभा एवं विधान सभाओं के चुनाव में राजनीतिक दलों ने बड़ी संख्या में दागियों को टिकटें दी है। राजनीतिक दलों का ऐसा व्यवहार और आचरण राजनीतिक पतन का द्योतक है।

निष्कर्ष

भारत, श्रीलंका, फिलीपाइंस और ईजराइल—चारो देशों में लोकतांत्रिक संस्थाएँ एक दशक तक करीब-करीब सक्रिय रहीं।[26] भारत में 1958 में संस्थाओं को धक्का लगा जो 1968 तक संभालने लायक था किन्तु 1960—69 के बाद राजनीतिक संस्थाओं का

पतन स्पष्ट तौर पर देखा जाने लगा। पतन के सामाजिक-आर्थिक कारणों पर हमने पिछले परिच्छेद में विचार किया है। हम उससे निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अधिकतम निर्धन समाज तब तक अलोकतांत्रिक रहेंगे, जब तक वे निर्धन रहेंगे।[27] अरस्तु से लेकर लिप्सेट तक लोकतंत्र की सफलता या उसके स्थायित्व के लिए मध्य वर्ग की बड़ी संख्या में होने की अनिवार्यता पर बल डालते हैं।[28] किन्तु यदि आर्थिक विकास लोकतंत्र को संभव करता है तो राजनीतिक नेतृत्व उसे वास्तविक बनाता है।[29] दक्ष, सदाचारी और कर्तव्यनिष्ठ नेता जब लोकतंत्र को संचालित करते हैं, तब वह आगे की ओर बढ़ता है। रूस्टो भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।[30] जब खेल के नियमों और प्रक्रिया पर सहमति का अभिजनों में अभाव होता है, संस्थाओं का पतन प्रारम्भ हो जाता है, जैसा हमने भारत में देखा। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, जगजीवन राम, फखरूद्दीन अली अहमद आदि के विश्वासों की अभिव्यक्ति और क्रियाकलाप ने न केवल 135 वर्ष पुरानी राजनीतिक पार्टी को तोड़ा; राजनीतिक नैतिकता के उल्लंघन और विचारधारात्मक मूल्यों से राजनीति में अस्तित्व की रक्षा करने की रणनीति ने साध्य-साधन में अंतर न करने के गांधीवादी सिद्धांत को भी तोड़कर संस्थाओं के पतन की आधारशिला रखी। आगे चलकर नियमों और वैक्तिक अधिकारों के लिए आदर की परम्परा का अभाव संस्थाओं के घोर पतन के लिए उत्तरदायी बना। अतः माइरन वाइनर की उक्ति महत्वपूर्ण है कि राजनीतिक नेतृत्व और राजनीतिक कौशल (आर्थिक-सामाजिक विकास के साथ-साथ) का योगदान जनतंत्रीकरण अर्थात् संस्थाओं के उत्थान, विकास और स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण है।[31] नेतृत्व और जनता दोनों की यह आस्था कि राजनीतिक सुव्यवस्था को कायम रखना अपने आप में उत्तम है–जनतंत्र की सफलता के लिए अनिवार्य गुण है।[32] चूँकि जनतंत्र में जनता को नीयत समय में अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार है, यदि उन्हें समानता, स्वतंत्रता और न्याय मिले हुए हैं और चारित्रिक गुण हैं तो इनके आधार पर नागरिक समाज संस्थाओं के स्वास्थ्य पर नियंत्रण रख सकता है और उग्रवादी एवं आतंकवादी शक्तियों को बढ़ने से रोक कर शांतिपूर्ण परिवर्तन के माध्यम से भारत मजबूत संस्थानीकरण के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है।

संदर्भ

1. डारोन एसमोगलू एवं जेम्स ए. राबिन्सन, *व्हाई नेशंस फेलः द ऑरिजिन्स ऑफ पावर, प्रॉसपेरिटी एण्ड पॉवर्टी*, न्यूयार्कः क्राउन पब्लिशर्स, 2012.
2. गांधी के परिपक्व विचार का विस्तष्त विवेचन *हिन्द स्वराज*, 1929 और नेहरू को लिखे गये पत्रों, 1945 में है।
3. ''राज्य एक चीज है और स्वराज दूसरी चीज है। राज्य हिंसात्मक साधनों का प्रयोग करता है। अहिंसा के बिना स्वराज असंभव है। इसलिए विवेकशीलता के लिए स्वराज परमावश्यक है। स्वराज एक ऐसी सरकार निर्मित करती है जिसमें सबों का शासन होता है। यह सबों की सरकार अथवा रामराज्य (ईश्वर का साम्राज्य) है।'' देखें,

विनोबा भावे, *स्वराज शास्त्रः प्रिसिपुल्स ऑफ नन–वॉयलेंट पॉलिटिकल आर्डर* (अनु. भारतन कुमारप्पा) वर्धाः अखिल भारत सर्व सेवा संघ प्रकाशन, 1955, पृ. 9; विनोबा भावे हस्त श्रम की तकनीक, चारित्रिक एकता, सेवा का अनुशासित जीवन और त्याग एवं धर्म में संपूर्ण आस्था की सीख देते हैं। वे यह भी कहते हैं कि राजनीति का धर्म से विलगाव विनाश की ओर ले जायेगा। भावे, पृ. 13 देखें।

4 रबीन्द्र नाथ टैगोर के स्वतंत्र भारत की कल्पना की झलक उनके द्वारा लिखी गई कविता–संग्रह गीतांजलि में दिखाई पड़ती हैः

जहाँ न भय हो सर उँचा हो,
सबको सहज सुलभ हो ज्ञान,
जहाँ की सकरी दीवारों से
बँटे न धरती और इंसान,
जहाँ सत्य की गहराई से ही शब्दों का उद्‌गम हो,
जहाँ अथक कोशिश बांहे फैलाए परिश्कार खोजे,
जहाँ तर्क की निर्मल धारा अपनी राह नहीं खोये,
मरे पुरातन विश्वासों के तपते रेगिस्तान में
जहाँ गुरु बन तू दिखलाए
चिंतन और कर्म की राह,
चिंतन और कर्म जिनका हो नित निर्बाध विचिर विस्तार–
ऐसे स्वतंत्रता के स्वर्ग में
हे प्रभु जागे मेरा देश।
रबीन्द्र नाथ टैगोर, गीतांजलि, 35वीं कविता, नयी दिल्लीः रूपा एण्ड कं., 2002, पृ. 40 से उद्धृत।

5. स्वतंत्र भारत के बारे में उनके प्रमुख वक्तव्यों को अनेक जगहों पर उल्लेखित किया गया है।

6. डी. जी. तेंडुलकर, *महात्मा*, वोल. 7, पृ. 14; यह आश्चर्य की बात है कि इसके पूर्व प्रकाशित द *कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी* के संपादकों ने इन दोनों पत्रों को प्रकाशित नहीं किया जिनकी जानकारी उन्हें अवश्य रही होगी।

7. एम. के. गांधी, *हिन्द स्वराज*, अहमदाबादः नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, पृ. 55-56.

8. *वही.*

9. ल्वाईड आई. रूडोल्फ और सुसेन एच. रूडोल्फ, *पोस्ट मॉडर्न गांधी एण्ड अदर ऐसेज,* दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पेपर बैक, 2009 में उद्धृत, पृ. 29.

10. *वही,* पृ. 67, गांधी द्वारा 4 जनवरी 1928 में नेहरू को लिखे पत्र में इसे जल्दीबाजी में लिया गया कदम ("hasty Step") कहा गया।

11. *वही,* अध्याय 2.

12 *वही,* पृ. 62.

13. अय्यर कमीशन, *रिपोर्ट्स ऑफ इन्क्वाईरी अगेन्स्ट वन चीफ मिनिस्टर एण्ड फाइव मिनिस्टर्स,* पटना, गवर्नमेंट ऑफ बिहार, 1970.

14. *मधोलकर कमीशन ऑफ इन्क्वाईरी रिपोर्ट ऑन द चार्जेज अगेन्स्ट 14 एक्स -यूनाइटेड*

फ्रंट मिनिस्टर्स ऑफ बिहार, पटना, द सुपेरिटेन्डेंट सेक्रेटेरियट प्रेस, 1970.

15. *एडमिनिस्ट्रेटिव रिफॉर्म्स कमीशन*, अप्रैल 2009.
16. *वही.*
17. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, 'द डॉन ऑफ मार्डन इंडिया', *द ग्रेट स्पीचेज ऑफ मार्डन इंडिया*, रूद्रांग्सू मुखर्जी द्वारा संपादित, इंडियाः रैण्डम हाउस, 2011.
18. एम. के. गांधी, *हिन्द स्वराज*, उपर्युक्त, पृ. 55-56; उन्होंने 1939 में भी कहा कि वे 1909 में लिखित विचारों पर कायम हैं।
19. विनोद खोसला का व्यालोक द्वारा अनुवादित फोर्ब्स से प्राप्त लेख ''और हमसे आगे निकल जाएगा मशीनी दिमाग'' प्रभात खबर, पटना, 20 नवम्बर 2014 में प्रकाशित है और उस लेख के विचार यहां प्रस्तुत हैं।
20. *वही.*
21. उपर्युक्त में उद्धृत.
22. *वही.*
23. थॉमस पिकेटी, *कैपिटल इन द टवेंटीफर्स्ट सेन्चुरी*, 2014 में फ्रेंच भाषा से अनुवादित।
24. डारोन एसमोगलू एवं जेम्स ए. राबिन्सन, *उपर्युक्त.*
25. राधाकृष्णन, *उपर्युक्त.*
26. सैमुअल पी. हटिंग्टन, *द थर्ड वेव*, दिल्लीः आदर्श बुक्स, 2010, पृ. 19.
27. *वही*, पृ. 315 में भी यही विचार व्यक्त है।
28. अरस्तू, *द पॉलिटिक्स* (अनु. टी. ए. सिन्क्लेयर), पेंग्यून बुक्स, 1962 और एस. एम. लिप्सेट, *पॉलिटिकल मैन*, अर्नाल्ड-हैनमन, इंडिया, 1960.
29. हटिंग्टन, *उपर्युक्त*, पृ. 316.
30. अ. रस्टो, ''ट्रांजिशन्स टू डेमोक्रेसीः टूवार्ड अ डाइनेमिक मॉडल'', *कम्परेटिव पॉलिटिक्स*, अप्रैल 1970, पृ. 337.
31. हटिंग्टन, उपर्युक्त में उद्धृत, पृ. 39.
32. सैमुअल पी. हटिंग्टन, *द क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन्स एण्ड द रिमेकिंग ऑफ वर्ल्ड ऑर्डर*, गुड़गांवः पेंग्यून बुक्स, 1997; देखें, हटिंग्टन, *पॉलिटिकल ऑर्डर इन द चेंजिंग सोसाइटिज*।

आत्मनिर्भर भारत अभियान की अवधारणा–प्रमुख क्षेत्र एवं संभावनाएँ

गाँधीजी राय

lkjk'k *'आत्मनिर्भर भारत अभियान' प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का वह दूरदर्शी दर्शन है जिसके साकार होने से भारत वैश्विक स्तर पर एक मजबूत और प्रभावशाली राष्ट्र के रूप में अवतरित होकर अपनी छवि को निखार सकेगा। इस अभियान को सफल बनाकर भारत अपनी बुलंदियों और उपलब्धियों को छूते हुए सदियों पुरानी अपने 'वसुधैव कुटुंबकम्' के आदर्श को पुनर्स्थापित कर पूरे विश्व को प्रभावित कर सकेगा। इस आलेख में यह बताया गया है कि इस अभियान के अंतर्गत देश की अर्थव्यवस्था, बुनियादी ढाँचा, प्रौद्योगिकी, जनसांख्यिकी तथा मांग की अवधारणा संबंधी पहल से सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों सहित अन्य देशी उद्योगों का जीर्णोद्धार होगा और रोजगार के नए अवसरों के सृजन से बेरोजगारी से जूझते देश की युवा शक्ति को अपनी बुद्धि और कौशल को प्रदर्शित करने का एक अवसर मिलेगा। इस अभियान के लिए घोषित आर्थिक पैकेज यदि सही दिशा में संचालित हुए तो निश्चित रूप से देश आत्मनिर्भर बनकर विश्व के अन्य देशों को भी सहायता करेगा। इसके सफल क्रियान्वयन से गरीब नागरिक, श्रमिक, प्रवासी मजदूर, पशुपालक, मछुआरे, किसान, संगठित एवं असंगठित क्षेत्र से जुड़े लोग, कस्तकार, कुटीर, लघु एवं मध्यम वर्गीय उद्योग लाभान्वित होंगे। यदि देश के लोग अपने संकल्प और प्रतिबद्धता से इस अभियान में निहित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपने उत्पादों को गुणवत्तापूर्ण और सस्ता बनाकर एक ब्रांड के रूप में वैश्विक प्रतियोगिता में शामिल करें तो 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' को सफल होने से कोई रोक नहीं सकता।*

भूमिका

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' वह दूरदर्शी दृष्टि (vision) है जो देश को हर क्षेत्र में स्वावलंबी बनाकर अपने पैरों पर खड़ा होने की मंत्रणा देती

है। इस अभियान का उद्देश्य देश को उन सभी विदेशी निर्भरताओं को समाप्त करना है जिसके चलते आज भारत का ज्यादातर व्यापार वाह्य देशों पर निर्भर है। यह अभियान वाह्य वस्तुओं पर निर्भरता को नियंत्रित करते हुए अच्छी गुणवत्ता वाले *स्वदेशी उत्पादों* को अपनी भूमि पर तैयार करने की सीख देता है। यदि देश अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप छोटे-बड़े सभी उत्पादों का देशांतर्गत ही उपार्जन एवं निर्माण करने लगे तो विश्व की कोई भी शक्ति देश को आगे बढ़ने से रोक नहीं सकेगी। कोरोना महामारी से उत्पन्न विवशता और आर्थिक तनाव को दूर करने के लिए ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 12 मई 2020 को राष्ट्र को संबोधित करते हुए 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' प्रारंभ करने की घोषणा की। इस अभियान को सफल बनाने के लिए उन्होंने जिस 20 लाख करोड़ रुपये के *राहत पैकेज* की घोषणा की, वह देश की *सकल घरेलू उत्पाद* का लगभग 10 प्रतिशत है। अर्थव्यवस्था, आधारभूत संरचना, प्रणाली, जनसांख्यिकी तथा मांग संबंधी *पाँच* स्तंभों के सुदृढ़ीकरण के आलोक में ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने आत्मनिर्भर भारत के सपने को साकार करने का प्रयास किया है। वित्त एवं कॉर्पोरेट कार्य मंत्री *श्रीमती निर्मला सीतारमण* ने 13-17 मई 2020 तक प्रतिदिन प्रेस कॉन्फ्रेंस के जरिए आत्मनिर्भर भारत पैकेज का विवरण *पाँच* किस्तों में घोषित कर इस अभियान के कार्यान्वयन की शुरुआत की। यह अभियान मुख्यतः भारतीय संसाधनों से निर्मित वस्तुओं को भारत में ही उपयोग में लाने की मंत्रणा देता है। इसके अंतर्गत घोषित विविध कार्यक्रमों/पहलों से स्पष्ट है कि इस अभियान का उद्देश्य भारत के उद्योगों में सुधार लाकर युवाओं के लिए रोजगार सृजन करना है। इस अभियान के तहत सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों, गरीबों, श्रमिकों और किसानों के कल्याण के लिए की गई घोषणाएँ आत्मनिर्भर भारत का मूलमंत्र है। इस अभियान की सबसे बड़ी देन इसमें वैश्वीकरण को समाहित करना है जिसमें विश्व कल्याण की बात कही गई है। जहाँ प्रथम चरण में स्थानीय विनिर्माण और निर्यात को बढ़ावा देने के लिए चिकित्सा, वस्त्र, इलेक्ट्रानिक्स, प्लास्टिक, खिलौने जैसे स्थानीय क्षेत्रों को प्रोत्साहित किया गया है, वहाँ *द्वितीय चरण* में रत्न एवं आभूषण, फार्मा, इस्पात जैसे क्षेत्रों के उन्नयन पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है। 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के लिए घोषित पैकेज का बड़ा हिस्सा ऋण के रूप में देने की योजना है। सरकार बैंकों को ऋण वापसी की गारंटी के साथ-साथ कुछ क्षेत्रों में ब्याज दर में दो प्रतिशत स्वयं वहन करेगी। स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री ने अपने घोषित आर्थिक पैकेज में किसी को भी नगद बहुत कम दिया है, लेकिन अर्थव्यवस्था के सफल संचालन के लिए दिए गए उनके मंत्र से न तो देश घाटे में रहेगा और न कोई वित्तीय मनमानी करेगा।

आत्मनिर्भर भारत अभियान की पृष्ठभूमि

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा 2 मई 2020 को 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा के निम्नलिखित जिम्मेवार कारण थे–

1- dkfoM-19 egkekjh dk fo'o;kih iHkko& चीन के वुहान शहर से एक स्थानीय बीमारी के रूप में शुरू हुआ *कोविड -19* ने कुछ हफ्तों में ही पूरे विश्व को अपने प्रभाव में ले लिया। चार महीने के अंदर ही 26 जून 2020 तक विश्व भर के 188 देशों में 97 लाख लोग इस वायरस से संक्रमित हुए और 4.92 लाख लोग मारे जा चुके थे।[1] उस समय इस महामारी का इलाज या टीका नहीं होने के कारण तीव्र गति से इसका फैलाव होता गया। वैश्विक स्तर पर इसका स्पष्ट प्रभाव राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक उथल-पुथल के रूप में दिखाई दिया। इसके बढ़ते फैलाव के डर से विमान यात्राएँ बंद कर दी गईं, पर्यटन थम गया और मनोरंजन जैसे संबंधित उद्योग बंद हो गए। विश्व के देशों ने न सिर्फ अपनी-अपनी सीमाएँ बंद कीं, वरन् जनता के आवागमन पर भी अनेक प्रतिबंध लगा दिए गए। *अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन* के एक अनुमान में 1.25 अरब कामगारों अर्थात वैश्विक श्रम बल का लगभग 38 प्रतिशत भाग पर रोजगार का संकट छा गया। वैश्विक अर्थव्यस्था की रीढ़ कहलाने वाले तेल उद्योग भी गंभीर संकट से लड़खड़ाने लगा। अमेरिका सहित अन्य बड़े-छोटे सभी देशों को वायरस की तगड़ी मार झेलनी पड़ी। भारत में सबसे बुरी स्थिति तब हुई जब *लॉकडाउन* लगाया गया। भारत अपने जरूरी कच्चे माल के लिए चीन पर आश्रित था। कोरोना संकट का प्रभाव सिर्फ भारत के प्रवासी मजदूरों पर ही नहीं पड़ा, वरन् सभी तबके के लोग और उनके उद्योग धंधे भी प्रभावित हुए और देश की अर्थव्यवस्था चरमरा गई। कई आवश्यक उत्पादों के लिए चीन पर आत्मनिर्भरता के चलते देश की स्थिति बिगड़ गई। भारत के पास मौजूद विशाल जनसंख्या के साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, तकनीकी, पर्यावरण संरक्षण की संभावनाओं को देखते हुए प्रधानमंत्री *नरेंद्र मोदी* ने एहसास किया कि चीन पर निर्भरता कम करनी चाहिए और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को नजरअंदाज किए बिना आत्मनिर्भरता व स्वदेशी पर आधारित अर्थव्यवस्था तैयार करनी चाहिए।

2- n'k dh cgky vFk;oLFkk& अप्रैल 2020 तक कोरोना महामारी विश्व के लिए परेशानी का सबब बन गई। महामारी ने देश की अर्थव्यवस्था को गहरे संकट में डाल दिया। *सांख्यिकी मंत्रालय* के अनुसार वित्त वर्ष 2020 की चौथी-तीमाही में भारत की वृद्धि दर घटकर 3.1 प्रतिशत रह गई।[2] *अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष* ने अनुमान लगाया कि भारतीय अर्थव्यवस्था 4.5 की दर से सिकुड़ जाएगी।[3] कोरोना महामारी के दौरान पूरे देश में लगे *लॉकडाउन* ने कई सरकारी और निजी व्यवसायों एवं उद्योगों को चौपट कर दिया। इससे घरेलू *आपूर्ति* और *मांग* पर पड़े प्रभाव ने देश की आर्थिक वृद्धि दर को भी बुरी तरह प्रभावित किया। *लॉकडाउन* का सबसे ज्यादा प्रभाव अनौपचारिक क्षेत्र

पर पड़ा। उल्लेखनीय है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का 50 प्रतिशत *सकल घरेलू उत्पाद* (GDP) अनौपचारिक क्षेत्र से ही आता है। इसके चलते *लॉकडाउन* प्रारंभ होने के दौरान वाणिज्य और उद्योग मंत्री *पीयूष गोयल* ने देश में पाँच खरब डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने के लक्ष्य को साकार करने के लिए घरेलू उद्योग को अधिक आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया।[4] लॉकडाउन के कारण करीब 12 करोड़ लोगों ने रोजगार खो दिया। पूरे देश में 45 प्रतिशत से अधिक परिवारों ने आय में गिरावट दर्ज की। पहले 21 दिनों के *पूर्ण लॉकडाउन* के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था को हर दिन 32,000 करोड़ रुपये से अधिक की हानि होने की आशंका थी। पूर्ण लॉकडाउन के तहत भारत के 2.8 ट्रिलियन आर्थिक संरचना का एक चौथाई से भी कम गतिविधि कार्यात्मक थी। अनौपचारिक क्षेत्रों में कार्मचारी और दिहाड़ी मजदूर सबसे अधिक जोखिम वाले लोग हैं। देश भर में बड़ी संख्या में किसान जो विनाशशील फल-सब्जी उगाते हैं, उन्हें भी अनिश्चितता का सामना करना पड़ा।[5] महामारी से ठीक पहले, सरकार ने कम विकास दर और कम मांग के बावजूद 2024 तक अर्थव्यवस्था को अनुमानित 2.8 ट्रिलियन से पाँच ट्रिलियन तक बदलने का लक्ष्य रखा था।

3- okS fuHkjrk& कोरोना ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को भी बड़े पैमाने पर प्रभावित किया। जब से संकट गहराया, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग शिथिल होता गया और इसने भारत जैसे अनेक राष्ट्रों को अपने पैरों पर खड़ा होकर वाह्य निर्भरता को कम करने के लिए उत्प्रेरित किया। अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को नजरअंदाज किए बगैर कच्चे माल के लिए चीन पर निर्भरता कम करने के लिए आत्मनिर्भरता और स्वदेशी अर्थव्यवस्था तैयार करने के लिए प्रधानमंत्री *नरेंद्र मोदी* ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की आवश्यकता महसूस की। भारत को अपने *विनिर्माण क्षेत्र* को नए सिरे से तैयार कर अर्थव्यवस्था की गति में तेजी लाना इस अभियान का प्रेरक तत्त्व रहा है।

4- fo'kky tula[;k& अपनी विशाल जनसंख्या के साथ भारत के पास स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, स्वच्छ तकनीक, पर्यावरण संरक्षण में भारी संभावनाएँ निहित हैं जिन्हें नए ढंग से खंगाल कर इसका इस्तेमाल देश के पुनर्निर्माण में किया जा सकता है।

5- lkekftd lqj{kk 0;oLFkkvksa esa [kkfe;k& देश की सामाजिक सुरक्षा व्यवस्थाओं में खामियों के चलते समृद्धि की श्रृंखला में सबसे निचले पायदान पर पड़े समाज के कमजोर तबकों पर कोरोना महामारी का सबसे अधिक बोझ पड़ा। इसे ध्यान में रखते हुए प्रधानमंत्री ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की शुरुआत की।

6- Lokoy|cu& 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' से उत्प्रेरित होकर देश प्रत्येक क्षेत्र में विकास कर अपने पैरों पर खड़ा होगा। एक स्वावलंबी देश ही वैश्विक स्तर पर अपने सम्मान की रक्षा कर सकता है। भारत के आत्मसम्मान की भावना को साकार करने के लिए ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की शुरुआत की। प्रधानमंत्री ने कहा कि आत्मनिर्भरता देश को वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में कड़ी प्रतिस्पर्द्धा के लिए तैयार करेगी। छोटी आपूर्ति श्रृंखलाओं पर बल देकर देश कई क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता होने का प्रयास करेगा।

7- dVhj] l{e] y?k ,o e/;e m|eksa dh l'kfDrdj.k dh fy,& 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा के पीछे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के मन में सिर्फ कुटीर उद्योगों को ही पुनर्जीवित करना नहीं था, वरन सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों को बढ़ावा देकर देश में चल रहे विकास की गति को आगे बढ़ाना था। कुटीर उद्योगों के साथ-साथ देश में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों की स्थिति बहुत खराब थी जिसमें सुधार लाकर नरेंद्र मोदी ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' को सफल बनाने का प्रयास किया है। यदि प्रधानमंत्री द्वारा इस क्षेत्र में की गई घोषणाएँ *साकार* होती हैं तो भारत निश्चित रूप से अपने पैरों पर खड़ा होकर वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान सुनिश्चित कर सकेगा।

8- ol/ko dVcde& 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' 'वसुधैव कुटुंबकम्' की संकल्पना में विश्वास करता है। भारत विश्व का एक हिस्सा होने के चलते जब प्रगति करता है तब ऐसा करके वह विश्व की प्रगति में योगदान देता है। 25 सितंबर 2021 को 76वें संयुक्त राष्ट्र महासभा सत्र को संबोधित करते हुए *नरेंद्र मोदी* ने कहा था, ''जब भारत विकास करता है तब विश्व भी विकास करता है। जब भारत *रिफॉर्म्स* करता है तब विश्व भी ट्रांसफॉर्म होता है।''[7] 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' वैश्वीकरण के बहिष्कार के बदले विश्व के विकास में मदद करता है। उल्लेखनीय है कि *महात्मा गाँधी* ने देश को आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से *चरखा समितियों* तथा *लघु उद्योगों* से जुड़ने की प्रेरणा देकर आत्मनिर्भरता को देश की स्वतंत्रता के लिए एक महत्त्वपूर्ण औजार माना था। उन्होंने कहा था कि एक आत्मनिर्भर देश ही सशक्त देश बनता है। भारत की आजादी की लड़ाई में गाँधीजी द्वारा संचालित *'स्वदेशी आंदोलन'* में उन्होंने लोगों से विदेशी वस्तुओं पर निर्भर न रहकर भारत में बनी वस्तुओं पर निर्भर रहने की अपील की थी। गाँधीजी सिर्फ स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग ही नहीं करते थे, वरन आत्मनिर्भर भारत की तरफ उन्होंने पहला कदम भी उठाया था। 'स्वदेशी आंदोलन' के तहत वे विदेशी कपड़ों के स्थान पर अपने हाथ से बुने हुए कपड़े पहनते थे। वे कुटीर उद्योगों के विकास

के हिमायती थे और उनका विकास कर वे भारतीयों को स्वावलंबी बनाना चाहते थे।[8] प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' भी गाँधीजी के सपने को पूरा करने का एक प्रयास है।

9- **urRo vkj eukcy dk cuk, j[kus d fy,&** देश के नेतृत्व और देशवासियों के मनोबल को बनाए रखने के लिए भी 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की शुरुआत नए ढंग से की गई है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की मान्यता है कि भारत की पुरानी संस्कृति और पहचान को यदि वैश्विक स्तर पर स्थापित करना है तो इसके लिए देशवासियों के *संकल्प* और *प्रतिबद्धता* की आवश्यकता है। देशवासी अपने *संकल्प* और *प्रतिबद्धता* से न सिर्फ प्रत्येक क्षेत्र में स्वावलंबी होकर अपने पैरों पर खड़ा होंगे, वरन वैश्विक स्तर पर भी अपने नेतृत्व से भारत की उपलब्धियों का बखान करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के 'वोकल फॉर लोकल' की अवधारणा को चरितार्थ करेंगे।

'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के स्तंभ और बहुआयामी क्षेत्र

हर मामले में स्वावलंबन का संदेश देते प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की इमारत के निम्नलिखित *पाँच* प्रमुख स्तंभ हैं–

1- **vFkZ;oLFkk&** अर्थव्यवस्था किसी भी देश के लिए एक ऐसा सशक्त साधन है जिसमें सुधार और परिवर्तन लाकर देश को आगे बढ़ाया जा सकता है। देश की मौजूदा मिश्रित अर्थव्यवस्था में बदलाव लाकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक ऐसी अर्थव्यवस्था की वकालत की है जो 'वृद्धिशील परिवर्तन' (incremental change) की जगह अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में लंबी छलांग (quantum jump) लगाए।[9]

2- **vk/kkjHkwr lajpuk&** प्रधानमंत्री ने एक ऐसी आधारभूत संरचना का आह्वान किया जो आधुनिक भारत की पहचान बनकर विदेशी कंपनियों को आकर्षित कर सके।

3- **iz.kkyh&** देश में एक ऐसी आधुनिक प्रणाली हो जिसमें समाज और देश में डिजिटल तकनीक का उपयोग बढ़ाने की क्षमता हो। ऐसी प्रणाली जो 20वीं सदी की रीति-नीति को छोड़ते हुए 21वीं सदी के सपनों को साकार कर सके।

4- **Tkula[;kf[;dh&** विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र भारत की जीवंत जनसांख्यिकी सबसे बड़ी ताकत और आत्मनिर्भर भारत की ऊर्जा का अनवरत स्रोत है जिसका उपयोग कर भारत आत्मनिर्भर बनकर 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को साकार कर सकता है।

5- **Ekax&** देश की अर्थव्यवस्था में *मांग* और *पूर्ति* की प्रक्रिया की पूरी क्षमता

से उपयोग कर भारत वैश्विक स्तर पर आत्मनिर्भरता के अभियान को सफल बना सकता है। यह तभी संभव होगा जब देश में मांग बढ़ाने और उसे पूरा करने के लिए हमारी आपूर्ति कड़ी के हर हितधारक सशक्त हो। भारत के पास बड़ा घरेलू बाजार और मांग दोनों है जिसे पूरी क्षमता से इस्तेमाल कर 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' को सफल बनाया जा सकता है।

बहुआयामी क्षेत्र

12 मई 2020 को देशवासियों को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री *नरेंद्र मोदी* ने एक विशेष आर्थिक पैकेज की घोषणा कर भारत को आत्मनिर्भर बनाने का आह्वान किया। उन्होंने यह भी कहा कि ये विशेष आर्थिक पैकेज 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की अहम कड़ी' के तौर पर काम करेगा। उल्लेखनीय है कि कोरोना महामारी के दौरान सरकार द्वारा इससे पूर्व में की गई घोषणाओं और *रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया* द्वारा लिए गए निर्णयों से जुड़ी राशि को मिला देने से यह विशेष आर्थिक पैकेज करीब 20 लाख करोड़ रुपये का है जो भारत के सकल घरेलु उत्पाद के करीब 20 प्रतिशत के समतुल्य है। प्रधानमंत्री द्वारा घोषित यह आर्थिक पैकेज देश के विकास से संबंधित बहुआयामी क्षेत्रों से संबंधित है। यह आर्थिक पैकेज सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों के पुनर्जीवन और विकास से संबंधित है जो करोड़ों भारतीयों की आजीविका का प्रमुख साधन है। भूमि, श्रम, तरलता और कानूनों पर केंद्रित यह आर्थिक पैकेज कुटीर, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों, मजदूरों, मध्यम वर्ग सहित विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। प्रधानमंत्री ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के आह्वान के दौरान जिस 'वोकल फॉर लोकल' का नारा दिया, उससे स्थानीय उत्पादों का गर्व से प्रचार करने और इन उत्पादों को वैश्विक बनाने में मदद मिलेगी। स्थानीय उत्पाद देशवासियों की सिर्फ जरूरत ही नहीं है, बल्कि उनकी जिम्मवारी भी है। जब तक देशवासी स्थानीय उत्पाद स्वयं नहीं खरीदेंगे और गर्व से उनका प्रचार नहीं करेंगे तबतक देश अपने पैरों पर खड़ा होकर उत्थान नहीं कर सकता। घरेलू बाजार में नेतृत्व के लिए स्थानीय *ब्रांड* को तकनीकी विशेषता, बेहतर गुणवत्ता और किफायती दर पर निर्मित करके ही 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के सपने को साकार किया जा सकेगा।

आर्थिक पैकेज का विवरण

वित्त एवं कॉपोरेट कार्य मंत्री *श्रीमती निर्मला सीतारमण* ने 13-17 मई 2020 तक प्रतिदिन पत्रकार सम्मेलन में आत्मनिर्भर भारत पैकेज का विवरण निम्नलिखित *पाँच* किस्तों में दिया—[10]

1- **iFke fdLr&** 13 मई 2020 को वित्त मंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के सशक्तिकरण हेतु अनेक घोषणाएँ कीं—
   1- सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों सहित अन्य व्यावसायों के लिए तीन लाख

करोड़ रुपये की आपातकालीन कार्यशील पूँजी की सुविधा **nk-nk** लाख सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों के लिए 20,000 करोड़ के गौण ऋण का प्रावधान **3-** सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों को इक्विटी फंडिंग (Equity Funding) के तहत 10,000 करोड़ रुपये के कोष के साथ एक 'फंड ऑफ फंड्स' (Fund of Funds) खोलने का आह्वान **4-** इसके तहत निवेश की सीमा बढ़ाकर सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों की परिभाषा को संशोधित करते हुए पूर्ण बिक्री का एक अतिरिक्त मानदंड पर बल **5-** सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के लिए *ई -मार्केट लिंकेज* को बढ़ावा **6-** 600 करोड़ रुपये से कम मूल्य की वस्तुओं और सेवाओं की खरीददारी में निविदा नियमों में संशोधन का प्रावधान **7-** प्रधानमंत्री गरीब कल्याण पैकेज (PMGKP) के तहत भारत सरकार द्वारा कर्मचारी भविष्य निधि के अंतर्गत नियोक्ता व कर्मचारी दोनों के वेतन से जून-जुलाई और अगस्त 2020 के वेतन में 12-12 प्रतिशत का योगदान **8-** सभी उद्यमों के नियोक्ताओं और कर्मचारियों के अनिवार्य भविष्य निधि अंशदान को तीन माह तक 12 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत करने की घोषणा **9-** भारत सरकार के 100 प्रतिशत गारंटी के साथ गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी (NBFC), हाऊसिंग फाइनांस कंपनी (HFC) तथा सूक्ष्म वित्त संस्थाओं (MFI) के लिए 30,000 रूपये की एक विशेष तरलता योजना का प्रारंभ **10-** गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी (NBFC)/सूक्ष्म वित्त संस्थाएँ (MFI) की देनादारियों के लिए 45,000 करोड़ रुपये की आंशिक ऋण गारंटी *योजना 2.0* का प्रावधान **11-** पॉवर फाइनेंस कॉपोरेशन (PFC) और ग्रामीण विद्युतीकरण निगम (REC) के तहत विद्युत विरतण कंपनी (DISCOM) में दो समान किस्तों में 90,000 करोड़ रुपये तक की तरलता सुलभ कराने का प्रावधान **12-** रेलवे, सड़क, परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय तथा केंद्रीय लोक निर्माण विभाग से जुड़े ठेकेदारों को छह माह की राहत **13-** रियल स्टेट परियोजनाओं को राहत का प्रावधान तथा **14-** व्यवसाय के लिए कर राहत की घोषणा।

2- f}rh; fdLr& 14 मई 2020 को प्रवासियों , किसानों, छोटे कारोबारियों और फेरी वालों सहित गरीबों की सहायता के लिए विभिन्न अल्पकालिक और दीर्घकालिक कदमों की घोषणा की गई। इसके अंतर्गत सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को प्रवासी कामगारों के लिए मई और जून 2020 के लिए प्रति कामगार दो किलोग्राम की दर से खाद्यान्न और प्रति परिवार एक किलोग्राम चना का मुफ्त आवंटन किया गया। इसके अंतर्गत अन्य घोषणाओं में इन प्रवासियों को भारत की किसी भी उचित मूल्य वाले दुकान से राशन खरीदने, प्रवासी श्रमिकों और शहरी गरीबों के लिए सस्ते किराए की आवास परिसरों की योजना, 50 हजार से कम शिशु मुद्रा लेने वालों को 12 महीनों

के लिए दो प्रतिशत ब्याज की छूट, फेरीवालों के लिए 5,000 करोड़ की ऋण सुविधा, प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) के तहत धातु अक्रिय गैस (MIG) के लिए *क्रेडिट लिंक्ट सब्सिडी* योजना के विस्तार के माध्यम से आवासन क्षेत्र और मध्यम आय समूह को 70,000 करोड़ का प्रोत्साहन, क्षतिपूरक वरीकरण कोष प्रबंधन एवं योजना प्राधिकरण (CAMPA) के अंतर्गत 6,000 करोड़ रुपये का प्रावधान, राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) के माध्यम से किसानों के लिए 30,000 करोड़ की अतिरिक्त आपातकालीन कार्यशील पूँजी का प्रावधान तथा किसान क्रेडिट कार्ड योजना के तहत 2. 5 करोड़ किसानों को दो लाख करोड़ का ऋण प्रोत्साहन की घोषणा।

3- r'rh; fdLr& 15 मई 2020 को वित्त मंत्री ने – **1-** किसानों के लिए कृषि द्वारा आधारभूत ढाँचे पर केंद्रित एक लाख करोड़ का कृषि *आधारभूत ढाँचा कोष* **2-** सूक्ष्म, खाद्य उपक्रमों (FME) के औपचारीकरण हेतु 10,000 करोड़ रुपये की योजना **3-** प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (PMMSY) के माध्यम से मछुआरों के लिए 20,000 करोड़ रुपये का प्रावधान **4-** *खुरपका* और *मुँहपका* रोग (FMD) तथा *ब्रुसेलोसिस* के लिए राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम में 13,343 करोड़ रुपये के कुल परिव्यय का प्रावधान **5-** पशुपालन बुनियादी ढाँचा विकास के लिए 15,000 करोड़ रुपये का प्रावधान **6-** औषधीय या हर्बल खेती के प्रोत्साहन के साथ 4,000 करोड़ का परिव्यय **7-** मधुमखी पालन संबंधी पहल के लिए 500 करोड़ रुपये का प्रावधान **8-** टॉप (TOP) अर्थात टमाटर, प्याज और आलू सहित सभी फलों और सब्जियों के लिए ऑपरेशन ग्रीन्स (Opretion Greens) के अंतर्गत 500 करोड़ रुपये का प्रावधान तथा **9-** कृषि क्षेत्र के लिए शासन और प्रशासनिक सुधार हेतु (*i*) किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्ति के लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम में संशोधन (*ii*) किसानों को विपणन का विकल्प प्रदान करने के लिए कृषि विपणन सुधार तथा (*iii*) कृषि उपज मूल्य निर्धारण और गुणवत्ता का आश्वासन।

4- prFk fdLr& 16 मई 2020 को वित्त मंत्रालय द्वारा *आठ क्षेत्रों* कोयला, खनिज, रक्षा उत्पादन, नागरिक उड्डयन, बिजली क्षेत्र, सामाजिक आधारभूत ढाँचा तथा अंतरिक्ष और परमाणु ऊर्जा में ढाँचागत सुधारों के लिए घोषणा कर 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' को साकार करने का प्रयास किया गया।

5- ipe fdLr& 17 मई 2020 को वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के आर्थिक पैकेज की पाँचवीं और आखिरी किस्त की घोषणा करते हुए पूरे 20 लाख करोड़ रुपये का लेखा-जोखा भी प्रस्तुत किया। इसके अंतर्गत रोजगार को बढ़ावा देने के लिए *मनरेगा* के अंतर्गत 40,000 करोड़

रुपये का आवंटन, शिक्षा और स्वास्थ्य सुधार संबंधी पहलें, *कोविड-19* के बाद समानता के साथ प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षा, दिवालिया एवं *शोधन अक्षमता संहिता* (IBC) से संबंधित उपायों, कंपनी अधिनियम के तहत हुई भूल को अपराधीकरण की श्रेणी से बाहर, कंपनियों के लिए कारोबार में सुगमता लाने का प्रयास, नए आत्मनिर्भर भारत के लिए सार्वजनिक क्षेत्र उद्यम नीति की घोषणा तथा राज्य सरकारों के सहायतार्थ 2020-21 के लिए उनके ऋण की सीमा में तीन प्रतिशत से पाँच प्रतिशत की वृद्धि।

'वोकल फॉर लोकल' की अवधारणा पर केंद्रित

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' स्थानीय गुणवतापूर्ण उत्पादों और वैश्विक स्तर पर उन्हें प्रतियोगी बनाने पर केंद्रित है। यह 'वोकल फॉर लोकल' के संदेश के साथ स्थानीय और स्वदेशी विनिर्माण, स्थानीय बाजार तथा स्थानीय आपूर्ति श्रृंखलाओं पर बल देते हुए देशवासियों को उत्प्रेरित करता है कि अपने स्थानीय उत्पादों में गुणवता लाते हुए वे उन्हें वैश्विक बाजार में प्रतियोगी बनाने का प्रयास करें। इसी उद्देश्य से इस अभियान से संबद्ध आर्थिक पैकेज *भूमि* (Land), *श्रम* (Labour), *तरलता* (Liquidity) और *कानूनों* (Laws) पर केंद्रित होकर कुटीर, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों सहित अन्य उद्यमों, मजदूरों तथा सभी वर्गों को वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में कड़ी प्रतिस्पर्द्धा के लिए तैयार करता है। वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा के इस दौर में कामयाबी के लिए देशवासियों के *मनोबल* (Moral) को बढ़ाना होगा। 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के विशेष पैकेज संगठित तथा असंगठित दोनों क्षेत्रों के मजदूरों तथा प्रवासियों को सशक्त करने की दिशा में केंद्रित है। इस अभियान के प्रमुख केंद्र देश के वे लोग हैं जिन्हें अपने उत्पादों को न सिर्फ खरीदना है, बल्कि स्वनिर्मित गुणवत्तापूर्ण उत्पादों से गौरान्वित होकर उन्हें अन्यों को भी इन उत्पादों को खरीदने के लिए उत्प्रेरित करना है। स्थानीय उत्पादों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्द्धा के लिए अपने *ब्रांड* उत्पाद को विशेषज्ञता, बेहतर गुणवत्तापूर्ण और किफायती मूल्यों पर निर्मित करना होगा।

संभावनाएँ

'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के अंतर्गत घोषित विभिन्न कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के बाद भारत निश्चित रूप से आत्मनिर्भर बनकर महात्मा गाँधी के आत्मनिर्भरता के सपने को साकार करेगा। इस अभियान' के लिए घोषित कार्यक्रमों के अनुरूप कृषि और अन्य क्षेत्रों को विकसित कर तथा औद्योगिक विकास के साथ-साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बदलाव लाकर नरेंद्र मोदी का यह सपना यदि साकार हो गया तो भारत निश्चित रूप से अपने पैरों पर खड़ा होकर वैश्विक शंखनाद करने के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा। विभिन्न प्रकार के कृषि उत्पादों की *पैकेजिंग* या उनसे बनने वाले अन्य उत्पादों के निर्माण के लिए स्थानीय स्तर पर छोटे

औद्योगिक इकाईयों की स्थापना को प्रोत्साहित कर ग्रामीण क्षेत्रों की भागीदारी को सुनिश्चित किया जा सकता है। 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा के पीछे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के मन में 21वीं सदी में वैश्विक स्तर पर उभरते भारत की तस्वीर थी जिसमें भारत को अपनी पहचान बनानी है। यह अभियान भारत को स्वावलंबी बनाकर विश्व की प्रगति का मार्ग प्रशस्त करता है। विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र होने के नाते भारत इस अभियान के उद्देश्यों को चरितार्थ कर वैश्विक स्तर पर भी अपना प्रभाव बढ़ा सकता है। 25 सितंबर 2021 को *संयुक्त राष्ट्र महासभा* के 76वे सत्र को संबोधित करते हुए *नरेंद्र मोदी* ने कहा था, ''जब भारतीयों की प्रगति होती है तो दुनिया के विकास को भी गति मिलती है''।[11] इस अभियान का सबसे बड़ा सकारात्मक पहलू है कि यह आत्मकेंद्रित व्यवस्था के स्थान पर संपूर्ण मानवता के विकास की वकालत करता है। इस अभियान की सफलता के लिए घोषित *पाँच* स्तंभों के अंतर्गत विविध कार्यक्रमों के सही क्रियान्वयन से भारत स्वावलंबी होकर सदियों पुरानी अपनी ''वसुधैव कुटुंबकम्'' की अवधारणा को साकार करेगा जो इस अभियान की सबसे बड़ी उपलब्धि और बेहतर भविष्य की संभावनाएँ हैं। भारत प्राचीन काल से ही संसाधनों का देश रहा है। स्वतंत्रता के बाद देश की गरीबी और भुखमरी को दूर करने के लिए ही *गाँधीजी* ने भारत को आत्मनिर्भर बनाने का सपना देखा था। प्रधानमंत्री *नरेंद्र मोदी* का यह अभियान देशवासियों को हर क्षेत्र में स्वयं पर निर्भर रहने का संदेश देता है। ऐसी संभावना है कि इस अभियान के सफल क्रियान्वयन एवं संचालन से देश को अनेक फायदे होंगे– **1-** देशांतर्गत प्रत्येक श्रेणी के उद्योगों की संख्या में उतरोत्तर वृद्धि होगी **2-** देश को अपनी आवश्यकताओं के लिए अन्य देशों की सहायता की जरूरत नहीं पड़ेगी **3-** बड़े पैमाने पर उद्योगों की स्थापना से देश में रोजगार के अधिक अवसर उत्पन्न होंगे **4-** आत्मनिर्भर बनकर भारत गरीबी और भुखमरी से मुक्त होकर वैश्विक प्रतियोगिता में अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करेगा **5-** अपने पैरों पर खड़ा होकर बड़ी मात्रा में चीजों का भंडारण कर सकेगा **6-** अन्य देशों से आयात कम और निर्यात अधिक होगा **7-** देश में स्वदेशी वस्तुओं के निर्माण से तरक्की को एक नया मुकाम मिलेगा तथा **8-** संकट के दिनों में बाहरी देशों पर निर्भरता की कमी से राष्ट्रीय गौरव एवं आत्मसम्मान में वृद्धि होगी।

निष्कर्ष

'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के अंतर्गत बहुआयामी क्षेत्रों के विकास के लिए घोषित विविध कार्यक्रमों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि यह अभियान नए भारत के सपने को साकार करने का प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की देश के लिए सबसे बड़ी देन है। इसके सफल और पारदर्शी क्रियान्वयन से देश निश्चित रूप से स्वावलंबी बनकर लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। इसका सबसे बड़ा सकारात्मक पहलू इसका आत्मकेंद्रित

न होकर संपूर्ण मानवता के विकास के लिए वकालत करना है। इसके प्रति देशवासियों की आत्मीयता, लगाव, समर्पण और संकल्प से भारत सदियों पुरानी अपनी ''वसुधैव कुटुंबकम्'' के आदर्श को साकार करते हुए 21वीं सदी में वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान बनाने में सफल होगा। इसके लिए देशवासियों को *संकल्प* लेना होगा कि वे इसके सफल क्रियान्वयन के लिए अनवरत प्रयास करते रहेंगे। प्रधानमंत्री *नरेंद्र मोदी* ने भी आह्वान किया था, ''साथियों, आत्मनिर्भरता, आत्मबल और आत्मविश्वास से ही संभव है''। इसकी घोषणा के बाद से ही देश के विभिन्न क्षेत्रों में उसका प्रभाव दिखने लगा है। रक्षा क्षेत्र में भारत के बढ़ते कदम से दुश्मनों के हौंसले पस्त होने लगे हैं। उदाहरणार्थ समुद्र में ट्रायल पर चल रहा *आईएनएस विक्रांत* के रूप में देश का दूसरा एयरक्राप्ट कैरियर पूरी तरह से देश में निर्मित है और आधुनिक सुविधाओं से लैस होकर शीघ्र ही भारतीय नौसेना में शामिल होने जा रहा है।[12] भारत का पहला विमानवाहक युद्धपोत भी *आईएनएस विक्रांत* के नाम पर ही है।

संदर्भ ग्रंथ

1. कोविड-19 महामारी की दलदल में फंसी अर्थव्यवस्था, https://www.downtoearth.org.in
2. भारत में कोरोना वायरस महामारी का आर्थिक प्रभाव, https://hi.m.wikipedia.org
3. उपरोक्त
4. अहमद, जुबैर (1 मई 2020), ''कोरोना महामारी के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था स्वदेशी की तरफ जाएगी?'' BBC News हिंदी, मूल से 27 जून 2020 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 23 जुलाई 2020।
5. ''कोविड-19 : भारत में 'लॉकडाउन' से प्रवासी कामगारों पर भारी मार'', संयुक्त राष्ट्र समाचार, 2 अप्रैल 2020।
6. गाँधीजी राय, ''चीन के साथ सैन्य मोर्चा तथा भारतीय रक्षा क्षेत्र की उपलब्धियाँ'', *लोक प्रशासन* (भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली, अर्धवार्षिक शोध पत्रिका, जनवरी-जून 2021, ISSN:2249-2577), पृ. 16
7. *दैनिक भास्कर* (पटना, 26 सितंबर 2021), पृ. 1
8. गाँधीजी राय, *राजनीतिक सिद्धांत* (पटना, भारती भवन, 2012), पृ. 408
9. उपरोक्त
10. वित्त मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत, 12 जुलाई 2020, प्रेस सूचना ब्यूरो (PIEB), दिल्ली।
11. *दैनिक भास्कर* (पटना, 26 सितंबर 2021), पृ. 1
12. *आज* (पटना, 12 जनवरी 2022), पृ. 12

शिकायतों का निवारण और सूचना का अधिकार

श्वेता मिश्रा

lkjk'k *प्रशासन और नागरिक एक -दूसरे के अभिन्न अंग हैं। दोनों आपस में पूर्णतः जुड़े हुए हैं। प्रशासन का मूल उद्देश्य नागरिकों का कल्याण करना है और इसी उद्देश्य से वह उनके लिए जीवन की बुनियादी सुविधाएँ, जैसे– शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली, रोजगार के अवसर, स्वच्छ पेय जल, बेहतर बुनियादी ढांचा, इत्यादि मुहैया कराता है। किसी भी प्रशासनिक प्रणाली की सफलता नागरिकों तक प्रभावी और कुशल सेवाओं के वितरण पर निर्भर करती है। प्रशासन अकेले इन सेवाओं को नागरिकों को नहीं प्रदान कर सकता। इसके लिए नागरिकों का सहयोग और समर्थन काफी हद तक आपेक्षित है। दूसरे शब्दों में, सेवा वितरण प्रक्रिया में नागरिकों को सक्रिय भागीदार बनना होगा और प्रशासन के साथ सहयोग करना होगा। समकालीन संदर्भ में देखा जाए तो, राज्य के कार्यों और शक्तियों में चौमुखी वृद्धि हुई है जिसकी वजह से प्रशासन का क्षेत्र अपेक्षाकृत अधिक व्यापक हो गया है। देश के सामाजिक -आर्थिक विकास में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और इस प्रक्रिया में, इसने व्यापक विशेषाधिकार हासिल कर लिया है।*

प्रस्तावना

सामान्य तौर पर यह अनुभव किया गया है कि इन व्यापक प्रशासनिक शक्तियों के प्रयोग में, कुप्रचलनों, भ्रष्टाचार तथा नागरिकों के शोषण की संभावनाएं सदैव विद्यमान रहती हैं। इसलिए अब यह महसूस किया जा रहा है कि नागरिकों की शिकायतों का निवारण तंत्र, जो पहले से उपलब्ध है, अपने आप नागरिकों को संरक्षण देने में लगभग असमर्थ और अपर्याप्त है क्योंकि यह देखा गया है कि प्रशासक अपनी सार्वजनिक शक्ति के प्रयोग में अक्सर मनमानी करता है और इसका दुरूपयोग करने में भी परहेज नहीं करता। यही कारण है कि लोकतांत्रिक देशों में रहने वाले लोगों का ध्यान उत्तरी यूरोप के देशों की ओम्बुडसमैन संस्था की ओर स्वतः आकृष्ट हुआ है।

इस लेख में शिकायत निवारण तंत्र के विभिन्न प्रयासों की विस्तृत विवेचना करते हुए, सूचना के अधिकार के विभिन्न आयामों पर विशेष चर्चा की गई है।

नागरिकों की शिकायतों के निवारण के लिए मशीनरी

रोवसन (1956) के अनुसार, सरकार और जनता के बीच अच्छे संबंधों का मामला केवल सिविल सेवकों और राजनेताओं के आचरण पर निर्भर करता है। वास्तव में, यह नागरिकों, समूहों, निगमों, सभी प्रकार के संघों, अनौपचारिक निकायों के व्यवहार पर निर्भर करता है। यदि हम चाहते हैं कि लोक सेवक हमारे प्रति अच्छा व्यवहार रखें, तो हमें भी उनके प्रति अच्छा व्यवहार रखना होगा।

1950 के दशक का अवलोकन आज भी उतना ही सत्य है। लोकतंत्र में, नागरिकों की शिकायतों के निवारण के लिए उचित तंत्र अनिवार्य हो जाता है। नागरिक अपने प्रतिनिधियों को चुनते हैं और उन्हें शासन करने की शक्ति प्रदान करते हैं। यदि लोक प्राधिकरण नागरिकों की जरूरत और आकांक्षाओं पर खड़ा नहीं रहता है, और सत्ता का दुरूपयोग करना शुरू करते हैं, तो लोकतंत्र का उद्देश्य विफल हो जाता है। ऐसी स्थिति में, एक ऐसी मशीनरी की जरूरत होती है, जहाँ नागरिक अपनी शिकायत को दर्ज करा सकें।

चैम्बर शब्दकोश के अनुसार, 'शिकायत' का अर्थ है शिकायत का आधार, उत्पीड़क और गलत होने की स्थिति का अनुभव होना है। सार्वजनिक प्राधिकरण द्वारा नागरिकों की मांगों और अपेक्षाओं की पूर्ति न होने के कारण शिकायत उत्पन्न होती है। अतः शिकायत के निवारण की आवश्यकता होती है। इसे ध्यान में रखते हुए, दुनिया भर में, कई देशों ने कई प्रावधान बनाए हैं और भारत इसका कोई अपवाद नहीं है।

ओम्बुडसमैनः स्कैन्डिनेवियन संस्था

लोक शिकायतों के निवारण के लिए सबसे पहली लोकतांत्रिक संस्था ओम्बुडसमैन है। इसकी स्थापना पहली बार 1809 में स्वीडन में और उसके पश्चात् 1919 में फिनलैंड, 1955 में डेनमार्क, 1962 में नार्वे और न्यूज़ीलैण्ड तथा 1967 में यू. के. में हुई। यह एक ऐसी संस्था है जो न सिर्फ नौकरशाही की शक्तियों को नियंत्रित करती है बल्कि नागरिकों की शिकायतों के निवारण की भी एक प्रभावी एजेंसी है। यह प्रशासकों द्वारा कुप्रशासन या जानबूझकर उपेक्षा के मामले के विरूद्ध आवश्यक सुधारात्मक कदम उठाने में सक्षम है। (जैन 1976, पृ. 359)।

ओम्बुडसमैन, एक स्वीडिश शब्द है जिसका अर्थ है एक ऐसा अधिकारी जिसकी नियुक्ति विधायिका द्वारा न्यायिक कार्रवाई और प्रशासनिक शिकायतों को दूर करने के लिए होती है। (रोबट, 1968, पृ. 7-36) यह उस व्यक्ति को प्रदर्शित करता है जो दूसरों के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। सामान्य तौर से ओम्बुड्समैन को ऐसा व्यक्ति माना जाता है जो संभावित कुप्रशासन के खिलाफ नागरिकों की रक्षा के लिए नियुक्त किया जाता है।

स्कैन्डिनेवियन देशों के साथ-साथ राष्ट्रमंडल देशों में ओम्बुडसमैन की सफलता के पश्चात, दुनिया भर के कई देशों में अलग-अलग नामों और कार्यों के साथ ओम्बुडसमैन जैसी संस्थानों का निर्माण किया गया। भारत में भी इस संस्था ने लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है।

भारत में शिकायत निवारण तंत्र

स्वतंत्रता के पश्चात, नागरिकों की शिकायतों के निवारण के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर कई कदम उठाए गए हैं। राष्ट्रीय स्तर पर, नागरिकों की शिकायतों को देखने का काम दो एजेंसियाँ करती हैं। ये एजेंसियाँ है– (i) प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग, जो कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के अंतर्गत आता है और (ii) जन शिकायत निदेशालय, जो कैबिनेट सचिवालय के अंतर्गत आता है। नागरिकों की शिकायतों के लिए इन दो नोडल एजेंसी के अतिरिक्त कुछ और संस्थाएँ भी है, जिसके बारे में चर्चा आगे के पृष्ठों में की गई है।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग

केन्द्रीय सतर्कता आयोग (सी.वी.सी) की स्थापना 1964 में भारत सरकार के कार्यकारी प्रस्ताव द्वारा, संथानम समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप की गई। यह एक गैर संवैधानिक निकाय है, जो कार्मिक मंत्रालय के अधिकार क्षेत्र में आता है। केन्द्रीय सतर्कता आयोग की अध्यक्षता केन्द्रीय सर्तकता आयुक्त करता है जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा होती है। इसका कार्यकाल पाँच वर्ष या 65 वर्ष की आयु (इनमें से जो पहले हो) तक के लिए होता है। सेवा निवृत्ति के पश्चात् यह केन्द्र या राज्य सरकार के अंतर्गत कोई भी रोजगार नहीं स्वीकार कर सकता है। आयुक्त के अतिरिक्त, आयोग में कई और पदाधिकारी होते हैं, जैसे कि सचिव, आफिसर ऑन स्पेशल ड्यूटी (ओ.एस.डी.), मुख्य तकनीकी आयुक्त, विभाग के जाँच के लिए आयुक्त, अवर सचिव तथा तकनीकी आयुक्त। इसके क्षेत्राधिकार में सार्वजनिक उपक्रमों, कॉर्पोरेट निकायों और केन्द्र सरकार के अंतर्गत कार्यरत् अन्य संस्थान, दिल्ली मेट्रोपोलिटन काउंसिल और नई दिल्ली नगरपालिका समिति के सभी कर्मचारी आते हैं।

केन्द्रीय सतर्कता आयोग उन मामलों की जाँच करता है जिसमें किसी लोक सेवक पर आरोप लगा है कि उसने गलत एवं भ्रष्ट तरीके से कार्य किया है। यह एजेंसियों से रिपोर्ट मांगता है ताकि उनका नियंत्रण और निरीक्षण कर उन पर संपूर्ण सतर्कता बरत सके। यह प्रक्रियाओं और प्रचलनों की जाँच की समीक्षा शुरू कर सकता है। यह शिकायतों को आगे की कार्यवाई के लिए, उसे अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण में ले सकता है।

केन्द्र की भांति, प्रत्येक राज्य में राज्य सतर्कता आयोग होता है। साथ ही जिला स्तर पर, एक जिला सतर्कता अधिकारी होता है। इन सबका काम सरकार के कार्यों

पर नजर रखना है और साथ ही यह भी सुनिश्चित करना है कि प्रशासन नियमों का पालन करते हुए सुचारू रूप से चल रहा है।

अतः यह पाया गया है कि देश भर में, सतर्कता एजेंसी का जाल फैला हुआ है। ये अभिकरण सतर्कता तंत्र के माध्यम से सरकारी कर्मचारियों के उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार हैं।

लोकपाल और लोकायुक्त

केन्द्रीय सतर्कता आयोग के प्रावधान के बावजूद भी नागरिकों के लिए प्रभावी शिकायत निवारण तंत्र की आवश्यकता तथा मांग बनी रही। इसी क्रम में 1966 में गठित प्रशासनिक सुधार आयोग ने नागरिकों के शिकायत के निवारण को प्राथमिकता देते हुए, ओम्बुडसमैन जैसी एक संस्था के निर्माण की सिफारिश की। आयोग ने यह तर्क दिया कि इस संस्था के माध्यम से, बुरी तरह से प्रभावित नागरिकों के मन से अन्याय की भावना को दूर किया जा सकेगा। साथ ही प्रशासनिक तंत्र की दक्षता के प्रति जनता में विश्वास जगाया जा सकेगा (जैन, 1956, पृ.376)। भारत में ओम्बुडसमैन जैसी संस्था अपनाए जाने में आने वाली कठिनाइयों का सूक्ष्म परीक्षण करने के पश्चात, आयोग ने यह महसूस किया कि नागरिकों के शिकायतों के निवारण के लिए स्वतंत्र संस्थाओं/सत्ता की स्थापना करना उचित एवं संभव है। अतः आयोग ने यह सिफारिश की कि लोकपाल एवं लोकायुक्त नामक दो विशेष प्राधिकरण की स्थापना की जाए। लोकपाल केन्द्र स्तर पर स्थित होगा और मंत्रियों एवं सचिवों के प्रशासनिक गतिविधियों के विरूद्ध शिकायतों को सुलझाएगा तथा प्रत्येक राज्य में लोकायुक्त होगा जो निर्दिष्ट उच्च अधिकारियों के प्रशासनिक गतिविधियों के विरूद्ध शिकायतों का निपटारा करेगा।

प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों के परिणामस्वरूप, भारत सरकार ने मई 1968 में, लोकपाल तथा लोकायुक्त नामक एक विधयेक लोक सभा में पेश किया। 20 अगस्त 1968 को लोक सभा द्वारा पारित होने के पश्चात इसे राज्य सभा भेजा गया। हालांकि यह विधेयक पारित नहीं हो पाया क्योंकि दिसम्बर 1970 में लोक सभा भंग हो गई। 1971 में इस विधेयक को पुनः लोक सभा में पेश किया गया। परन्तु यह पारित नहीं हो पाया। इसके पश्चात् लोकपाल एवं लोकायुक्त की स्थापना हेतु कई प्रयास किए गए परन्तु विभिन्न कारणों की वजह से यह विधेयक पारित नहीं हो पाया। अन्ना हजारे द्वारा चलाए गए आंदोलन के परिणामस्वरूप ये विधेयक अंततः दिसंबर 2013 में पारित हो पाया।

हालांकि इस बीच, लोकपाल विधेयक की विफलता के पश्चात्, कुछ राज्यों ने लोकायुक्त विधेयक पेश करने की शुरुआत की। लोकायुक्त अधिनियम पारित करने वाला पहला राज्य ओडिशा था। यहाँ 1970 में लोकायुक्त संस्था का निर्माण किया गया। इसके पश्चात् कई राज्यों ने लोकायुक्त संस्था का निर्माण किया जैसे कि 1972

में महाराष्ट्र, 1973 में राजस्थान, 1974 में बिहार, 1975 में यू.पी., 1979 में कर्नाटक, 1981 में मध्य प्रदेश, 1983 में आंध्र प्रदेश, 1986 में गुजरात, 1995 में पंजाब, इत्यादि। इन राज्यों में लोकायुक्त की स्थापना लोक सेवकों, राजनीतिक कार्यपालिका, विधायकों, राज्य सरकार के अधिकारियों, स्थानीय निकायों, लोक उद्यमों तथा सरकार के अन्य यंत्रों के व्यवहार से उत्पन्न शिकायतों या गड़बड़ियों की जाँच करने के लिए हुई।

अधिकांश राज्यों में लोकायुक्त का कार्यकाल पाँच वर्ष या 65 वर्ष की आयु तक (इसमें जो पहले हो) होता है। इसकी पुनः नियुक्ति का कोई प्रावधान नहीं है। जहाँ तक लोकायुक्त के संरचना का संबंध है, विभिन्न राज्यों में भिन्नताएँ पाई जाती हैं। सामान्य तौर पर, लोकायुक्त राज्य के विधायिका के प्रति जिम्मेदार होता है। लोकायुक्त के पास यह शक्ति है कि वह अपने आप ही जाँच की प्रक्रिया शुरू कर सकता है और जरूरत पड़ने पर राज्य सरकार से संबंधित प्रासंगिक फाइल और दस्तावेज को मंगाकर जाँच कर सकता है।

विभिन्न राज्यों में लोकायुक्त की कार्यप्रणाली को देखने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि हालांकि उन्हें व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं परन्तु उन्हें सही ढंग से इन शक्तियों को प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जाती है। इन कार्यों को पूरा करने में उन्हें राज्य के राजनीतिक नेतृत्व से बहुत कम समर्थन मिलता है। लोकायुक्त को समर्थन देने के बजाय, राजनीतिक नेतृत्व सदैव उनके काम में हस्तक्षेप करते हैं और उन्हें स्वतंत्र एवं निष्पक्ष रूप से काम नहीं करने देते संभवतः इस डर से कि लोकायुक्त कहीं उनके गलत कामों का खुलासा न कर दें। चूंकि कोई भी दल भ्रष्टाचार से परे नहीं है, इसलिए लोकायुक्त प्रभावी तरीके से भ्रष्टाचार के मुद्दे का समाधान नहीं कर पाएगा (जैन, 1976, पृ. 396)।

सामान्य तौर पर यह पाया गया है कि राज्य सरकार की उदासीनता के परिणामस्वरूप लोकायुक्त अक्सर विवादों से घिरा रहता है। लोकायुक्त की कार्यप्रणाली और कामकाज के संबंध में मिश्रित तस्वीर देखी गई है। कुछ उदाहरण यह चिन्हित करते हैं कि लोकायुक्त ने अति सक्रिय रूप से कार्य किया है, तो कुछ अन्य उदाहरण यह दर्शाते हैं कि वह चाह कर भी स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं कर पाता।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सिर्फ लोकपाल और लोकायुक्त के गठन/निर्माण मात्र से नागरिकों की शिकायतों का निवारण नहीं हो पाएगा। प्रशासनिक सुधार आयोग ने भी नागरिकों के शिकायत निवारण की समस्याओं पर अपने अंतरिम रिपोर्ट में यही बात कही थी। आयोग का मानना था कि इन संस्थाओं के निर्माण मात्र से नागरिकों के शिकायतों का निवारण नहीं हो पाएगा। ये संस्थाएं शिकायत निवारण का ढांचा मात्र उपलब्ध कराते हैं। सरकारी संस्थाओं में उच्च स्तर के भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने या रोकने के लिए ये संस्थाएं पर्याप्त नहीं हैं। इस प्रकार के कई और स्वतंत्र तथा पर्याप्त रूप से शक्तिशाली सतर्कता निकायों की स्थापना की जरूरत है

(सरकार, 2010, पृ. 305) ताकि सही अर्थों में व्यवस्था को भ्रष्टाचार मुक्त बनाया जा सके और साथ ही नागरिकों की शिकायतों का निवारण भी हो सके। इस दिशा में सूचना का अधिकार अधिनियम एक सराहनीय कदम है।

सूचना का अधिकार अधिनियम

सूचना का अधिकार लोक प्रशासन के क्षेत्र में एक प्रमुख विषय के रूप में उभरा है। शिकायत निवारण प्रणाली के क्षेत्र में यह इस सदी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक नवप्रवर्तन है। वर्तमान समय में यह विचार विमर्श का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बन गया है। विकासशील देशों में शासन को बेहतर बनाने में नीति पैकेज के महत्वपूर्ण तत्व के रूप में इसकी सिफारिश निरन्तर की जा रही है। वास्तव में, यह शासन प्रक्रिया में खुलापन, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व लाने का महत्वपूर्ण यंत्र बन गया है। साथ ही नागरिकों के शिकायत निवारण का भी। स्थानीय शासन और विकास क्रियाओं में जन सहभागिता के माध्यम से यह जमीनी लोकतंत्र के आधार को भी मजबूत करता है। दूसरे शब्दों में, सूचना का आधार सु-शासन की मूल आवश्यकता है।

सूचना के अधिकार की उत्पत्ति मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (यू.डी.एच. आर.) 1948 से हुई है। यू.डी.एच.आर. के अनुच्छेद 19 में इसका वर्णन मिलता है। यह एक मौलिक मानव अधिकार है तथा सभी स्वतंत्रताओं के लिए कसौटी है जिसके प्रति संयुक्त राष्ट्र प्रतिबद्ध है (संयुक्त राष्ट्र महासभा प्रस्ताव, 1946)। 1766 में नागरिकों को यह स्वतंत्रता देने वाला पहला देश स्वीडन था। हालांकि, अन्य देशों ने इसे काफी देर से अपनाया। बहुत सारे देशों ने इसका प्रावधान बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तथा इक्कीसवीं शताब्दी के शुरूआत में किया। फिन्लैंड ने 1951, डेनमार्क तथा नार्वे ने 1970 तथा अमेरिका ने 1966 में इसे अपनाया। ब्रिटेन शुरू से ही गोपनीयता बनाए रखने में विश्वास करता था। ब्रिटेन में ऑफिशियल सीक्रेट एक्ट था। 2000 में *फ्रीडम ऑफ इन्फार्मेशन* अधिनियम, लाया गया जिसे 2005 में संशोधित किया गया।

भारतीय परिदृश्य

भारत में, सरकारी सूचना का खुलासा ब्रिटिश शासन के दौरान बनाए गए एक कानून द्वारा शासित होता है। यह कानून था 1889 का ऑफिशियल सीक्रेट एक्ट जिसे 1923 में संशोधित किया गया। भारत के संविधान में *फ्रीडम ऑफ इन्फार्मेशन* का स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता। हालांकि, संविधान के अनुच्छेद 19 (i) (अ) में सूचना का अधिकार शामिल है जब हम उसे यू.डी.एस.आर. के अनुच्छेद 19 के साथ पढ़ते हैं। यहाँ तक कि भारत का उच्चतम न्यायालय भी इस अधिकार की व्याख्या अनुच्छेद 19 (i) (अ) के भाग के रूप में करता है। उच्चतम न्यायालय ने 1975 में *स्टेट ऑफ यू.पी. बनाम राज नारायण* मामले में निर्णय देते हुए इस प्रस्ताव की अभिव्यक्ति की थी (चड्ढा, 2006, पृ. 5-6)।

इस निर्णय के पश्चात, उच्चतम न्यायालय ने समय-समय पर नागरिकों को यह अधिकार देने की बात कही है ताकि नागरिक सरकार की कार्यविधि पर अपने विचार अभिव्यक्त कर सकें और साथ ही अपने शिकायतों का निवारण भी। इसके अतिरिक्त, नागरिकों को सूचना के अधिकार के संदर्भ में, राजनीतिक प्रतिबद्धता भी रही है। 1977 में, जनता पार्टी ने एक खुली सरकार का वादा किया और यह घोषणा की कि अपने व्यक्तिगत फायदे के लिए सरकारी सत्ता एवं सुरक्षा सेवाओं का दुरूपयोग नहीं करेगी। (गुहा राय, 2003, पृ. 313)। 1977 में सत्ता में आने के पश्चात्, प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने एक कार्यकारी समूह का गठन किया और इसे *ऑफिशियल सीक्रेट एक्ट* में परिवर्तन करने का काम सौंपा ताकि जनता तक सूचना के अधिक प्रवाह को सुसाध्य बनाया जा सके। हालांकि, कार्यकारी समूह ने उस अधिनियम में कोई परिवर्तन नहीं सुझाया।

इस दिशा में दूसरा प्रयास 1989 में किया गया। सरकार *बोफर्स* सौदा से संबंधित सूचना का खुलासा करने के लिए तैयार नहीं थी (गुहा राय, 1990, पृ. 493)। राष्ट्रीय मोर्चा ने अपने घोषणा पत्र में एक खुली सरकार के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की बात कही और यह भी कहा कि नागरिकों को सूचना का अधिकार संवैधानिक प्रावधानों द्वारा उपलब्ध कराएगी। सत्ता में आने के पश्चात, वी.पी. सिंह की सरकार ने ऑफिशियल सीक्रेट एक्ट को संशोधित करने का वायदा किया परन्तु इससे पहले की वह ऐसा कर पाती, वह सरकार स्वतः गिर गई।

इन सब प्रयासों के परिणामस्वरूप, सूचना के अधिकार की मांग और तीव्र हुई और इसने एक जन आंदोलन का रूप ग्रहण कर लिया। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन की सरकार ने संसद में *फ्रीडम ऑफ इनफोर्मेशन* बिल, 2000 पेश किया। अंततः 2005 में यू.पी.ए. की सरकार ने सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के प्रावधान

सूचना का अधिकार अधिनियम 13 अक्टूबर, 2005 को पूरी तरह से लागू हो गया। यह भारत के नागरिकों को केन्द्र तथा राज्य सरकारों के रिकार्ड तक पहुँच उपलब्ध कराता है। इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, कोई भी नागरिक (जम्मू और कश्मीर के नागरिक सहित), किसी सार्वजनिक प्राधिकरण से सूचना को देखने का अनुरोध कर सकता है और जिसका उत्तर जल्द से जल्द या तीस दिनों के अंदर देना होता है। अधिनियम के अनुसार, प्रत्येक सार्वजनिक प्राधिकरण को अपने रिकार्ड कम्प्यूटरीकरण प्रसार के लिए करना होगा तथा अतिसक्रिय रूप से सूचना को वेबसाइट पर प्रकाशित करना होगा ताकि नागरिकों को औपचारिक रूप से कम से कम सूचना की मांग का अनुरोध करने की आवश्यकता पड़े। यह अधिनियम भारत के सभी राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों पर लागू होता है। इसके क्षेत्राधिकार के अंतर्गत

केन्द्र तथा राज्य स्तरों के सभी संवैधानिक प्राधिकरण जैसे– विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका आते हैं साथ ही पंचायती राज संस्थाएं और स्थानीय निकाय भी। यह उन निकायों पर भी लागू होता है जिसका स्वामित्व, या नियंत्रण या वितयन सरकार द्वारा होता है।

यहां तक कि वे गैर-सरकारी संस्थान भी इसके क्षेत्राधिकार में आते हैं जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष वितयन सरकार द्वारा होता है। हालांकि, यह अधिनियम निजी क्षेत्र पर लागू नहीं होता।

सूचना के अधिकार की परिभाषा

सूचना की मांग करने वाला व्यक्ति संबंधित कार्यालय के *पब्लिक इन्फोर्मेशन ऑफिसर* (पी.आई.ओ.) को लिखित रूप में या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से आवेदन के अनुरोध को जमा कर सकता है। आवेदन के साथ 10 रुपये की निर्धारित शुल्क राशि लगानी होगी। आवेदन में मांगी गई सूचना का ब्यौरा निर्दिष्ट होना चाहिए। आवेदन प्राप्त होने के 30 दिन के अंदर या तो उसका जवाब देना होगा या अधिनियम में निर्दिष्ट कारणों को बताते हुए उसे खारिज कर दिया जायेगा। हालांकि, जब किसी व्यक्ति के जीवन या स्वतंत्रता का प्रश्न होगा, ऐसी स्थिति में पी.आई.ओ. को 48 घंटे के अंदर जवाब देना होगा।

सूचना का अधिकार अधिनियम, भाग 2 (i) के अंतर्गत नागरिकों को अधिकार है कि वह किसी सूचना की मांग कर सकते (जैसा कि परिभाषित) हैं। दस्तावेजों की प्रतिलिपियाँ ले सकते हैं। दस्तावेजों, कार्यों और रिकार्ड की जाँच कर सकते हैं। कार्य के सामग्री के प्रमाणित सैम्पल ले सकते हैं। साथ ही सूचना को प्रिंटआउट, टेप, सी. डी., डी.वी.डी., या किसी अन्य इलेक्ट्रॉनिक मोड में प्राप्त कर सकते हैं।

सूचना के अधिकार का महत्व

सु-शासन को सुनिश्चित करने तथा शिकायत निवारण यंत्र के रूप में सूचना के अधिकार के महत्व पर बल देते हुए द्वितीय ए.आर.सी. की पहली रिपोर्ट में निम्न अवलोकन किया:

(1) सु-शासन के बगैर, कोई भी विकासात्मक योजना नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता को बेहतर नहीं बना सकता।

(2) सु-शासन के चार तत्व हैं– पारदर्शिता, उत्तरदायित्व सहभागिता तथा पूर्वानुमान। पारदर्शिता का अर्थ आम जनता तक सूचना को उपलब्ध कराना है। साथ ही सरकारी संस्थाओं की कार्यप्रणाली के बारे में स्पष्टता प्रदान करना है।

आर.टी.आई. सरकार के रिकार्ड को सार्वजनिक जाँच के लिए खोलता है और इस प्रकार नागरिकों को एक यंत्र प्रदान करता है जिसके द्वारा उन्हें यह सूचना मिलती है

कि सरकार क्या करती है और कितने प्रभावी रूप से करती है। और इस प्रकार से सरकार को अधिक उत्तरदायी बनाता है। सरकारी संगठनों में पारदर्शिता की वजह से वे अधिक उद्देश्यपरक रूप से कार्य करते हैं जिसके कारण पूर्वानुमान को बढ़ाया जा सकता है। सरकार की कार्यप्रणाली के बारे में सूचना, शासन प्रक्रिया में नागरिकों की प्रभावी भागीदारी को भी सुसाध्य बनाता है। मूल अर्थ में, आर.टी.आई सु-शासन की एक मूल आवश्यकता है (गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, 2006, पृ.1)।

अगर आर.टी.आई. सही तरीके से क्रियान्वित होती है तो, शासन में अधिक पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को सुनिश्चित किया जा सकेगा। यह न सिर्फ भ्रष्टाचार, गोपनीयता और नागरिकों के प्रति नौकरशाहीकृत उदासीनता को नियंत्रित करता है बल्कि नागरिकों को उनका सही/उचित देय भी उपलब्ध कराएगा। इसका प्रभावी क्रियान्वयन सतर्कता का माहौल निर्मित करेगा। जिसकी वजह से अधिक सहभागी लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली विकसित होगी (गोयल, 2007, पृ. 549)।

भ्रष्टाचार से लिप्त व्यवस्था जो कि वंचित नागरिकों के प्रति अधिक संवेदनहीन बन चुकी थी, आर.टी.आई ने ऐसी व्यवस्था में नागरिकों को सशक्त बनाने का वादा पूरा किया है ताकि उत्तरदायित्व को सुनिश्चित किया जा सका और आर.टी.आई. सु-शासन के लागूकर्ता के रूप में कार्य कर सके (गांधी, 2009)। आर.टी.आई एक Torch Bearer (मशाल वाहक) है जो एक अधिक खुला, उत्तरदायी, जिम्मेदार तथा जन-अनुकूल शासन प्रदान कर सकता है।

आर.टी.आई भारत में जमीनी लोकतंत्र को मजबूत बनाने का एक अद्भुत एवं अनोखा प्रयास है। इसे सहभागी लोकतंत्र का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधारशिला माना गया है क्योंकि सूचना तक पहुँच शासन में उत्तरदायित्व और पारदर्शिता की भावना को बढ़ाता है। इसे एक सुधारात्मक यंत्र के रूप में देखा गया है, जो उत्तरदायित्व के सिद्धांत को सुनिश्चित करता है।

आर.टी.आई का क्रियान्वयन जमीनी स्तर पर

जमीनी स्तर पर आर.टी.आई आंदोलन की शुरुआत मजदूर किसान शक्ति संगठन (एम.के.एस.एस.) नामक एक जन संगठन द्वारा राजस्थान में अरूणा राय के नेतृत्व में की गई। हालांकि, अन्ना हजारे, निर्मला देशपांडे और पंकज राय जैसे सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी अपने तरीके से योगदान दिया तथा ग्रामीण जनता को उनके अधिकारों एवं विशेषाधिकारों के प्रति जागरूक बनाया। एम.के.एस.एस. एक पंजीकृत सोसाइटी है जिसकी स्थापना 1990 में विभागों द्वारा क्रियान्वित लोक कार्य एवं कार्यक्रमों से जुड़े भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए की गई। आर.टी.आई ने पूर्ण न्यूनतम मजदूरी की गैर-अदायगी के मुद्दे पर ग्रामीण मजदूरों के संघर्ष का समर्थन किया है। इसने ग्राम पंचायतों द्वारा क्रियान्वित कार्यक्रमों विशेषकर जवाहर रोजगार योजना, जो कि केन्द्र प्रायोजित योजना है में फर्जी मस्टर रोल जैसे मुद्दों को भी उठाया।

एम.के.एस.एस. द्वारा शुरू की गई जन सुनवाई का तरीका था ढोल बजाकर गांव के लोगों को इकट्ठा करना और उसके पश्चात् सार्वजनिक कोष से चलायी जा रही कार्यों से संबंधित सभी दस्तावेजों की मांग करना है। राजस्थान में एम.के.एस.एस. ने बहुचर्चित आंदोलन संगठित किया, तथा पंचायतों से सार्वजनिक निधि के बारे में जानकारी मांगी तथा किस प्रकार खर्च किया गया है, उसके बारे में भी सूचना मांगी। जन सुनवाई के माध्यम से उन्होंने पंचायत के नेताओं और सरकारी अधिकारियों को विकास खर्च का ब्यौरा देने के लिये मजबूर किया (घोष, 2005, पृ. 269)। जनता की मांग के पश्चात कई गांवों में सरपंचों द्वारा वसूलियाँ भी की गई हैं तथा उत्तरदायित्व एवं पारदर्शिता के मुद्दों पर गांवों को गतिशील बनाने में जन सुनवाई काफी प्रभावी रही है (बैंकग्राउंड पेपर, 1999, पृ. 29)। 1994 के मध्य तक, एम.के.एस.एस. ग्रामीण लोगों को गतिशील बनाने में सफल रहा जिसके परिणाम स्वरूप पंचायतों द्वारा खर्च किए गए वित्तीय रिकार्ड की प्रतिलिपियों की विशिष्ट मांग की गई (घोष, 2005, पृ. 261)। इस तरीके से सोशल आडिट के माध्यम से पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और शिकायत निवारण की मांग लागू हुई।

आर.टी.आई का डिजिटल निगरानी व्यवस्था के निर्माण, ऑन-साइट मस्टर रोल की जाँच, सभी रिकार्ड का अतिसक्रिय रूप से खुलासा तथा नियमित सोशल आडिट के माध्यम से आर.टी.आई को वास्तविक बनाया जा सकता है (मिश्रा, 2009, पृ. 697)। इसे पूरा करने के लिए राज्य सरकारें अलग-अलग उपकरणों। यंत्रों का प्रयोग कर रही हैं। उदाहरण के लिए, कुछ सरकारों ने नागरिक समाज संगठनों के साथ सामरिक साझेदारी कर उत्तरदायित्व यंत्रों को विकसित किया है। देश के कुछ अन्य भागों में वन-टाइम मास सोशल आडिट संचालित किया गया है, जबकि कुछ अन्यों में नागरिक समाज संगठनों के जाल (नेटवर्क) का प्रसार देखा गया है जो एक जुट होकर आडिट करते हैं, रिपोर्ट कार्ड तैयार करते हैं तथा अधिनियम के क्रियान्वयन को देखते हैं (अय्यर एवं सामजी, 2012, पृ. 232)।

जमीनी स्तर पर आर.टी.आई का प्रयोग और महत्व मनेरगा में देखा जा रहा है। मनेरगा निर्देशों के अनुसार, सरकार के सभी स्तरों को मनेरगा संबंधित सभी रिकार्ड का सही रख-रखाव करना है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि सूचना का अतिसक्रिय रूप से खुलासा किया जा रहा है, और नागरिकों को उपलब्ध कराया जा रहा है। मनेरगा के निर्देश यह तय करते हैं कि सभी सूचना को डिसप्ले बोर्ड तथा पंचायत कार्यालय की दीवारों पर चित्रकारी के माध्यम से जनता को दिखाया जाए। साथ ही, यह भी प्रावधान है कि ग्राम पंचायत स्तर पर मनेरगा आंकड़ों और उससे जुड़ी सभी सूचना जाँच के लिए सार्वजनिक रूप से उपलब्ध कराई जाए (अय्यर एवं सामजी, 2012, पृ. 235)।

आर.टी.आई के सफल क्रियान्वयन के लिये, सतर्क निगरानी, पारदर्शिता तथा उत्तरदायित्व के साथ-साथ नागरिक समाज तथा जनता की सक्रिय भागीदारी महत्वपूर्ण है। कुछ राज्यों में सरकार और नागरिक समाज संगठनों के बीच साझेदारी स्थापित की गई है। आंध्र प्रदेश सरकार में 2006 में राज्य में सभी मनेरगा कार्यक्रमों

के लिए सोशल ऑडिट को संस्थागत करने की प्रक्रिया शुरू की। सरकार ने नागरिक समाज संगठन के साथ मिलकर 35 सदस्यों वाली टीम निर्मित कर ऑडिट की प्रक्रिया का प्रबन्ध किया और उसे सुसाध्य बनाया। ऑडिट के दौरान, मनेरगा पर सरकारी खर्च की विस्तृत जानकारी का सत्यापन किया जाता है, जो ऐसेट बने उसका मूल्यांकन किया जाता है तथा मनेरगा पर सूचना ग्रामीण समुदायों के साथ साझा की जाती है। ऑडिट का समापन जन सभा के साथ किया जाता है जहाँ ऑडिट के जाँच परिणाम को स्थानीय सरकारी अधिकारियों एवं राजनीतिज्ञों की मौजूदगी में साझा किया जाता है (अय्यर तथा सामजी, 2012, पृ. 236)।

सरकार-नागरिक समाज साझेदारी राजस्थान में भी देखी गई है। नवम्बर 2007 में, राजस्थान सरकार ने रोजगार एवं सूचना का अधिकार अभियान के साथ साझेदारी कर, एक विकेन्द्रित वर्कसाइट प्रबन्धन व्यवस्था विकसित की। इस अभियान का उद्देश्य प्रशिक्षित वर्कसाइट प्रबन्धकों का एक पूल तैयार करना है जो कि वर्कसाइट का प्रति दिन मापन करेंगे और रोज का निर्गत (आउटपुट) भी निर्धारित करेंगे। इसका मूल बल पारदर्शिता पर है (अय्यर एवं सामजी, 2012, पृ. 237)।

उपरोक्त विश्लेषण से यह पता चलता है कि जमीनी स्तर पर आर.टी.आई. मनेरगा के सोशल ऑडिट द्वारा क्रियान्वित किया जा रहा है। हालांकि यह विश्लेषण सोशल ऑडिट तथा आर.टी.आई की सफलता को प्रतिबिंबित करता है, फिर भी कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं जो यह सुझाते हैं कि मनेरगा का क्रियान्वयन सही लोकतांत्रिक और विकेन्द्रित तरीके से नहीं किया गया है। ऐसे कई उदाहरण हैं जो यह दर्शाते हैं कि मांगी गई सूचना उपलब्ध नहीं कराई गई।

मनेरगा योजनाओं के क्रियान्वयन में व्यापक अनियमितता और गड़बड़ी के मामले भी देखे गए हैं। इस प्रकार की अनियमितताएं कर्नाटक में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा चिन्हित की गई हैं (पंचायती राज अपडेट, जुलाई 2008, पृ. 6)।

दिल्ली में परिवर्तन नामक एक स्वयं सेवी संगठन आर.टी.आई के प्रयोग को सुसाध्य बनाने में काफी सफल रही है। जिसके माध्यम से शिकायतों का निवारण किया गया है, सरकारी विभागों द्वारा अधूरे कार्यों को पूरा करवाया गया है और साथ ही सरकारी कार्यों की जाँच की गई। इसने गरीबों को राशन कार्ड दिलवाने में भी मदद की (गुहा राय, 2006, पृ. 15)।

अंततः सूचना के व्यापक प्रसार और खुलासे में मीडिया ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लोगों के बीच जागरूकता बढ़ाने, सरकार के भ्रष्ट प्रचलनों का बिना किसी डर या पक्षपात के खुलासा करने, आर.टी.आई के प्रयोग तथा दुरुपयोग पर वाद-विवाद शुरू कराने और आवाज हीनों को आवाज प्रदान कराने में एक सक्रिय भागीदार की भूमिका निभाई है (मिश्रा, 2009, पृ. 701)।

निष्कर्ष

अतः हम कह सकते हैं कि शिकायत निवारण उपायों के व्यवस्थित क्रियान्वयन का नागरिकों के ऊपर प्रत्यक्ष प्रभाव हो सकता है। इस संदर्भ में कि वे स्थायी निकायों की कार्यप्रणाली पर पंचायत से जुड़े कार्यों पर सूचना मांग कर निगरानी रख सकते हैं। राजस्थान में जन सुनवाई के प्रयोग से प्राप्त अनुभव इस बात का सबूत है कि नागरिकों को अब बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता। यह आर.टी.आई का एक बहुत ही सकारात्मक प्रभाव है। यह उम्मीद की जा सकती है कि निकटतम भविष्य में स्थानीय निकाय उत्तरदायी और सहभागी शासन द्वारा नैतिक मूल्यों को लोकतांत्रिक मूल्यों के साथ मान लेंगे। आर.टी.आई. की सफलता नागरिकों और प्रशासकों के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध पर निर्भर करता है। प्रशासन को मानवीय और जिम्मेदार तरीके से कार्य करना चाहिए तथा नागरिकों को प्रशासकों के साथ अर्थपूर्ण सहयोग करना चाहिये। आर. टी.आई विकेन्द्रित शासन को सुनिश्चित करने का एक प्रभावी यंत्र मात्र नहीं है बल्कि नागरिकों की शिकायत निवारण का प्रभावी यंत्र भी है। नागरिक इस यंत्र का नियमित रूप से प्रयोग कर रहे हैं तथा सरकार पर दबाव डालकर अपने शिकायत संबंधी आवश्यक सूचना प्राप्त कर रहे हैं। इस तरह से वे काफी हद तक अपनी शिकायतों का निवारण कर पाते हैं।

संदर्भ

1. बैकग्राउंड पेपर (1999), बैकगाउंड पेपर फॉर सेमिनार ऑन अकांटेबिलिटी ऑफ लोकल बॉडी एण्ड डी.आर.डी.ए., नेशनल एकाडमी ऑफ ऑडिट एण्ड अकाउंट, शिमला, 15 तथा 16 सितम्बर।
2. चड्ढा, स (2006) 'राइट को इनफॉर्मेशन रिजिन इन इंडिया : अ क्रिटिकल अप्रैजल', द इण्डियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, LII (1)।
3. घोष, बी. (2005), 'अकाउंटबिलिटी ऑफ पंचायतः एण्डस ऐण्ड मीन्स' इन एल.सी. (एडीटेड), डिसेन्ट्रालाइजेशन ऐण्ड लोकल गर्वेनेन्स, नई दिल्ली, ओरिएन्ट लौंगमैन।
4. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (1966) 'एडमिनिस्ट्रेटिव रिफार्मस कमीशन', इंटेरिम रिपोर्ट ऑन प्रॉब्लम ऑफ रीड्रेस ऑफ सीटिजेंस ग्रीवांसेस, न्यू दिल्लीः गर्वनमेंट ऑफ इंडिया।
5. गर्वनमेंट ऑफ इंडिया (2006) 'सेकेन्ड एडमिनिस्ट्रेटिव रिफार्मस कमीशन', फस्ट रिपोर्ट ऑन राइट टु इंर्फोमेशनः मास्टर की टु गुड गर्वनेन्स, पारा.1.1.1.
6. जैन, आर.बी. (1976), कन्टेम्पोरेरी इसुस इन इंडियन एडमिनिस्ट्रेशन, नई दिल्ली, विशाल पब्लिकेशन।
7. मिश्रा, श्वेता (2009), 'राइट टु इंफार्मेशन एण्ड डीसेन्ट्रलाइजड गर्वनेन्स, द इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, LV (3)।
8. पंचायती राज अपडेट (2008), इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल सांइसेस, XV (7)।
9. रोवाट, डी.सी. (1968) 'द स्प्रेड ऑफ ओम्बुडसमैन आइडिया' इन ऐन्डरसन, एस.बी.

(एडीटेड), ओम्बुडसमैन फॉर अमेरिकन गवर्नमेंट, ऐन्यालवुड क्लीफस (एन.जे.), प्रिंसटन हौल।

10. राय, जे.जी. (1990), 'ओपेन गवर्नमेंट ऐन्ड एडमिनिस्ट्रेटिव कलचर इन इंडिया', द इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 36 (3)।
11. राय, जे.जी. (2003) 'राइट टु इंफॉर्मेशनः अ की टु अकांटेबल ऐण्ड ट्रान्सपैरेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन', इन धमेजा, ए. (एडिटेड), कन्टेम्परेरी डीबेटस इन पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, नई दिल्ली, प्रिंटिस हौल ऑफ इंडिया।
12. राय, जे.जी (2006), राइट टु इंफॉर्मेशन इनिसिएटिक्स ऐन्ड इम्पैक्ट, ओकेशनल पेपर, नई दिल्ली, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन।
13. सरकार, एस. (2010), पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन इन इंडिया, नई दिल्ली, पी.एच.आई।
14. अय्यर, वाई. ऐन्ड सामजी, एस. (2012), 'गैरेन्टिडिंग गुड गर्वनेन्स : अंडरस्टैन्डिंग दी इफैक्टिवनेस ऑफ अकाउंटिबिलिटी मैकेनिज्मस', इन नरेगा, दी नेशनल रूरल एमप्लॉयमेंट गैरेन्टी ऐक्ट डिजाइन, प्रोसेस ऐन्ड इम्पैक्ट, नरेगा नॉलेज नेटवर्क, अवलेबल फ्रॉमः indiagovernance.gov.in/files/strengtheningpublicaccountability (असेसड 16 अगस्त, 2014)।
15. गांधी, एस. (2009), 'राइट टु इन्फॉर्मेशन आ टूल टु इंप्रूव द गर्वनेन्स ऑफ इंडिया' अवलेबल फ्रॉमः http://www.bcasonline.org (असेसड 18 अक्टूबर, 2014)।

गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन में खादी की भूमिका

श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी

lkjk'k *शांति, समन्वय, स्नेह, सहिष्णुता, सद्भाव और सदाचार के अग्रदूत, अहिंसा और सत्याग्रह के व्यावहारिक व्याख्याता, वैयक्तिक सम्पूर्णता के प्रतीक, सामाजिक एवं राजनीतिक समग्रता के प्रवर्तक, भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन के पुरोधा, बंधनमुक्त मानवता एवं शान्तिपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के समर्थक और एक साधक की जिन्दगी जीते हुए मनुष्य से महात्मा की उपाधि प्राप्तकर्ता मोहनदास करमचन्द गांधी भारत भूमि की विशिष्टतम् विभूति हैं और वैश्विक मानवता की अक्षय निधि हैं। इन्होंने स्वराज प्राप्ति के लिए विभिन्न साधनों का प्रयोग किया है। इनमें सर्वाधिक सशक्त साधन था विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार। अपने आन्दोलनों की सफलता के लिए गाँधी जी ने स्वदेशी वस्त्रों के प्रयोग और निर्माण पर बल दिया तथा इसके लिए चरखे के प्रयोग एवं खादी -वस्त्रों के विनिर्माण पर बल दिया। अधोलिखित शोध पत्र में स्वदेशी आन्दोलन में गाँधी जी के दृष्टिकोण का वर्णन करते हुए उस आन्दोलन की सफलता के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त खादी वस्त्र के इतिहास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता में उसके योगदान का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।*

प्रस्तावना

भारत का राष्ट्र धर्म है स्वदेशी की प्रतिष्ठा। उसके माध्यम से ही भारत के विभिन्न समुदायों की बौद्धिक प्रतिभा, ज्ञान-विज्ञान, परम्पराएँ, न्याय-बुद्धि, धर्म-बोध, कौशल तथा राजनीतिक सामर्थ्य प्रकट तथा विकसित होती रही है तथा हो सकती है, चाहे वे समुदाय किसी भी धर्म-मत में आस्था रखते हों। स्वदेशी का अर्थ है – अपना देश। राजनीतिक क्षेत्र में गाँधी जी के राष्ट्रवाद का आधार इसी से बना है। यह प्रबुद्ध देशभक्ति का सिद्धान्त है, जो पड़ोसियों के प्रति हमारे कर्त्तव्यों को सीमाबद्ध कर देता है। गाँधी जी ने स्वदेश की अवधारणा को अति व्यापक अर्थ प्रदान किया है। 'स्वदेशी' वह भावना है जो हमें दूर के बजाय अपने आस-पास के परिवेश के ही उपयोग और

सेवा तक सीमित रखती है।[1] वह केवल आर्थिक क्षेत्र में स्वदेश निर्मित वस्तुओं के प्रयोग मात्र तक सीमित नही है। गाँधी जी ने 'स्वदेशी' को स्वराज की पूर्व अवधारणा बताया है और इसे उन्होंने स्वशासन एवं आत्मनिर्भरता, राष्ट्रीय सरकार तथा राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता को परस्पर जोड़ने वाली कड़ी की संज्ञा दी है। उनके अनुसार 'स्वदेशी' हमारे अन्दर निहित वह भावना है जो हमें अधिक दूरस्थ से हटाकर अपने निकट के वातावरण से लाभ एवं उपयोग उठाने तक सीमित रखती है। ''मैं स्वदेशी को सभी के द्वारा पालन किए जाने वाला धार्मिक सिद्धान्त मानता हूँ''।

इस तरह से स्वदेशी एक उच्चस्थ आध्यात्मिक प्रकार की सर्वतोमुखी देशभक्ति है। स्वदेशी की मांग है कि हम अपने देश के आदर्शों एवं संस्थाओं से दृढ़तापूर्वक जुड़े रहें। विशुद्ध सेवा भावना 'स्वदेशी' का सार है। स्वदेशी कभी भी समूहों की अनैतिकता, संकीर्णता एवं निहित स्वार्थ की वृद्धि में विश्वास नहीं करता। भारत के संदर्भ में गाँधी जी कहा करते थे कि –''एक सच्चा स्वतंत्र भारत अपने संकट ग्रस्त पड़ोसियों की सहायता के लिए दौड़ कर पहुँचने के लिए बाध्य है। स्वदेशी का सिद्धान्त सेवा हेतु मानवीय क्षमता की वैज्ञानिक सीमाओं को स्वीकार करता है। वस्तुतः गाँधी जी इसे गीता की शिक्षाओं पर अवलम्बित मानते हुए बताते हैं कि अपने कर्त्तव्यों के (स्वधर्म) पालन करते हुए मर जाना श्रेष्ठ है तथा दूसरों के कर्त्तव्यों (पर धर्म) को करना विपदापूर्ण है।

स्वदेशी, अर्थात् जो करीब या पड़ोस में है, उसका उपयोग तथा सेवा के सिद्धान्त पर आधारित सामाजिक व्यवस्था, स्वदेशी मूलभूत रूप से अहिंसक व्यवस्था है, जो सृष्टि के सनातन नियमों का उल्लंघन नहीं होने देती। गाँधी जी ने स्पष्ट कहा था कि स्वदेशी के बिना हिन्दू धर्म मृत शरीर के बराबर है। स्वदेशी सिद्धान्त वास्तव में घरेलू उद्योगों के इस रूप में संरक्षण प्रदान करता है कि उनमें विकास करने की निश्चित शक्ति विद्यमान रहे। स्वदेशी का अर्थ किसी दूसरे देश के प्रति दुर्भाव कदापि नहीं है। गाँधी के शब्दों में, ''यह किसी भी दृष्टि से संकीर्ण नहीं है क्योंकि जो कुछ भी मेरे विकास के लिए आवश्यक है, वह मैं संसार के किसी भी भाग से ले लूँगा। मैं संसार के किसी भाग से ऐसी कोई वस्तु लेने को तैयार नहीं चाहे वह कितनी ही सुन्दर हो जो मेरे विकास में बाधक हो और उन लोगों को हानि पहुँचाये जिनकी भलाई मेरी प्रकृति में पहली चिंता का विषय है''।[2]

स्वदेशी की इस व्यापक धारणा को स्वयं गाँधी जी ने प्रतीकात्मक रूप से आम जनता को समझाने के लिए ''खादी'' का रूप दिया। खादी का संदेश वे स्वयं नियमित रूप से चरखा चलाकर देते थे तथा सभी आश्रमवासियों एवं अनुयायियों को नियमित रूप से चरखा चलाने के लिए कहते थे। गाँधी जी के लिए चरखे का संगीत 'आत्मा की आवाज' था। उन्होंने खादी को भारतीय एकता का प्रतीक बना दिया और उसे खद्दर के रूप में पहनाकर सबको राष्ट्रीय वेशभूषा से सुसज्जित कर दिया। गाँधी

जी के अनुसार खादी भी स्वदेशी की प्रतीक थी। गाँधी जी का खादी के बारे में कहना है: –

1. खादी मनोवृत्ति का अर्थ जीवन की आवश्यकताओं के उत्पादन एवं वितरण का विकेन्द्रीकरण है।
2. इसके लिए रूचि एवं मनोवृत्ति में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।
3. इसका अर्थ समग्रात्मक स्वदेशी मनोवृत्ति है। वह भारत में ही जीवन की समस्त आवश्यकताओं को प्राप्त कर लेने का संकल्प है तथा उसे ग्रामवासियों की श्रम एवं बुद्धि के द्वारा प्राप्त किया जाता है।
4. भारी उद्योग आवश्यक रूप से केन्द्रीयकृत एवं राष्ट्रीयकृत होंगे लेकिन वे गाँवों में व्यापक राष्ट्रीय गतिविधियों के न्यूनतम अंश बन सकेंगे।

स्वदेशी तो शाश्वत धर्म है। उसका व्यवहार हर युग में बदलता ही रहेगा और बदलना भी चाहिए। स्वदेशी आत्मा है और भारत में इस युग के लिए खादी उसका शरीर है। समय पाकर उसकी इस देह का नाश होना हो, तो भले ही हो। तब वह दूसरी तथा नवीन देह धारण कर लेगा पर अंतर में स्थित आत्मा तो वही होगा। स्वदेशी एक सेवा धर्म है। इस सेवा धर्म को यदि हम पूरी तरह समझ लें, तो हमारा हमारे परिवार का, देश का और सारे संसार का कल्याण होगा। स्वदेशी में स्वार्थ नहीं, शुद्ध परमार्थ है, इसलिए मैं उसे यज्ञ मानता हूँ।[3]

स्वदेशी की सफलता हेतु गाँधी जी ने खादी को एक अस्त्र के रूप में चुना और इसे जन-जन तक पहुँचाने में सफल भी रहे परन्तु खादी की परम्परा का इतिहास केवल आधुनिक भारत से नहीं जुड़ा है। यह रवायत सैन्धव सभ्यता में भी विद्यमान थी। सैन्धव सभ्यता की अर्थव्यवस्था पूर्णतः कृषि एवं पशुपालन पर केन्द्रित थी। तत्कालीन भारत में विविध प्रकार के उद्योग विकसित थे। उत्खनन के दौरान पुरातत्त्ववेत्ताओं को मिले साक्ष्य इस तरफ संकेत करते हैं, उस समय वस्त्र उद्योग का विकास हो चुका था। जहाँ दयाराम साहनी को चाँदी के एक कलश में कपड़े का एक टुकड़ा मिला है, वहीं डॉ. मैके को अनेक वस्तुओं में लिपटे हुए धागे प्राप्त हुए हैं। सिन्धु प्रदेश में पटुए के अवशेष भी प्राप्त हुए है। इस तरह यह स्पष्ट होता है कि पूर्व वैदिक काल तक भारत में वस्त्र उद्योग की नींव मजबूत हो चुकी थी।[4]

वैदिक वाङ्मय से ज्ञात होता है कि वैदिक ऋषि कपड़ा बुनने में दक्ष थे। ऋग्वेद में वैदिक मानवों (आर्यों) द्वारा वस्त्र को चुनने के सन्दर्भ में सात उपदेशों का उल्लेख है।[5]

तंतुतन्वन्, रजसोभानुमन्विर्हि ज्योतिशमतः पथो रक्षधियाकृ

अनुल्वणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनयादैव्यम् जनम्।।

अर्थात् सूत कातो, उस पर रंग चढ़ाओं, उसका कपड़ा बुनो, इससे लोगों के

स्वास्थ्य की रक्षा करो, मननशील बनो, प्रजा उत्पन्न करो, यह समस्त कार्य हीन कार्य न होकर श्रेष्ठ कवियों के समान है। ऋग्वेद के कुछ मंत्रों माता-पिता द्वारा अपने पुत्र के लिए वस्त्र बुनने का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।[6] अथर्ववेद में पत्नी द्वारा पति के लिए कपड़ा बुनने का प्रमाण मिलता है।[7] इस प्रकार इन मन्त्रों से प्रमाणित होता है कि तत्कालीन भारतीय समाज में कपड़ा बुनना घरेलू कार्य था और इसे श्रेष्ठ कार्य समझा जाता था। पूर्व मध्यकाल में भी कपड़ा की बुनाई के विषय में साक्ष्य मिलते हैं। एक प्रसंग है कि राजा भोज के दरबार में एक बुनकर आया और उसने राजा से कहा *''हे भोजराज कवयामि वयामि यामि''*।

मध्यकाल में भी खादी को किसी तरह की कोई हानि नही पहुँची। अकबर के शासन काल में खादी अपना गौरव बनाए हुए था। बादशाह अकबर को एक जुलाहे कारीगर ने बहुत उन्नत किस्म का खादी का थान एक बाँस की छोटी सी नली में रखकर दिया था। वह थान इतना लम्बा चौड़ा था कि उससे एक हाथी बखूबी ढाँका जा सकता था।[8] इस काल में बंगाल के ढाके का मलमल का कपड़ा विश्व प्रसिद्ध था। भारत में इतना अच्छा वस्त्र तैयार होता था जितना कि उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोप की मशीनें भी नहीं बना सकती थी।[9] *एनसायक्लोपीडिया आफ ब्रिटेनिका* के अनुसार ''यूरोप की पूर्ण मशीनें भी अभी तक भारतीय करघों से अच्छा सूत या वस्त्र नहीं निकाल सकी है। प्रकृति ने ही भारत को इस विषय की विविध सुविधाएँ प्रदान की हैं।[10]

आधुनिक काल में भारत में अंग्रेजी शासन काल के दौरान खादी को पराभव का मुँह देखना पड़ा। अंग्रेजों ने भारतीय वस्त्र उद्योग को नष्ट कर दिया। इन दिनों भारत से खादी का नाम उठ सा गया। इंग्लैण्ड के मैनचिस्टर और लंकशायर के बने कपड़ों से पूरा भारत भर गया। प्राचीन काल से अब तक खादी ने विश्व में अपना जो गौरव बनाए हुए था उसे पूरी साजिश के तहत अंग्रेजों ने समाप्त कर दिया।

राष्ट्रीय आन्दोलन में गाँधी जी के आने के पूर्व ही 'चरखा' और 'खादी' को लोककप्रियता मिल चुकी थी। 'चरखा' तथा 'खादी' दोनों ही अंग्रेजों के विरूद्ध चलाए जा रहे प्रतिक्रियावादी आन्दोलन के मूल में थे। दिसम्बर 1903 में अंग्रेजों ने बंगाल-विभाजन की सार्वजनिक घोषणा की। भारतीयों के विरोध के बावजूद जुलाई 1905 में 'बंगाल विभाजन' की घोषणा कर दी गई। इस घोषणा के तत्काल बाद बंगाल में विरोध सभाएँ आरम्भ हुई। इन सभाओं में सबसे पहले विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का निर्णय किया गया। 7 अगस्त 1905 को बंगाल-विभाजन के विरोध में कलकत्ता के टाउनहाल में एक विशाल प्रदर्शन आयोजित किया गया और यही से स्वदेशी आन्दोलन को प्रारम्भ करने की घोषणा की गई। इसके पश्चात् मैनचिस्टर में बने कपड़ों तथा लिवरपुल के बने नमक का बहिष्कार करने का आग्रह किया गया। 16 अक्टूबर 1905 को जब बंगाल विभाजन विधिवत् लागू हुआ तो उस दिन को शोक दिवस के रूप में मनाया गया। लोगों ने व्रत रखा, वन्दे मातरम गीत गाया। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी तथा आनन्द मोहन बोष ने एक विशाल जनसभा को सम्बोधित किया। स्वतन्त्रता आन्दोलन की अब तक की

यह सबसे बड़ी जनसभा थी। स्वदेशी आन्दोलन के दौरान लोगों से जिन महत्वपूर्ण मुद्दें पर सहयोग करने की मांग की गयी वह थीः–

1. चरखा को आत्मनिर्भरता का प्रतीक बनाना।
2. स्वेदशी मेले का आयोजन करना।

जनवरी 1915 में गाँधी जी भारत आ गए। दक्षिण अफ्रीका में उनके द्वारा किए गए आन्दोलनों की सफलता ने भारत में उन्हें काफी लोकप्रिय बना दिया था बावजूद इसके उन्होंने लगभग दो वर्षों तक भारत आगमन के पश्चात् किसी भी आन्दोलन में हिस्सा नहीं लिया। चम्पारन सत्याग्रह (1917) उनका पहला आन्दोलन था। अहसयोग की शुरूआत 1920 में हुई। सितम्बर 1920 में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन कलकत्ता में आयोजित हुआ। इस अधिवेशन में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, खादी का प्रयोग और चरखा के प्रयोग को प्रोत्साहन देने का संकल्प लिया गया। नागपुर अधिवेशन (दिसम्बर 1920) में गांवों में 20 लाख चरखे स्थापित किए जाने का संकल्प लिया गया। इस प्रकार गाँधी जी के भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रवेश करने के पश्चात् खादी और चरखे को जन-जन तक पहुँचाने में कांग्रेस के द्वारा इस क्षेत्र में प्रयास पहले से किया जा रहा था परन्तु इसे लोकप्रियता गाँधी जी के आने के बाद ही मिल सकी।

गाँधी जी की दृष्टि में ''खादी केवल वस्त्र नहीं है अपितु विचार है''। गाँधी जी के द्वारा खादी और चरखे का प्रयोग राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान करने के पीछे लोगों को आत्मनिर्भर बनाना उद्देश्य था। उनका यह मानना था कि तुम तब तक सुखी नहीं हो सकते जब तक तुम्हारा समाज सुखी न हो। कदाचित यही कारण था कि गरीबी मिटाने के निमित्त पहले विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार और पुनः खादी के वस्त्र अथवा स्वदेशी वस्त्र के निर्माण पर बल दिया। निःसन्देह इसमें आत्मनिर्भर का पुट था। पूरे राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान गाँधी जी ने खादी को एक हथियार के रूप में प्रयोग किया और स्वतन्त्रता के पूर्व ही नहीं वरन् बाद में भी 'खादी' को भारत को ट्रेड मार्क बना दिया।

महात्मा गाँधी ने जब स्वदेशी का अलख जगाया तो उनकी इस अवधारणा के विरूद्ध बहुतों ने शंका व्यक्त की। शंका व्यक्त करने वालों में रवीन्द्र नाथ टैगोर भी थे। गांधी जी के 'चरखा अभियान' और 'स्वदेशी' को अन्तर्राष्ट्रीय लाभों से भारत को वंचित रखने वाला अवैज्ञानिक अभियान बताते हुए उन्होंने 'माडर्न रिव्यू' नामक पत्रिका में 'सत्य की पुकार' शीर्षक से एक लेख लिखा था। इस लेख में टैगोर ने मशीनों की वकालत की थी और चरखा कातने को जबरन हर किसी पर थोपने का विरोध किया था।

सी.एफ. एण्ड्रयूज के अनुसार – ''खादी हमें बेकारी की समस्या का तात्कालिक, व्यावहारिक तथा स्थायी समाधान प्रदान करती है। कृषि की पूरक किसी अन्य उपयुक्त वृत्ति के अभाव में जिसके परिणाम स्वरूप लोगों में दीर्घकालीन भुखमरी है''। खादी के पुनरूद्धार से ही अन्य सम्बद्ध घरेलू उद्योगों का भी पुनरूद्धार हो सकता है। गाँधी के अनुसार ''करोड़ों भूखे लोग आज एक ही कविता की मांग कर रहे हैं – भूख मिटाने

वाली भोजनरूपी कविता की। लेकिन वह उन्हें कोई नहीं दे पा रहा है। उन्हें अपने भोजन स्वयं प्राप्त करना है और वे प्राप्त कर सकते हैं सिर्फ अपने भाल से पसीना बहाकर''। इन श्लोकों में इस लेख द्वारा चरखे का समस्त साहित्य निहित है – उस चरखे का, जिसे चलाना मैं आज के भारत के लिए एक अनिवार्य यज्ञ मानता हूँ। अगर हम अपना वर्तमान ठीक कर लेते हैं, तो हमारे भविष्य की चिन्ता भगवान करेगा ही।[11]

इस प्रकार स्पष्ट है कि खादी के माध्यम से स्वदेशी को सफल बनाने और पुनः स्वराज की प्राप्ति में गाँधी जी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। आजादी के बाद भी यह प्रासंगिक है। तभी तो द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान खादी तथा ग्रामोद्योग की स्थापना खादी और ग्रामोद्योग अधिनियम 1956 के द्वारा हुई। यह लघु, कुटीर एवं मध्यम उपक्रम, भारत सरकार के अधीन है। इसका मुख्यालय मुम्बई में है, जबकि अन्य संभागीय कार्यालय दिल्ली, भोपाल, बगंलुरु, कोलकत्ता और गुवाहटी में स्थित हैं। संभागीय कार्यालयों के अलावा अपने विभिन्न कार्यक्रमों का कार्यान्वयन करने के लिए 28 राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में भी इसका कार्यालय है। भारत जैसे श्रम अधिशेष वाले देश के लिए खादी एवं ग्रामीण उद्योग रोजगार का प्रमुख साधन है। खादी ग्रामीण गरीबों के लिए एक आर्थिक रूप से व्यवहार्य विकल्प बनाता है। कम आय, एवं क्षेत्रीय और ग्रामीण एवं नगरीय असमानताओं के कारण भारत के सन्दर्भ में इसका महत्व और अधिक बढ़ जाता है। खादी ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराकर लोगों को आत्मनिर्भर बनाया है तथा सुदृढ़ ग्रामीण सामाजिक भावना का निर्माण किया है। इस प्रकार आज भी गाँधी जी के सपने को साकार करने का प्रयास किया जा रहा है।

संदर्भ

1. मद्रास में 'स्वदेशी' पर भाषण, 14 फरवरी, 1916
2. D.G. Tendulkar, Mahatma, Vol. VII
3. नवजीवन (गुजरात), 19.6.1927
4. के.सी. श्रीवास्तव, प्राचीन भारत का इतिहास, भाग-एक, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृ. 34
5. ऋग्वेद, 10/130/1
6. ऋग्वेद, 5/47/6
7. अथर्ववेद, 14/2/51
8. गणेशदत्त शर्मा गौड़ 'इन्द्र', खादी का इतिहास, हिन्दी साहित्य मन्दिर, बनारस, 1923, पृ. 39
9. Mearim, Ancient and Medieval India, Vol. I, p.395
10. इनसाक्लोपीडिया आफ ब्रिटेनिका, पृ. 446
11. यंग इण्डिया, 13.10.1921

‘माईगव’ की ई-प्रशासन में भूमिका

उमेश कुमार

lkjk'k% *नागरिकों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता नीतिनिर्माण और उसके कार्यान्वयन में अपने विचार व्यक्त करने की उत्सुकता ने एक समर्पित सोशल मीडिया मंच की अवधारणा को जन्म दिया है। माईगव उसी अवधारणा का परिणाम है जो नागरिकों को उनकी रूचि, और समय की उपलब्धता के अनुसार समान भागीदारी का अवसर प्रदान करता है। इस मंच पर नागरिकों को डिस्कस (चर्चा करने), डू (कार्य करने), और डिसेमिनेट् (प्रसार) 3डी माध्यम से विचारों, सुझावों और जमीनी स्तर पर उनके योगदान के द्वारा उनकी भागीदारी को प्रोत्साहित करना है। ई -शासन तार्किक रूप से ''नागरिक जुड़ाव'' में निहित है। शासन की प्रक्रियाओं को अधिक उत्तरदायी, पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी को बेहतर तरीके से इस्तेमाल किए जाने की जरूरत है। 'माईगव' ने हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, त्रिपुरा, छत्तीसगढ़, झारखंड, नागालैंड, उत्तराखंड, गोवा, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु जैसे 15 राज्यों में राज्य संस्करण भी लांच किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में 'माईगव' (मेरी सरकार) की ई-शासन में भूमिका का वर्णन किया गया है। साथ ही उन पहलुओं को भी उल्लेखित किया गया है जो माईगव को और उपयोगी एवं समावेशी बना सकता है इसी सन्दर्भ में यह सुझाव दिया गया है की 'माईगव' को बिहार राज्य संस्करण भी लांच करना चाहिए। यह बिहार राज्य में जनता को ई-शासन से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है।*

प्रस्तावना

भारत एक लोकतांत्रिक देश है। भारतीय लोकतंत्र, जैसा की संविधान में निहित है न्याय, समानता, स्वतंत्रता, और बंधुत्व के सिद्धांत पर आधारित है। भारतीय जनता अपने प्रतिनिधि के माध्यम से सरकार का निर्माण करती है जो की जनता के प्रति जवाबदेह होती है। हालांकि आजादी के समय से ही सरकार की जवाबदेही सुनिश्चित किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं लेकिन विशाल आबादी, विविध संस्कृति, भाषा,

धर्म, समुदाय और जाति होने के कारण लोकनीतियों के प्रभावशाली क्रियान्वयन में बाधाएं हो रही हैं।

ऐसी समस्याओं के समाधान के लिए लोकनीति के निर्माण एवं प्रशासन में जनता की भागीदारी जरूरी है और ई-शासन के द्वारा जनता और सरकार के बीच स्वस्थ एवं पारदर्शी संवाद को मजबूत बनाया जा सकता है। इसका उदेश्य नागरिकों की सूचना तक पहुँच और उसके उपयोग के माध्यम से सशक्त बनाना है। ई-शासन का अर्थ किसी संगठन चाहे वह निजी अधिकरण हो या नागरिक समाज संगठन (सरकार को छोड़कर) को अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन और संचालन में सहायता के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग करना है। दूसरे शब्दों में, ई-शासन का संबंध लोककल्याण को बढ़ावा देने के लिए सूचना और संचार तकनीकों का उपयोग करने से है। ई-गवर्नेंस नीति-निर्माताओं और नागरिकों के बीच एक दो-तरफा सड़क बनाता है जो प्रक्रिया-केंद्रितता से नागरिक केंद्रितता में बदलाव को सक्षम बनाता है।

ई-गवर्नेंस में जन-भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए एक समर्पित सोशल मीडिया प्लेटफार्म की आवश्यकता को महसूस करते हुए भारत सरकार ने 26 जुलाई 2014 को 'माईगव' (MyGov) को भारत सरकार के नागरिक सहभागिता मंच के रूप में स्थापित किया गया है, जिसका शुभारंभ प्रधानमंत्री नरेंद्रमोदी जी द्वारा किया गया। इस पोर्टल का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को सरकार के साथ जोड़ना तथा राष्ट्र के विकास में हाथ बंटाने के माध्यम के रूप में कार्य करना है। 'माईगव' नागरिकों को अनेक विषयों पर चर्चा एवं विचार-विमर्श में भाग लेने का अवसर देता है तथा अनेक लोगों के साथ विचारों के आदान-प्रदान का मौका देता है। नागरिक इस मंच पर कागजात, केस स्टडी, चित्र, वीडियो और अन्य कार्य योजनाएं अपलोड कर सकते हैं। वे ऐच्छिक रूप से विविध कार्य कर सकते हैं और अपनी प्रविष्टियां जमा करा सकते हैं। विशेषज्ञ और अन्य सदस्य इन कार्यों की समीक्षा करेंगे। अनुमोदित होने पर इन कार्यों की जानकारी उन लोगों को दी जा सकती है जिन्होंने कार्य पूरा किया है तथा माईगव के अन्य सदस्यों को भी इसकी जानकारी दी जा सकती है। राष्ट्रीय सूचना केंद्र-एनआईसी, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग इस पोर्टल का प्रबंधन करेंगे। जो लोग विचार-विमर्श से आगे बढ़कर जमीनी योगदान देना चाहते हैं उनके लिए माई गवर्नमेंट पोर्टल अनेक अवसर देता है। माईगव ने हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, त्रिपुरा, छत्तीसगढ़, झारखंड, नागालैंड, उत्तराखंड, गोवा, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु जैसे 15 राज्यों में राज्य संस्करण भी लांच किया है।

माईगव की ई-प्रशासन में भूमिका

ekbZxo ¼MyGov½ सहभागी शासन और तकनीकी कार्यान्वयन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है जिसका उदेश्य लोगों की भागीदारी के जरिए गुणात्मक परिवर्तन लाना है। जन सहभागिता के मामले में माईगव को महत्वपूर्ण सफलता मिली भी है। प्रमुख

राष्ट्रीय परियोजनाओं के लोगो और टैगलाइन को माईगव के माध्यम से क्राउडसोर्स किया गया है। स्वच्छ भारत के लिए लोगो, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लिए लोगो, डिजिटल इंडिया अभियान के लिए लोगो आदि क्राउडसोर्स से जुड़ी कुछ उल्लेखनीय पहल हैं। माईगव ने समय-समय पर नागरिकों से नीतियों के ड्राफ्ट पर इनपुट भी मांगे हैं, जिनमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति, डेटा सेंटर नीति, डेटा संरक्षण नीति, राष्ट्रीय बंदरगाह नीति, आईआईएम विधेयक आदि प्रमुख हैं। माईगव अक्सर मन की बात, वार्षिक बजट, परीक्षा पे चर्चा और ऐसी कई अन्य पहलों के लिए आइडिया आमंत्रित करता रहता है। भारत सरकार का उद्देष्य नागरिकों के विचारों, सुझावों और जमीनी स्तर पर योगदान के द्वारा उनकी भागीदारी को प्रोत्साहित करना है इसके लिए तीन माध्यम चुने गए हैंः–'चर्चा' (डिस्कस), 'करना'(डू) और 'प्रसार' (डिसेमिनेट)। निम्नलिखित रूप मे इसकी विस्तार से चर्चा की गयी हैः–

डिस्कस (चर्चा करना):– चर्चा अनुभाग नागरिकों को उनकी महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि और सरकार के नीतिगत पहल में सुधार के लिए विषय-आधारित चर्चाओं पर विचार व्यक्त करने में मदद करता है। नागरिक विभिन्न राष्ट्रीय विषयों पर अपनी राय सार्वजनिक रूप से साझा कर सकते हैं साथ ही साथ दूसरे नागरिकों के विचार पर अपनी राय व्यक्त कर सकते हैं। इन चर्चाओं से सरकार के विभिन्न मंत्रालय नीतिगत विषयों में जमीनी रूप से बन रही राय को शामिल कर सकतें हैं। जैसे कि रेल बजट (2015-2016, 2016-17) में नागरिकों के सुझावों को शामिल करना और उनका कार्यान्वयन डिस्कस पोर्टल की सफल परिणति दर्शाता है।

डू (कार्य करना):– इस अनुभाग में नागरिक अपनी रूचि के अनुसार 'ऑनलाइन टास्क' और ऑन-ग्राउंड टास्क' पर कार्य कर सकते हैं। इस अनुभाग में विभिन्न प्रकार के कार्य लगातार चलते रहते हैं जो नागरिकों को सरकार के विभिन्न लोकनीति के कार्यान्वयन में जुड़ने के लिए प्रेरित करतें हैं। 80 समूहों में प्रत्येक माइगव प्लेटफॉर्म पर बहुत सारे कार्य चल रहे हैं। जैसे जल संरक्षण पर कविता लिखने की प्रतियोगिता, वेबसाइट अवलोकन खंड ब्रांड नाम प्रतियोगिता, लोगो डिजाइन प्रतियोगिता, लघु फिल्म प्रतियोगिता, प्रधानमंत्री की विभिन्न वार्ताओं के लिए प्रश्नों को साझा करना जैसे परीक्षा पर चर्चा, युवा संसद, नई शिक्षा नीति के लिए प्रतीक-चिन्ह बनाएं आदि प्रतियोगिताएं शामिल हैं। प्रतियोगिताएं या तो संबंधित विभाग/मंत्रालय के समूह पर आयोजित किया जाता है या इसे माईगव के रचनात्मक कोर्नर के माध्यम से संप्रेषित किया जाता है। राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम (एनएफडीसी), सूचना और प्रसारण मंत्रालय द्वारा आयोजित भारतीय नागरिकों के लिए एक लघु एनिमेशन फिल्म प्रतियोगिता खुली है। प्रविष्टियां केवल 2डी/3डी एनिमेटेड लघु फिल्मों के लिए खुली हैं, जिनमें से प्रत्येक की अवधि अधिकतम तीन मिनट है। प्रतियोगिता का विषय भारतीय स्वतंत्रता के 75 वर्ष है। एनिमेटेड लघु फिल्में हिंदी/अंग्रेजी में प्रतिलेख (शब्दशः) के साथ 22 आधिकारिक भारतीय भाषाओं में से किसी एक में बनाई जा

सकती है। इसी प्रकार संस्कृति मंत्रालय सभी क्षेत्रों के नागरिकों को युवा महोत्सव के लिए एक लोगों डिजाइन करने के लिए आमंत्रित किया गया था। लोगो को युवा महोत्सव मनाने की भावना को प्रतिबिंबित करना चाहिए। (https://www.mygov.in/home/77254/do/)।

माईगव पर ऑनलाइन पोल और सर्वेक्षण भी होते हैं जो नागरिक को विशेष नीतिगत मुद्दों पर अपनी राय रखने का अवसर प्रदान करता है। ऑनलाइन पोल और सर्वेक्षण से सरकार को सरकारी नीतिगत पहलों की जनता के बीच प्रभावशीलता का भी पता है। कई सरकारों ने स्मार्ट सिटी (जैसे बिहार शरीफ, नया रायपुर और क्षेत्र आधारित विकास के लिए गाजियाबाद और चंडीगढ़) मिशन के लिए रीट्रोफिटिंग क्षेत्र की पहचान के लिए माईगव पर पोल करवाया है। इसी प्रकार अपने नगर में शहरी ''चुनौतियों की पहचान करने में सहयोग दें'' सर्वेक्षण का उद्देश्य नगरों में नागरिकों के समक्ष आने वाली प्रमुख शहरी चुनौतियों को समझना है। इस प्रकार माईगव नागरिकों को उनकी रूचि, विशेषज्ञता और समय की उपलब्धता के अनुसार लोकनीति के निर्माण एवं कार्यन्वयन मे भागीदारी को सुगम बनाता है।

डिसेमिनेट (प्रसार करना): वर्गीकृत सूचनाओं को ब्लॉग, वार्ता, न्यूजलेटर्स के माध्यम प्रसारित किया जा रहा है। वार्ता को माईगव पर निर्णय निर्माताओं के साथ संवाद के रूप मे परिभाषित किया गया है। यह नागरिकों को लाइव चैट के माध्यम से सरकार के प्रतिनिधि जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है। यह सुविधा वास्तविक समय विचार और राय को आदान-प्रदान करने का अवसर देती है साथ ही साथ यह सरकारी एजेंसियों और नागरिकों के बीच एक सीधा संबंध स्थापित करता है। यह वरिष्ठ सरकारी अधिकारी, उद्योग विशेषज्ञ, शिक्षाविद्, आदि को नागरिकों के साथ लाइव वीडियो बातचीत की सुविधा प्रदान करता है।

माईगव ब्लॉग सरकारी पहल और गतिविधियों की अपडेट, अनुभव और माईगव इंपैक्ट प्रदान करता है जो नागरिकों को अद्यतित रहने में मदद करता हैं। ब्लॉगों के माध्यम से विभिन्न प्रतियोगिताओं के परिणाम, नीति निर्माण आदि का भी प्रचार-प्रसार किया जाता है। माईगव साप्ताहिक, पाक्षिक प्रकाशित समाचार पत्रों के माध्यम संबंधित समाचारों और सूचनाओं का प्रसार भी करता है। ये समाचार पत्र अंग्रेजी और हिंदी में प्रकाशित होते हैं।

माईगव ने माईगॉव माइक्रो-साइट्स की मदद से भारत सरकार के महत्वपूर्ण कार्यकर्मों की ऑनलाइन उपस्थिति दर्ज की है, 'स्वच्छ भारत अभियान', 'बदलते भारत', 'मेरी सरकार' इनोवेशन' और 'ई-ग्रीटिंग्स' कुछ प्रमुख माइक्रो-साइट्स हैं।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य माइगव की ई-शासन में भूमिका का पता करना है। मोटे तौर पर अध्ययन की प्रकृति खोजपूर्ण है और डेटा एकत्र करने की तकनीकों में

वेबसाइट अवलोकन और द्वितीयक डेटा जैसे कि सरकारी रिपोर्ट और अकादमिक प्रकाशन के संदर्भ पर निर्भर करता है।

बिहार में माईगव की आवश्यकता एवं सम्बंधित सुझाव

जिस प्रकार माईगव केन्द्रीय स्तर पर तथा अन्य राज्यों मे विकास को बढ़ावा देने के लिए सक्रिय रूप से कार्यरत् है उसी प्रकार आवश्यकता है की इस ICT के दौर मे माईगव बिहार जैसे पोर्टल को अपनाया जाए तथा विकास को गतिशीलता प्रदान की जा सके।

इस सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किए जा सकते हैंः–

- इसके द्वारा बिहार में चल रहे विभिन्न योजनाओं को एक प्लेटफार्म पर लाकर नागरिकों को सभी योजनाओं से जोड़ा जा सकता है।
- इस प्लेटफार्म की सहायता से बिहार की जनता को जननीति के निर्माण और कार्यान्वयन में भागीदारी के लिए उन्मुख किया जा सकता है।
- इस प्लेटफार्म का लाभ अधिक से अधिक लोगों तक पहुचाने के लिए जनजागरूकता बढ़ाने के साथ तकनीकी क्षमता को भी बढ़ाने की आवश्यकता है।
- इस पोर्टल के माध्यम से योजनाओं का लाभ जनता तक त्वरित रूप से पहुँचाया जा सकता है और लोकतंत्र के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता मिल सकती है।

निष्कर्ष

माईगव ने अतीत में विभिन्न महत्वपूर्ण सरकारी नीतियों के निर्माण के आधार के रूप में लोकप्रिय नागरिक राय का सफलतापूर्वक योगदान दिया है। ''नई शिक्षा नीति'' में योगदान देने से लेकर रेल बजट और केंद्रीय बजट दोनों के लिए विचारों को क्राउडसोर्सिंग करने तक, माईगव ने आधुनिक समय में एक बुनियादी 'ई-सरकार' को एक व्यापक, समग्र और सुचारू ई-गवर्नेंस में परिवर्तित करके अपनी प्रासंगिकता साबित की है। सरकार की ऑनलाइन उपस्थिति स्थापित करने के लिए कई डिजिटल पहलें की गई हैं लेकिन वे मुख्य रूप से केवल सेवा वितरण घटक तक ही सीमित थीं। हालाँकि, माईगव जैसे मंच की स्थापना के साथ, विभिन्न सरकारी विभागों और मंत्रालयों के प्रशासक नीति निर्माण से पहले 'जनता की आवाज' पर विचार करने में सक्षम हैं। शासन की प्रक्रियाओं में नागरिक भागीदारी का आह्वान करने के लिए एक स्वदेशी सोशल मीडिया की आवश्यकता स्थापित होने के बाद, यह अपनी रणनीतियों को विकसित करने के लिए जमीन तैयार करता है ताकि यह भविष्य में प्रत्याशित सभी अप्रत्याशित परिवर्तनों का सामना कर सके।

संदर्भ

1. Santap Sanhari Mishra (2020) Testing the antecedents to e&democracy towards citizens* happiness: a structural equation modelling approach to 'MyGov' initiative, India, International Journal of Public Administration, 43:15, 1293-1303, DOI: 10.1080/01900692.2019.1669051
2. http://yojana.gov.in/hindi/topstory_detailsjune16-1.asp
3. eksfgr Hkêkpk;Z] yksd ç'kklu ds u;s vk;ke] 2014 i'-&484
4. https://www.mygov.in/[9]
5. https://www.mygov.in/hi/simple-pag
6. https://www.mygov.in/
7. https://www.mygov.in/home/do/
8. https://www.mygov.in/hi/home.talk
9. https://dl.acm.org/doi/abs/10.1145/2888451.2888463
10. Malhotra, Charru and Sharma, Abhinav and Agarwal, Nishtha and Malhotra, Ishita, 2019, Review of Digital Citizen Engagement (DCE) Platform: A Case Study of MyGov of Government of India, 2019.
11. Cooper, T.L., 2005, Civic engagement in the twenty-first century: Toward a "scholarly and practical agenda. Public Administration Review.
12. Angela Susan Mathew, Transition From E&Participation To Engagement on Governmentinitiated Digital Platforms: A Qualitative Study of Mygov-in
13. Tech, I.T. (2020). WhatsApp and MyGov launch official coronavirus and Covid-19 alert service for India, here is how you can use it.
14. COVID, I. 19 [Internet]. MyGov. in. 2020 [cited 2020 May 26].

रक्षा और कृषि क्षेत्रों में आत्मनिर्भर भारत के बढ़ते कदम

शीला कुमारी

lkjk'k *वैश्विक स्तर पर सशक्तिकरण के लिए किसी भी राष्ट्र के लिए रक्षा और कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की बड़ी भूमिका होती है। इन दोनों क्षेत्रों में आत्मनिर्भर देश विश्व के अन्य राष्ट्रों को भी अपने प्रभाव क्षेत्र में लेने की क्षमता रखता है। ये दोनों क्षेत्र एक-दूसरे से जुड़े होने के बावजूद एक-दूसरे के पूरक भी हैं। सीमाओं पर सैनिकों के लिए अत्याधुनिक हथियारों का उतना ही महत्त्व है जितना महत्त्व कृषि के उत्पादन क्षेत्र में स्वावलंबन का है। इस आलेख में रक्षा और कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर भारत के बढ़ते कदम का विश्लेषण कर यह बताया गया है कि आज 2022 का भारत स्वतंत्रता के बाद के कई दशकों तक इन दोनों क्षेत्रों में दूसरे देशों पर निर्भर रहने वाला भारत नहीं है। रक्षा और कृषि क्षेत्रों में हर रोज स्वावलंबी होते भारत का संक्षिप्त वर्णन इस आलेख में किया गया है। यह बताया गया है कि रक्षा उत्पादन में निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों की बढ़ती सहभागिता से देश विश्व बाजार में निर्यात करने लायक उत्पादन करने में सक्षम होगा। इसी प्रकार, कृषि क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर भारत के बढ़ते कदम का विश्लेषण भी इस आलेख में किया गया है। कृषि क्षेत्र में आधुनिक प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल कर भारत आज गेहूँ, धान, दलहन, गन्ना, दूध और कपास जैसे अनेक फसलों के शीर्ष उत्पादकों में सम्मिलित हो गया है। इसके चलते भारत खाद्यान्न के क्षेत्र में स्वावलंबी होकर विश्व के अधिकांश देशों की भी सहायता कर रहा है।*

भूमिका

किसी भी देश के विकास की पहचान उसकी उन्नत कृषि और रक्षा उत्पादों में आत्मनिर्भरता से होती है। इन दोनों क्षेत्रों में आत्मनिर्भर होकर कोई भी देश वैश्विक स्तर पर अपने प्रभाव में विस्तार करता है। स्वतंत्रता के बाद से ही देश को रक्षा उद्योगों में आत्मनिर्भर बनाने का हरसंभव प्रयास होता रहा और इसके लिए 1958 में *रक्षा*

शोध और विकास संगठन (DRDO) की स्थापना हुई। तब से लेकर 2021 तक भारत रक्षा उद्योग में आत्मनिर्भर बनने के मार्ग पर चल रहा है। इसी प्रकार, कृषि उत्पादन में भी आज का भारत बहुत आगे है और कई कृषि उत्पादों में वैश्विक स्तर पर वह शीर्ष बिंदु पर है। पिछले 75 वर्षों में देश में आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी की सहायता से खाद्यान्न उत्पादन में कई गुणा वृद्धि हुई है। खाद्यान्न का उत्पादन जहाँ 1950 में 50 मिलियन टन था, वहाँ वर्ष 2013-14 में बढ़कर 264 मिलियन टन हो गया। किसी समय में आयात पर निर्भर रहने वाला भारत आज (2020-21) 301 मिलियन टन खाद्यान्नों का उत्पादन कर रहा है। गेहूँ का उत्पादन भी 2013-14 में 94 मिलियन टन की तुलना में 2020-21 में 108 मिलियन टन हो गया है। यह भारत के कृषि क्षेत्र में हुए विकास का ही परिणाम है कि भारत, गेहूँ, धान, दलहन, गन्ना और कपास जैसे अनेक फसलों के शीर्ष उत्पादकों में सम्मिलित हो गया है। इस प्रकार सैन्य उत्पाद और कृषि क्षेत्रों में भारत के बढ़ते कदम यह प्रमाणित करते हैं कि आने वाले दिनों में भारत अपने विकास की बुलंदियों को छूएगा। कृषि और रक्षा क्षेत्रों में भारत के बढ़ते कदम पूर्व प्रधानमंत्री *लाल बहादुर शास्त्री* के *'जय-जवान जय-किसान'* के नारे को चरितार्थ करता है। जो देश कृषि और रक्षा क्षेत्र में स्वावलंबी हो गया, वैश्विक स्तर पर उसकी राष्ट्रीय शक्ति के फैलाव को रोका नहीं जा सकता है। ये दो ऐसे क्षेत्र हैं जिनकी उपलब्धियों पर कोई भी देश गर्व अनुभव करते हुए अपने बढ़ते वर्चस्व की झांकी पेश करता है।

रक्षा उद्योग में आत्मनिर्भरता

वैश्विक स्तर पर बड़ी शक्ति बनने की आकांक्षा रखने वाले किसी भी देश के लिए अर्थव्यवस्था और रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की कोशिश करनी चाहिए।[1] आज जब देश को आत्मनिर्भर बनने की पहल हो रही है, तब यह आवश्यक है कि रक्षा क्षेत्र में भी आत्मनिर्भरता हासिल की जाए। कोई भी देश वास्तविक रूप में महाशक्ति तभी बनता है, जब वह अपनी रक्षा जरूरतों की पूर्ति अपने स्रोतों से करता है।[2] रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की दिशा में भारत के बढ़ते कदम का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि *'सोसाइटी ऑफ इंडियन डिफेंस मैन्यूफैक्चर्स'* (Society of Indian Defence Manufacturs) के सदस्यों की संख्या आज देश में 500 से अधिक हो गई है और विगत सात वर्षों में भारत का रक्षा निर्यात भी 38,000 रुपये का आँकड़ा पार कर गया है।[3] उल्लेखनीय है कि देश की विदेशी मुद्रा का एक बड़ा हिस्सा रक्षा उपकरणों की खरीद में खर्च होता है। यदि देश में ही अधिकाधिक रक्षा उत्पादों के निर्माण पर बल दिया जाए तो यह देश हित में होगा। यह इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि कई बार काफी विदेशी मुद्रा खर्च करने के बावजूद हमारी सेनाओं को आवश्यक रक्षा सामग्री समय पर उपलब्ध नहीं हो पाती है। यह भी सही है कि *मोदी सरकार* के कार्यकाल में रक्षा सौदों को अंतिम रूप देने का काम कहीं और अधिक तत्परता से हो रहा है,

लेकिन आज की आवश्यकता रक्षा सामग्री का आयातक नहीं, बल्कि निर्यातक बनना है। फिलहाल भारत रक्षा सामग्री का निर्यात करने वाले शीर्ष 20 देशों की सूची से बाहर है। ऐसी स्थिति में रक्षा क्षेत्र में भारत के बढ़ते कदम इतना प्रभावी हो कि अगले एक-डेढ़ दशक में भारत ऐसे शीर्ष 10 देशों में स्थान बनाकर रक्षा उत्पादों में अपना निर्यात बढ़ाए और यह तभी संभव होगा जब भारत मिसाइलों की भाँति न सिर्फ विश्व स्तरीय लड़ाकू विमान, टैंक तथा पनडुब्बियाँ बनाने में महारत हासिल करे, वरन छोटे हथियारों के निर्माण में भी दक्ष हो। 18 दिसंबर 2021 को भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग महासंघ (फिक्की) (Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry-FICCI) के वार्षिक सम्मेलन को संबोधित करते हुए रक्षा मंत्री *राजनाथ सिंह* ने कहा कि रूस, अमेरिका, फ्रांस और अपने अन्य सहयोगी देशों को यह स्पष्ट रूप से बता दिया गया है कि भारत अब रक्षा उत्पादों को आयात करने के बदले उन्हें स्वयं तैयार करेगा। उन्होंने कहा, ''हमने हर मित्र देश से कहा है कि हम देश की सुरक्षा को ध्यान रखते हुए भारत में ही सैन्य मंच, हथियार और गोला-बारूद का उत्पादन करना चाहते हैं। सैन्य उपकरण बनाने वाले देशों को आह्वान करते हुए उन्होंने कहा, *''कम मेक इन इंडिया, कम मेक फॉर इंडिया* और *कम मेक फॉर द वर्ल्ड''*।[4] रक्षा मंत्री के इस संदेश से स्पष्ट है कि रक्षा क्षेत्र के लिए 'मेक इन इंडिया' देश की प्राथमिकता है। रक्षा उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए ही सरकार ने 209 सैन्य उपकरणों का आयात नहीं करने का निर्णय लिया है।[5]

रक्षा विनिर्माण में आत्मनिर्भर बनाने का उद्देश्य

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विचार में रक्षा विनिर्माण में देश को आत्मनिर्भर बनाने का उद्देश्य वैश्विक अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता के लिए भारत को सक्षम बनाकर विश्व में शांति स्थापित करना है। भारत में अपने कई मित्र देशों को रक्षा उपकरणों की आपूर्ति करने वाला भरोसेमंद देश बन सकने की क्षमता है। मोदी सरकार का उद्देश्य रक्षा उत्पादन बढ़ाकर नई प्रौद्योगिकी का विकास करना और निजी क्षेत्र को महत्त्वपूर्ण भूमिका देना है। रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने के मार्ग में कोई बाधा उत्पन्न न हो, इसे ध्यान में रखते हुए सरकार ने *लाइसेंस प्रक्रिया* को बेहतर बनाकर समान अवसर उपलब्ध कराने और *निर्यात प्रक्रिया* का सरलीकरण जैसे कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है। *रक्षा प्रमुख* की नियुक्ति से तीनों सेनाओं के बीच तालमेल बेहतर हुआ है जिससे रक्षा खरीद तेज करने में मदद मिली है।

भारत को रक्षा विनिर्माण केंद्र बनाने की प्रतिबद्धता, देश की *रक्षा उत्पादन नीति 2018* के मसौदे में भी परिलक्षित होती जिसके अंतर्गत 2025 तक एक लाख 70 हजार करोड़ के उत्पादन तथा 35000 करोड़ के निर्यात कारोबार का लक्ष्य बनाया गया है।[6] इस नीति के अंतर्गत भारत को अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी और रक्षा विनिर्माण के शीर्ष पाँच वैश्विक उत्पादकों में सम्मिलित करने का लक्ष्य है।

रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने का प्रयास

1950 के दशक से ही भारत को रक्षा उद्योग में आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास चलता रहा। इसके लिए 1958 में *रक्षा शोध एवं विकास संगठन* (DRDO) का गठन हुआ। इसके साथ ही *ऑर्डिनेंस फैक्टरी बोर्ड* के तहत 2020 तक 41 आयुध कारखानों का निर्माण हुआ। आज लड़ाकू विमान, मिसाइल और युद्ध पोत बनाने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के 8 उपक्रम (डीपीएसयू) होने के बावजूद रक्षा साज-सामानों के निर्यात के बजाय आयात ही होता रहा। 2014-18 के दौरान भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा हथियार आयातक देश था। रक्षा क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने की आवश्यकता *कारगिल युद्ध* के बाद महसूस की गई और भारत में ही रक्षा उद्योग को विकसित करने की बात कही गई। इसके बावजूद, इस दिशा में कोई विशेष प्रगति दर्ज नहीं की जा सकी। रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता का प्रयास एक सराहनीय पहल है जिससे भारतीय सेनाएँ न सिर्फ विदेशी हथियारों पर अपनी निर्भरता समाप्त करेंगी वरन् युद्ध के दौरान किसी देश द्वारा शस्त्र प्रणालियों की आपूर्ति रोक देने के खतरे से भी बची रहेगी। इस नीति से भारत की आत्मनिर्भरता की धारणा मूर्त तो होगी ही, भारत की अर्थव्यवस्था का भी विस्तार होगा जिससे लाखों व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। रक्षा क्षेत्र में भारत के बढ़ते कदम का ही परिणाम है कि भारतीय मिसाइल वैज्ञानिकों ने पश्चिमी मुल्कों द्वारा लगाए गए सभी प्रतिबंधों को दूर करते हुए देश को *अग्नि, पृथ्वी, आकाश, निर्भय, ब्रह्मोस, धनुष, के-4* और *के-15* जैसी मिसाइलें उपलब्ध कराई हैं। स्वदेश निर्मित *अग्नि* जैसी बैलिस्टिक मिसाइलें परमाणु बमों से भी लैस हो सकती हैं और यह इसी का परिणाम है कि भारतीय सेनाएँ आज आक्रामक चीन के सामने डँट कर खड़ी हैं।

रक्षा उत्पादों में रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (DRDO) का योगदान

रक्षा उत्पादों में आत्मनिर्भरता के लिए *रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन* ने (DRDO) पिछले एक वर्ष में देश के लिए निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण प्रौद्योगिकी उत्पाद विकसित किए है–

1- **,Vh-Vd felkby gfyuk vkj /kokL= dk ijh{k.k&** देश की पश्चिमी सीमा पर पाकिस्तान द्वारा आतंकियों की घुसपैठ और चीन के साथ सीमा विवाद को ध्यान में रखते हुए हेलिना टैंक-रोधी मिसाइलों का परीक्षण भारतीय सेना और भारतीय वायुसेना के संयुक्त यूज़र परीक्षणों के दौरान किया गया। हेलिना (आर्मी वर्जन) और ध्रुवास्त्र (एयरफोर्स वर्जन) के लिए ज्वाइंट यूज़र ट्रायल एडवास्ड लाइट हेलिकॉप्टर (ALH) प्लेटफॉर्म से रेगिस्तान रेंज में किया गया। यह मिसाइल पूरी तरह से स्वदेश निर्मित है।

2- **vkdk'k-,uth ¼U;ı tuj'ku½ felkby dk igyk lQy i{ki.k&**

रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन द्वारा 25 जनवरी 2021 को ओडिशा के तट से दूर एकीकृत परीक्षण रेंज से इस मिसाइल का पहला सफल प्रक्षेपण किया गया। *आकाश-एनजी* नई पीढ़ी की सतह से हवा में मार करने वाली स्वदेशी मिसाइल है। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने 26 दिसंबर 2021 को लखनऊ में *ब्रह्मोस मिसाइल निर्माण इकाई* का शिलान्यास करते हुए कहा, ''हम ब्रह्मोस मिसाइल देश की धरती पर इसलिए बनाना चाहते हैं ताकि हमारे पास ऐसी ताकत हो कि दुनिया का कोई देश भारत की तरफ आँख दिखाने की हिम्मत न कर सके। रक्षा मंत्री ने कहा कि ब्रह्मोस का नाम भारत की ब्रह्मपुत्र और रूस की मोस्कावा नदी से मिलकर बना है।''[7] उल्लेखनीय है कि भारत ने 20 जनवरी 2022 को सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल *ब्रह्मोस* के एक और नए संस्करण का सफल परीक्षण बालेश्वर के चांदीपुर परीक्षण रेंज से किया। यह मिसाइल कई अत्याधुनिक तकनीक से लैस है। 11 जनवरी 2022 को भी *डीआरडीओ* ने *ब्रह्मोस* के समुद्री नौसैनिक संस्करण का परीक्षण किया था। *ब्रह्मोस* मिसाइल ध्वनि की गति से लगभग तीन गुना अधिक तेज गति से उड़ान भरती है।[8]

3- LekV ,Vh ,;jQhYM oiu ½SAAW½ dk ijh{k.k& MhvkjMhvk द्वारा विकसित यह भारतीय हॉक-एमके 132 से निकाला गया प्रथम स्मार्ट अस्त्र है जो 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' के बढ़ते कदम का प्रतीक है। इसकी मारक क्षमता 100 किमी है, अर्थात हमारे लड़ाकू विमान काफी ऊँचाई से दुश्मन के अड्डों को ध्वस्त कर सकते हैं।

4- ,Vh lVykbV ½ASAT½ dk ijh{k.k& MhvkjMhvk द्वारा अंतरिक्ष में मार करने वाली **,Vh lVykbV feslby** के सफल परीक्षण का स्वयं प्रधानमंत्री **ujsUnz eksnh** ने राष्ट्र के नाम संबोधन में घोषणा की थी। इस उपलब्धि के साथ भारत दुनिया का चौथा ऐसा देश बन गया जिसके पास अंतरिक्ष में मार करने वाली मिसाइल उपलब्ध है। उल्लेखनीय है कि *मिशन-शक्ति* भारत का पहला एंटी सैटेलाइट मिसाइल टेस्ट था जिसका 27 मार्च 2019 को ओडिशा के डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम द्वीप से सफलतापूर्वक संचालन किया गया था।[9]

5- ekVj ckbd ,cqysal ^jf{kr*& *डी आर डी ओ* द्वारा *सी आर पी एफ* को सौंपी गई मोटर बाइक एंबुलेंस 'रक्षिता' अपनी कार्यक्षमता और एकीकृत आपातकालीन चिकित्सा सहायता प्रणाली के चलते चार-पहिया एंबुलेंस की तुलना में तेजी से रोगियों के लिए एक चिकित्सा आपातकालीन आवश्यकता उपलब्ध करा सकती है।

6- ,e vkj lse dk lQy ijh{k.k& *रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन* ने

आसमान में दुश्मन के लड़ाकू जेट, हेलीकॉप्टर और ड्रोन को मारने के लिए *मीडियम रेंज सर्फेस टू एयर मिसाइल* (एमआरसैम) का पहला सफल परीक्षण 23 दिसंबर 2020 को किया। थल सेना के लिए निर्मित इसकी मारक क्षमता करीब 100 किमी है।

7- **tkbV opj ikVfDVo dkckbu&** एक मिनट में 700 गोलियाँ दागने वाली इस कार्बाइन के निर्माण से *सीआरपीएफ* और *बीएसएफ* की तरह राज्य की केंद्रीय सशस्त्र पुलिस बलों (सीएपीएफ) के शस्त्रागार का आधुनिकीकरण करने में मदद मिलेगी।

8- **fiukdk jkdV i.kkyh dk lQy ijh{k.k fd;k&** 4 नवंबर 2020 को *डीआरडीओ* ने यह सफल परीक्षण ओडिशा के तट पर चांदीपुर एकीकृत परीक्षण रेंज से किया। यह रॉकेट अत्याधुनिक दिशासूचक प्रणाली से लैस है जिसके चलते यह सटीकता से लक्ष्य की पहचान कर उस पर निशाना साधता है।

9- **Lon'kh 9 feeh e'khu fiLVy ^vLeh* ¼Asmi½&** इस पिस्तौल को संयुक्त रूप से **MhvkjMhvk** तथा भारतीय सेना द्वारा विकसित किया गया है। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार द्वारा 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' की घोषणा के सिर्फ चार महीने के अंदर ही इस पिस्तौल का विकास और निर्माण किया गया है।

10- **,Vh jfM,'ku felkby :ne dk ijh{k.k&** यह मिसाइल दुश्मन के क्षेत्र में लगे सुरक्षा उपकरणों को निष्क्रिय करती है। रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन के साथ मिलकर *भारत डायनामिक लिमिटेड* और *भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड* ने इसे तैयार किया है।

11- **gkbijlkfud felkby rduhd dk ijh{k.k&** यह मिसाइल ध्वनि की गति से छह गुना तेज गति से दूरी तय करने में सक्षम है। इसके सफल परीक्षण से अमेरिका, रूस और चीन के बाद भारत चौथा ऐसा देश बन गया है जिसने स्वयं हाइपरसोनिक तकनीक विकसित कर ली है।

12- **,;j bfMiMV ikiY'ku ¼AIP½ ekM;y dk fodkl&** *डीआरडीओ* के *नेवल मैटेरियल रिसर्च लैब* द्वारा विकसित एयर इंडिपेंडेंट प्रोपल्शन (AIP)[10] मॉड्यूल का इस्तेमाल सबमरीन करंज में किया गया है जिससे लंबी दूरी वाले मिशन से ऑक्सीजन लेने के लिए सतह पर आने की जरूरत नहीं पड़ेगी। 5 अक्टूबर 2020 को सुपरसोनिक मिसाइल *असिस्टेड रिलीज ऑफ टॉरपीडो* का सफल परीक्षण किया गया जिसके चलते अब भारत दुश्मन की पनडुब्बियों पर नजर रख सकेगा।

13- Hkkjr dk nwljk ,;jØk¶V vkb,u,l foØkr& भारतीय नौसेना के लिए तैयार *आईएनएस विक्रांत* दूसरा एयरक्राफ्ट कैरियर पूरी तरह से देश में निर्मित और अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस है। इसके भारतीय नौसेना में शामिल होने से भारत की समुद्री सुरक्षा के बढ़ने के साथ-साथ दुश्मन देशों के हौसले भी पस्त होंगे। फिलहाल इसका समुद्र में दूसरा ट्रायल चल रहा है जिसका निर्माण *कोचिन शिपयार्ड लिमिटेड* ने किया है। उल्लेखनीय है कि भारत का पहला विमानवाहक युद्धपोत भी *आईएनएस विक्रांत* के नाम पर ही था।[11]

हथियारों से लैस ड्रोन का देश में निर्माण

रक्षा विशेषज्ञ और *डीआरडीओ* के पूर्व वैज्ञानिक डॉ. रवि गुप्ता ने कहा कि *डीआरडीओ* द्वारा विकसित *रुस्तम जी* अभी भी हथियारों को ले जाने में सक्षम है। इतना ही नहीं, भारत के पास *ड्रोन* में इस्तेमाल होने वाली तमाम तकनीक मौजूद है। इनमें से काफी तकनीकों को *रुस्तम जी* में इस्तेमाल भी किया जा रहा है। अब वह समय दूर नहीं जब देश में सशस्त्र ड्रोन का निर्माण शुरू हो जाएगा।[12] इसके लिए *रोडमैप* तैयार कर लिया गया है। *रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन* इसे तीनों सेनाओं के लिए निर्मित करेगा। उल्लेखनीय है कि फिलहाल तत्कालीक जरूरतों के लिए भारत 30 सशस्त्र ड्रोन अमेरिका से खरीदने जा रहा है। *डीआरडीओ* की कई प्रयोगशलाएँ इस पर काम शुरू कर चुकी हैं। उसके सूत्रों के अनुसार अगले 10 वर्षों में देशांतर्गत सशस्त्र ड्रोन तैयार कर लिए जाएँगे।[13]

रक्षा उत्पादन में निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में बढ़ती भागीदारी

रक्षा उत्पादन में राष्ट्रीय संकल्प से आगे बढ़ने के लिए निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों की भूमिका आवश्यक है। रक्षा उत्पादन में निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों की सहभागिता से भारत विश्व बाजार में निर्यात करने लायक उत्पादन करने में जहाँ सक्षम होगा, वहाँ विदेशी हथियार कंपनियाँ भी भारतीय सेनाओं के लिए भारत में उत्पादन करने के लिए निजी क्षेत्र से साझेदारी करेंगी। इससे 'आत्मनिर्भर भारत अभियान' को गति मिलेगी। इसे ध्यान में रखते हुए सरकार ने रक्षा उत्पादन में सरकार के साथ निजी क्षेत्र को भी साक्षेदार बनाने का निर्णय लिया है और रक्षा क्षेत्र में 74 प्रतिशत तक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) के स्वचालित मार्ग का आकर्षक प्रस्ताव वैश्विक रक्षा कंपनियों के समक्ष पेश किया है। 6 मार्च 2020 को *वैश्विक व्यापार शिखर सम्मेलन* (Global Business Summit) को संबोधित करते हुए रक्षा मंत्री **jktukFk flag** ने 2024 तक 5000 अरब डॉलर की अर्थव्यवस्था प्राप्त करने के लिए रक्षा विनिर्माण में निजी क्षेत्रों की भागीदारी बढ़ाने का आह्वान किया।[14] उन्होंने कहा कि 2025 तक विनिर्माण क्षेत्र के 1000 अरब डॉलर की हो जाने की क्षमता है। सरकार डिजिटल

अर्थव्यवस्था और मानव पूँजी को बढ़ावा देने की नीतियों के साथ ही अपना महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम 'मेक इन इंडिया' के माध्यम से इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है। रक्षा उद्योग में उभरते अवसरों का भरपूर लाभ उठाने का अनुरोध करते हुए उन्होंने कहा कि रक्षा क्षेत्र में निजी निवेश की चुनौतियों से निपटने के लिए सार्वजनिक उपक्रमों और रक्षा उद्योग के बीच बेहतर समन्वय के लिए कई ढांचागत सुधार किए गए हैं। उन्होंने इस संदर्भ में 'मेक इन इंडिया' के तहत उठाए गए कई कदमों का उल्लेख करते हुए बताया कि इसके तहत घरेलू रक्षा उद्योग को रक्षा क्षेत्र में टेंडर हासिल करने, औद्योगिक लाइसेंस हासिल करने की प्रक्रिया आसान बनाने, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाने, रक्षा निर्यात को आसान बनाने, रक्षा आफसेट नीति को सुव्यवस्थित बनाने, परीक्षण और प्रयोग की सरकारी सुविधाओं को निजी क्षेत्र के लिए खोलने, दो रक्षा कॉरिडोर बनाने तथा स्टार्टअप्स और लघु एवं मझौले उद्यमों के माध्यम से नवाचार को बढ़ावा देने जैसे उपाय किए गए हैं। उन्होंने यह भी कहा कि ''रक्षा अनुसंधान एवं विकास के क्षेत्र में निजी कंपनियों की पैठ बनाने में वक्त लगेगा। ऐसी स्थिति में उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए हमने *डीआरडीओ* के माध्यम से निशुल्क प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की सुविधा, 450 पेंटेटों तक निशुल्क पहुँच, परीक्षण और प्रयोग की सरकारी सुविधाओं का फायदा उठाने तथा दस करोड़ रूपये तक की आर्थिक मदद देने जैसे कदम उठाए हैं। उद्योगों के साथ प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए लाइसेंस हासिल करने के 900 से ज्यादा समझौते किए गए हैं''।[15]

स्पष्ट है कि सरकार ने रक्षा उत्पादों में निजी क्षेत्रों की भागीदारी सुनिश्चित की है। रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता निजी क्षेत्र के सहयोग से ही संभव है। देश के अंतर्गत निजी क्षेत्र की कुछ कंपनियाँ बहुत अच्छा कर रही हैं और उन्हें बड़े ऑर्डर भी दिए जा रहे हैं। उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 7 दिसंबर 2021 को *झंडा दिवस* के अवसर पर स्वदेशी रूप से तैयार एवं विकसित अनेक उपकरणों को सशस्त्र बल सेवा प्रमुखों को सौंपा। देशी निजी क्षेत्र और बाहर की कंपनियों के आने से निवेश, शोध, तकनीक आदि से जुड़ी कई समस्याओं का समाधान होगा। जिस प्रकार से फ्रांस, अमेरिका आदि देशों में रक्षा और एयरोस्पेस उत्पादन को आगे बढ़ाने में निजी क्षेत्र की मुख्य भूमिका रही है, वैसा हमारे देश में भी संभव है। इस संबंध में सार्वजनिक उपक्रमों में सुधार को आगे बढ़ाने के साथ निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के उपाय भी करने होंगे।[16]

भारत का रक्षा परिदृश्य

2017-18 में भारत का रक्षा निर्यात जहाँ 0.66 अरब अमेरिकी डॉलर था, वहाँ 2018-19 में यह बढ़कर 1.47 अरब अमेरिकी डॉलर हो गया। 2018-19 के निर्यात में रक्षा क्षेत्र के 8 उपकरणों (DPSU) और 41 आयुद्ध कंपनियों (OF) का योगदान 800 करोड़ रुपये का था जो कुल रक्षा निर्यात का 7.6 प्रतिशत है। सरकार द्वारा वित्तीय

वर्ष 2019 में भारतीय सैन्य बल के लिए 4,31,011 रूपये करोड़ अर्थात 60 बिलियन डॉलर का बजटीय प्रावधान किया गया। 2020 में भारत में सैन्य बल के लिए बजट 70 मिलियन अमेरिकी डॉलर होने से वह अमेरिका और चीन के बाद सबसे अधिक बजटीय प्रावधान रखने वाला देश बन गया।

कृषि उत्पादन में आत्मनिर्भरता

स्वतंत्रता के बाद देश में आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी जैसे– संकर बीज, रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक व नवीनतम कृषि यंत्रों के सहयोग से देश के खाद्यान्न उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुई है। वर्ष 1950 में खाद्यान्न का उत्पादन जहाँ 50 मिलियन टन था, वहीं वर्ष 2013-14 में बढ़कर 264 मिलियन टन हो गया है। स्वतंत्रता के बाद कई दशकों तक खाद्यान्न आयात पर निर्भर रहने वाला भारत 2020-21 में 301 मिलियन खाद्यान्नों का उत्पादन कर रहा हैं। देश गेहूँ, धान, दलहन, गन्ना और कपास जैसी अनेक फसलों के शीर्ष के वैश्विक उत्पादकों में शामिल है। पूरे विश्व में दलहन के 25 प्रतिशत, धान के 22 प्रतिशत और गेहूँ के 13 प्रतिशत हिस्से का उत्पादन आज भारत में हो रहा है। पिछले कई वर्षों से भारत कपास का सबसे बड़ा निर्यातक देश है। देश की दिनोंदिन बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की सतत आपूर्ति के लिए उपलब्ध सीमित संसाधनों का कुशलतापूर्वक उपयोग करना आवश्यक हो गया है। निम्नलिखित कुछ प्रमुख उत्पादनों में भारत आत्मनिर्भर होकर दूसरे देशों को भी सहायता कर रहा हैः–

1- /kku mRiknu e vkRefuHkZj

प्राचीन काल से ही भारत धान के लिए अग्रणी उत्पादक देश रहा है। सरकार ने चावल का उत्पादन वर्ष 2020-21 में 11.96 करोड़ टन करने का लक्ष्य रखा है। उल्लेखनीय है कि *बासमती* चावल का व्यापार सूदुर देशों तक फैला हुआ है और यह भारत की समृद्धि का प्रतीक है। अंतरराष्ट्रीय बाजार में भारत बासमती धान का मुख्य उत्पादक और अग्रणीय निर्यातक है। वर्ष 2018-19 में बासमती धान से देश के निर्यात आय 25,000 करोड़ में आँकी गई थी।

2- xgw mRiknu e vkRefuHkZj

संपूर्ण भारत में धान के बाद गेहूँ दूसरी प्रमुख खाद्यान्न फसल है। गेहूँ उत्पादक देशों में पूरे विश्व में भारत का चीन के बाद दूसरा स्थान है। भारत विश्व भर में गेहूँ के 13 प्रतिशत हिस्से का उत्पादन करता है। भारत सरकार ने गेहूँ का उत्पादन वर्ष 2020-21 में 10.8 करोड़ टन करने का लक्ष्य रखा है। हरियाणा के करनाल में स्थित *गेहूँ अनुसंधान निदेशालय*[17] के अनुसार सन् 2030 तक भारत की दिनोंदिन बढ़ रही जनसंख्या को खिलाने के लिए गेहूँ उत्पादन को 110 मिलियन टन तक वृद्धि करना होगा।

3- nygu mRiknu e vkRefuHkjrk dk iz;kl

वैश्विक स्तर पर भारत दालों का सबसे बड़ा उत्पादक, आयातक और उपभोक्ता है। भारत में संतुलित भोजन के लिए दालों का काफी महत्त्व है। विगत् कई वर्षों से देश में दालों की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ रहा है। 2019-20 में देश में दालों का उत्पादन जहाँ 23.02 मिलियन टन था, वहाँ वर्ष 2020-21 में दालों का उत्पादन करीब 25 मिलियन टन का अनुमान है। भारत सरकार तेजी से बढ़ती जनसंख्या की दलहन की मांग की पूर्ति के लिए तथा दालों के आयात की समस्या से निपटने के लिए इनका उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रयासरत है। वर्ष 2030 तक देश में दालों की आवश्यकता 32 मिलियन टन होने का अनुमान है। 10 फरवरी 2020 को केंद्रीय कृषि मंत्री *नरेंद्र सिंह तोमर* ने 'विश्व दलहन दिवस' पर एक कार्यक्रम में इस संबंध में सरकार की नीति का संकेत देते हुए कहा था कि ''भारत दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर बनने की दिशा में बढ़ रहा है। हम उत्पादन बढ़ाने पर काफी ध्यान दे रहे हैं। इससे हम दूसरे देशों में दलहन की जरूरत भी पूरी कर सकेंगे''।[18]

4- dikl mRiknu e of)

कपास उत्पादन एक महत्त्वपूर्ण नगदी एवं औद्योगिक फसल है जिसे सफेद सोना भी कहा जाता है। देश में पंजाब से लेकर केरल तक लगभग 4.0 मिलियन किसानों द्वारा 9.0 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में कपास की खेती होती है। विश्व के कपास उत्पादक देशों में भारत दूसरे स्थान पर है। भारत प्रतिवर्ष लगभग 6.00 मिलियन टन कपास का उत्पादन करता है जो विश्व कपास का लगभग 23 प्रतिशत है। कपास के निर्यात से देश को करीब 76,000 करोड़ रुपये की आमदनी होती है। *बीटी कॉटन* की बढ़ती खेती के चलते भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा कपास निर्यातक देश बन गया है। केंद्रीय कपड़ा एवं महिला तथा बाल विकास मंत्री *श्रीमती स्मृति ईरानी* ने 7 अक्टूबर 2020 को वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के जरिए द्वितीय कपास दिवस पर भारतीय कपास के लिए अब तक का पहला *ब्रांड एवं लोगा* लॉन्च किया। अब भारत का प्रमुख कपास विश्व कपास व्यापार में 'कस्तूरी कॉटन' के रूप में जाना जाएगा। 'कस्तूरी कॉटन' ब्रांड सफेदी, चमक, मदुलता, शुद्धता, शुभ्रता, अनुठापन एवं भारतीयता का प्रतिनिधित्व करेगा।[19]

5- phuh mRiknu e vkRefuHkj

चीनी उत्पादन में आत्मनिर्भर होकर देश निर्यात से करोड़ों रुपये कमाता है। गन्ना एक नगदी फसल है जिसकी पैदावार पर लगभग 5 करोड़ किसान निर्भर हैं। गन्ना उद्योग से करीब 20 लाख श्रमिकों को रोजगार भी मिलता है। वैश्विक स्तर पर कुल गन्ना उत्पादन में भारत का योगदान 13.3 प्रतिशत है। आज देश में 339 मिलियन टन गन्ना उगाकर 29.5 मिलियन टन चीनी का उत्पादन किया जा रहा है। वर्ष 1950-51

में चीनी मिलों की संख्या 138 से बढ़कर आज 650 से ज्यादा हो गई है। 1950-51 में चीनी का उत्पादन, जो 11.34 लाख टन था, आज बढ़कर 295 लाख टन हो गया है। प्रारंभिक अनुमानों को जारी करते हुए *उद्योग संगठन भारतीय चीनी मिल संघ (इस्मा)* ने कहा, ''गन्ना रस और बी-मोलस (शीरे) को इथेनॉल उत्पादन के लिए अलग किए जाने के कारण *इस्मा* को वर्ष 2020-21 में चीनी उत्पादन लगभग 3.1 करोड़ टन होने का अनुमान है''।

6- r;gu mRiknu e vkRefuHkj d i;kl

भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में तिलहनी फसलें महत्त्वपूर्ण निर्धारक हैं। 1990 के दशक में *पीली क्रांति* के माध्यम से तेलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए *तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन* आरंभ किया गया। यह मिसन तेलहन उत्पादन संबंधी प्रबंधन प्रौद्योगिकी का सर्वोत्कृष्ट उत्पादन किए जाने पर बल देता है। विश्व का पाँचवाँ तेलहन उत्पादन होने के बावजूद आज देश वनस्पति तेलों के सबसे बड़े आयातकों में से एक है। देश अभी तेलहन उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त नहीं कर सका है। वर्ष 2021-22 के लिए भारत सरकार द्वारा सरसों का न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) 4650 रुपये प्रति क्विंटल निर्धारित किया गया था। आगामी वर्ष 2022-23 के लिए भी भारत सरकार द्वारा सरसों का न्यूनतम समर्थन मूल्य तय कर दिया गया है जिसमें पिछले वर्ष की तुलना में 400 रुपये प्रति क्विंटल की बढ़ोतरी की गई है। आगामी रबी खरीद के लिए सरसों की न्यूनतम समर्थन मूल्य 5050 रुपये प्रति क्विंटल तय की गई है। वहीं सरसों की खेती पर प्रति क्विंटल आने वाली लागत 2523 रूपये निर्धारित की गई है।[20]

7- elkyk dk lcl cMk fu;kZrd

भारत वैश्विक स्तर पर मसालों का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक है। देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग जलवायु होने के चलते यहाँ अनेक तरह के मसालों की खेती होती है। जहाँ *विश्व खाद्य संगठन* ने 109 मसाला फसलों की पहचान की है, वहाँ भारत के *मसाला बोर्ड* ने मात्र 52 मसाला फसलों को स्वीकार किया है। भारत में 39.69 लाख हेक्टेयर भूमि पर 84.14 लाख टन मसाला का उत्पादन होता है। पूरे विश्व में मसालों का जितना निर्यात होता है, उसमें भारत की भागीदारी लगभग 50 प्रतिशत है।

8- n/k mRiknu e vkRefuHkj

भारत विश्व का सबसे बड़ा पशुधन आबादी वाला देश है। कृषि का देश के सकल घरेलू उत्पाद में 17.5 प्रतिशत योगदान है, जिसका एक तिहाई पशु क्षेत्र से आता है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015-16 में देश का दुग्ध उत्पादन 146.31 मिलियन टन तक

पहुँच गया था। वर्ष 2019 में 187.7 मिलियन टन के साथ भारत विश्व दुग्ध उत्पादन में 19 प्रतिशत का योगदान देता है। देश ने *ऑपरेशन फ्लड* के माध्यम से *श्वेत क्रांति* के बेहतर नतीजे प्राप्त किए और आज स्थिति यह है कि भारत दूध उत्पादन में आत्मनिर्भर बनकर अब सालाना 189 *मीट्रिक मिलियन टन* (MMT) दूध के उत्पादन के साथ दुनिया में दूध का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। एक ऐसा देश जो कभी अमेरिका का 1/3 और यूरोप का 1/8 दुग्ध उत्पादन करता था, उसने आज अमेरिका की तुलना में अपने उत्पादन को दोगुना कर दिया है और यूरोप की तुलना में 25 प्रतिशत अधिक उत्पादन बढ़ाया है। यह उल्लेखनीय काम हमारे अपने लोगों ने किया। बीते पाँच दशकों में जनसंख्या में 2.5 गुना वृद्धि होने के बावजूद आज प्रतिदिन प्रति व्यक्ति दुग्ध उपलब्धता 400 ग्राम है। इससे भी महत्त्वपूर्ण यह है कि *श्वेत क्रांति* ने दस करोड़ परिवारों को स्वतंत्र उद्यमी बनने और सम्मान के साथ अपनी आजीविका कमाने में सक्षम बनाया है।[21]

9- Qy vkj lCth mRiknu e c<r dne

स्वतंत्रता के बाद से अब तक देश के अंदर बागवानी फसलों के उत्पादन में 9.5 गुना वृद्धि हुई है। भारत इस समय विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सब्जी और फल उत्पादक देश बन गया है। देश में 23.7 मिलियन हेक्टेयर में बागवानी फसलों की खेती होने से वर्ष 2019-20 में कुल 311 मिलियन टन बागवानी फसलों का उत्पादन हुआ। फलों के राजा के रूप में आम लगभग 4,000 वर्ष पहले से भारत में उगाया जा रहा है। अन्य फलों जैसे फालसा, केला, बेर, कटहल, आवला, बेल और नींबू का जन्म स्थान भारत ही है। अपने *सेबों* और *दशहरी आम* सहित *चाय* और *कॉफी* के स्वाद और सुगंध के लिए भी भारत विश्व भर में प्रसिद्ध है। चाय व कॉफी के साथ-साथ भारत में अंजीर, पिस्ता और अवाकैड़ों की खेती होती है। फूलों में विशेष रूप से गुलाब, गेंदा, रजनीगंधा, ट्यूबरोज लिलियम, ग्लैडिओलस, कारनेशन और गुलदावदी आदि की खेती बड़े पैमाने पर होकर करोड़ों रुपये का वार्षिक कारोबार किया जाता है। आज भारत बड़े पैमाने पर आलू, प्याज, मिर्च, भिंडी, करेला व लौकी का निर्यात कई देशों में कर रहा है।

2020-21 में रिकॉर्ड बागवानी उत्पादन : कृषि मंत्रालय का तीसरा अग्रिम अनुमान

फसल वर्ष 2020-21 में देश में बागवानी फसलों (horticulture crops) के अंतर्गत क्षेत्र व कुल बागवानी उत्पादन का तीसरा अग्रिम अनुमान *कृषि मंत्रालय* द्वारा 29 अक्टूबर 2021 को जारी किया गया। इन आँकड़ों के अनुसार संदर्भित वर्ष (2020-21) में इन उपजों का उत्पादन 33.1 करोड़ टन रहा है, जो अब तक का इनका सर्वोच्च स्तर है। कृषि मंत्रालय द्वारा 2020-21 में बागवानी उत्पादन का *पहला अग्रिम अनुमान*

31 मार्च 2021 को और दूसरे अग्रिम अनुमान 15 जुलाई 2021 को जारी किया गया था। जुलाई 2021 के *दूसरे अग्रिम* अनुमानों में 2020-21 में कुल बागवानी उत्पादन 329.86 मिलियन टन अनुमानित किया गया था, जो अब 29 अक्टूबर 2021 के *तीसरे अग्रिम* अनुमानों में 331.05 मिलियन टन अनुमानित था तथा जो पूर्व वर्ष 2019-20 में 320.47 मिलियन टन था। उल्लेखनीय है कि इससे पूर्व 2018-19 में देश में बागवानी उत्पादन 311.05 मिलियन टन था। इस प्रकार बागवानी उत्पादन में 3.02 प्रतिशत की वृद्धि जहाँ 2019-20 में दर्ज की गई थी, 2020-21 में यह वृद्धि 3.30 प्रतिशत अनुमानित है। 2020-21 में ही बागवानी उपजों के अधीन बुआई क्षेत्र में भी 4.19 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। 2019-20 में यह क्षेत्र 26.48 मिलियन हेक्टेयर था, जो 2020-21 में 27.59 मिलियन हेक्टेयर रहा है।

निष्कर्ष

रक्षा और कृषि क्षेत्रों में आत्मनिर्भर भारत के बढ़ते कदम के विश्लेषण से स्पष्ट है कि आज का भारत वैश्विक स्तर पर अपने प्रभाव का विस्तार करते हुए महाशक्ति बनने के करीब है। देश के अंतर्गत रक्षा हथियारों और साजो-सामान के निर्माण के साथ-साथ कृषि क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता का प्रयास *नरेंद्र मोदी* सरकार की अनूठी पहल है। सबसे बड़ी बात यह है कि बड़ी शक्ति बनने की आकांक्षा रखने वाला कोई भी देश हो, उसे कृषि तथा रक्षा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनने की अनवरत कोशिश करनी चाहिए। *रक्षा* और *कृषि* ये दोनों ऐसे क्षेत्र हैं जिसमें आत्मनिर्भरता प्राप्त कर भारत *'वसुधैव कुटुंबकम्'* के अपने आदर्श को वैश्विक स्तर पर पुनर्स्थापित कर अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ा सकेगा। आज देश में *रक्षा* और *कृषि* क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता के लिए हो रहे प्रयास से *लाल बहादुर शास्त्री* के *'जय जवान जय किसान'* का वह सपना साकार हो रहा है जिसमें उन्होंने नए भारत की तस्वीर देखी थी। रक्षा क्षेत्र में शोध और विकास को बढ़ावा देकर तथा निवेश को प्रोत्साहित कर जहाँ हम उच्च क्षमता वाले हथियार बनाने में सक्षम होंगे, वहाँ कृषि क्षेत्र में नए-नए अनुसंधानों से देश को अन्न के मामले में स्वावलंबी बनाकर औरों की भी सहायता कर सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ

1. पूर्व राजनयिक, अनिल त्रिगुणायत का आलेख, ''रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता का संकल्प, *प्रभात खबर* (पटना, 20 दिसंबर 2021), पृ. 8
2. संपादकीय, *दैनिक जागरण* (पटना, 10 दिसंबर 2021), पृ. 10
3. उपरोक्त
4. *दैनिक जागरण* (पटना, 19 दिसंबर 2021), पृ. 15
5. उपरोक्त
6. रक्षा नीति को प्राथमिकता की आवश्यकता; https://www.drishtiias.com

7. *दैनिक जागरण* (पटना, 27 दिसंबर 2021), पृ. 13
8. *दैनिक जागरण* (पटना, 21 जनवरी, 2022), पृ. 14
9. *नवभारतटाइम्स.*कॉम (28 मार्च 2019)
10. यह किसी भी समुद्री प्रणोदन तकनीक है जो गैर-परमाणु पनडुब्बी को वायुमंडलीय ऑक्सीजन तक पहुँच प्रदान करने या स्नॉर्कल का उपयोग किए बिना संचालित करने की अनुमति देती है।
11. *आज* (पटना, 12 जनवरी 2022), पृ. 12
12. *हिन्दुस्तान* (पटना, 20 दिसंबर 2021), पृ. 15
13. उपरोक्त
14. पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, दिल्ली, 7 मार्च, 2020
15. उपरोक्त
16. पूर्व राजनयिक, अनिल त्रिगुणायक का आलेख, पूर्वोक्त
17. गेहूँ अनुसंधान निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, करनाल, 132001 (भारत), हरियाणा
18. दलहन में आत्मनिर्भर बनेगा भारत, नहीं पड़ेगा आयात की जरूरत, https://m.economictimes.com
19. पत्र सूचना कार्यालय,
20. भारत सरकार, वस्त्र मंत्रालय, दिल्ली, 7 अक्टूबर 2020
21. डॉ. सतेंद्र पाल सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रमुख, कृषि विज्ञान केंद्र, शिवपुरी, मध्य प्रदेश, https://www.gaonconnection.com
22. डॉ. आरएस सोढ़ी का आलेख, ''आत्मनिर्भरता हासिल करने का मंत्र'', *दैनिक जागरण* (पटना, 3 जून 2020), पृ. 6

राष्ट्र निर्माण में बहुलवर्गः संकल्पनाएँ एवं परिणति

साकेत बिहारी

lkjk'k *जब नागरिक पर्याप्त मूल्यों प्राथमिकताओं एवं संवादों को साझा करते हैं, तब राष्ट्र निर्माण का विकास होता है। इसके अर्न्तगत लोगों के अंदर समरूपता का विकास, एक जैसी शिक्षा व्यवस्था से किया जा सकता है। राष्ट्र निर्माण में नागरिक हितों, लक्ष्यों एवं वरीयताओं की पर्याप्त मात्रा समानता को महसूस कराती है। राष्ट्र निर्माण के परिप्रेक्ष्य में नागरिकों के साथ समानता, स्वतंत्रता, बंधुता, एकता एवं अखंडता के भाव का प्रवाह होना आवश्यक है। इसे नागरिकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाकर प्राप्त किया जा सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के 74 वर्षों के बाद भी आपेक्षित सामाजिक -आर्थिक स्थिति में वांछित बदलाव नही आया है। विभिन्न राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय शोध संदर्भों से यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं की परिस्थिति में परिवर्तन, अनुसूचित जातियों की सामाजिक -आर्थिक क्षेत्रों में प्रगति, अनुसूचित जन जातियों की स्थिति में अनुकूल परिवर्तन, निर्बल वर्गों का विशेष विकास एवं युवाओं को रोजगार आदि मुद्दे अभी भी मानक स्तर पर नहीं पहुँच पाए हैं आवश्यकता इस बात की है कि देश में संदर्भ मूलक विशिष्टताओं का आंकलन व चुनाव कर स्थानीय स्तर की मदद से प्रभावकारी सुशासन स्थापित किए जाएं ताकि विकास समन्वित, उर्ध्वमुखी, समतामूलक, न्यायिक एवं वांछित हो सके। विदित हो कि सरकारी नीतियों ने बहुत हद तक असमानता एवं समानता के बीच सेतु जैसा कार्य किया है। कल्याणकारी राज्य एवं बेहतर प्रशासन अपने नवीन व नवाचारपूर्ण प्रबंधन से लोकहितों के बहुमुखी संरक्षा एवं सुरक्षा में अहम भूमिका निभाती है। यह भी न्याय संगत एवं तर्क संगत है कि संपोषित विकास के मानदंड नित उर्ध्वमुखी परिर्वतन को प्राप्त कर रहे हैं। अतः प्रशासनिक गुणात्मकता को भी परिवर्तित मानदण्डों के अनुकूल सामंजस्य स्थापित करना होगा।*

साकेत बिहारी

प्रस्तावना

यह विशेष अवलोकन भारत के निर्माण की श्रृंखला में विभिन्न वर्गों के सक्रिय भागीदारी के लिए संकल्पित है। इसके अंतर्गत युवा, महिला, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग एवं निर्बल लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का जायजा प्रस्तुत है जिनके विकास में सरकारी योजनाओं एवं सवैंधानिक प्रावधानों का उल्लेख सम्मिलित है। संदर्भों के सुपष्टता एवं अर्न्तराष्ट्रीय मापकों की आख्या लेते हुए यह विश्लेषण सरकारी नीतियों के अनुपालन में सार्थक प्रयासों की अभिव्यक्ति देता है। कमजोर एवं दुर्बल लोंगों का सशक्तीकरण एवं सामाजिक न्याय का प्रवाह ही राष्ट्र निर्माण की कुंजी है। यद्यपि राष्ट्र निर्माण की श्रृंखला में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं नृजातीय सोपानों को अनदेखा नहीं किया जा सकता, तथापि गुणात्मक जीवनशैली में अभिवृद्धि सौहार्द एवं अन्य समरसता मूलक संकेतांको को त्वरित करता है।

यद्यपि राष्ट्र निर्माण एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है, तथापि इसके लिए उत्तरदायी कारण अनेक हैं। राष्ट्र निर्माण को शक्तिशाली बनाने वाले कारकों के विश्लेषण से यह परिलक्षित होता है कि जब तक समग्रतापूर्ण विकास न सुनिश्चित हो, राष्ट्र निर्माण को अनन्य प्रेरक प्रसंगों से निर्णायक रूप से प्रभावित होना पड़ेगा। राष्ट्र निर्माण के अंतर्गत सभी लोगों का साथ ही सभी के विकास को सुनिश्चित कर सकेगा। यद्यपि यह बीज मंत्र राष्ट्र निर्माण योजना को अपने प्रभाव में समेटता है, तथापि इसकी परिधि की व्यापकता किचिंत संकीर्णताओं की शिकार भी होती है। इन संकीर्णताओं से मुक्ति प्राप्त करने हेतु नाना प्रकार की सरकारी योजनाएँ कार्यकारी रूप से अनवरत अस्तित्व में हैं। उदाहरण के लिए *प्रधानमंत्री जन-धन योजना, अटल पेंशन योजना, सांसद आदर्श ग्राम योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, प्रधानमंत्री ग्रामीण योजना, दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना, महात्मागांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कार्यक्रम, मिड डे मिल स्कीम, राष्ट्रीय वृद्धा पेंशन स्कीम, लोक वितरण व्यवस्था* इत्यादि। ये योजनाएँ लोक उत्थान एवं गरीबी-उन्मूलन के संदर्भ में रीढ़ की हड्डी के रूप में अर्थपूर्ण ढंग से अपने कार्यों को संपादित कर रही हैं। इनका राष्ट्र निर्माण की योजना के अंतर्गत बहुत ही सार्थक महत्व है। सच तो यह भी है कि कोई भी एक योजना, गरीबी-उन्मूलन के अंतर्गत सफल नहीं हो सकती क्योंकि भारत में गरीबी की प्रकृति बहुआयामी है। राष्ट्र निर्माण, राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान राज्य की शक्ति के प्रयोग से स्थायी होता है। राष्ट्र निर्माण में लोगों का एकीकरण राज्य के अर्न्तगत होता है ताकि राज्य राजनीतिक रूप से स्थिर व संभावनाओं के साथ दीर्घकालिक हो सके। समय के बदलाव के साथ, हमारे राष्ट्र में नाना प्रकार की प्रतिरोधक शक्तियाँ भी उजागर हो रही हैं। यदि इन शक्तियों का शमन राज्य द्वारा नहीं किया गया तो राष्ट्र निर्माण योजना को प्रतिकूल फल मिलेंगे क्योंकि बुनियादी आवश्यकताओं की आपूर्ति 'लोक' को 'तंत्र' के नजदीक आने पर ही संभव हो सकेगा। राष्ट्र निर्माण योजना की

प्रासंगिकता आज के माहौल में अत्यंत आवश्यक हो गई है क्योंकि संप्रति सरकार लोक कल्याण को केंद्रीय विषय-वस्तु के रूप नीतियों में निहित करने के लिए संकल्पित है। केंद्रीय विषय वस्तु के रूप में अनेक लक्ष्यपरक योजनाएँ चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं की सफलता और मौलिकता नागरिकों को सर्वदा नजदीक लाने से है। विदित हो कि शिक्षा के प्रारूप को भी कौशल के साथ जोड़कर देखा जाने लगा है। सच तो यह है कि 18 वर्ष से ऊपर के मानव संसाधन का सदुपयोग कौशल में गुणवत्ता के साथ अत्यधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। कौशल एक श्रेष्ठ प्रक्रिया है जिसके माध्यम से लोगों को दक्षता को बाजार अनुकूल ढाला जा सकता है ताकि जीवन निर्वहन में स्वावलंबन का अवलंबन युवा वर्ग को प्राप्त हो सके।

1. राष्ट्र निर्माण योजना और रोजगार

रोजगार की उपलब्धता राष्ट्र निर्माण योजना को प्रेरित करती है। रोजगार का संबंध श्रम से है। 2018-19 के सर्वेक्षण के अनुसार भारत में कार्यबल की संख्या लगभग 51.8 करोड़ थी जिसमें 58.8 करोड़ लोगों के पास रोजगार था। इसमें 3 करोड़ लोग बेरोजगार थे। वर्ष 2017-18 और 2018-19 के मध्य श्रमिक कार्यबल में 0.85 करोड़ की अभिवृद्धि दर्ज की गई। इसमें 0.46 करोड़ लोग शहरी एवं 0.39 करोड़ ग्रामीण हैं। श्रमिक कार्यबल में लैंगिक बढ़ोत्तरी के परिप्रेक्ष्य में 0.64 करोड़ पुरूष 0.21 करोड़ महिलाएँ भागीदार थी। श्रमिक कार्यबल के प्रारूप में 1.64 करोड़ की वृद्धि हुई, जिनमें से 1.22 करोड़ ग्रामीण और 0.42 करोड़ शहरी से हैं। श्रमिकों में 0.92 करोड़ महिलाएँ तथा 0.72 करोड़ पुरूष सम्मिलित हैं। इन श्रमिक बल में सबसे अधिक 21.5 करोड़ लोगों को कृषि में रोजगार मिला अर्थात कृषि संपूर्ण क्षेत्रों में 42.5 प्रतिशत लोगों को रोजगार प्रदान करता है। परंतु 2021 के आंकड़े ये दर्शाते हैं कि भारत में रोजगार लोगों की संख्या 5.3 करोड़ रही। इनमें महिलाओं की संख्या 1.7 करोड़ हैं, घर बैठे लोगों में उनकी संख्या अधिक है जो अनवरत कार्य के तलाश में हैं। सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त प्रवृत्ति से ये सुस्थापित होता हैं कि 5.3 करोड़ बेरोजगार लोगों में से 3.5 करोड़ लोग लगातार कार्य के तलाश में है। इनमें करीब 80 लाख महिलाएँ शामिल हैं।

बेरोजगारी की स्थिति का पता चलने पर ऐसा प्रतीत होता है कि राष्ट्र निर्माण की कार्यकारी अभिवृद्धि बेरोजगारी से इसलिए भी प्रभावित हो रही है क्योंकि सभी लोगों की भागीदारी राष्ट्र निर्माण में आवश्यक रूप से नहीं हो पा रहा है।

2. राष्ट्र निर्माण एवं युवाओं की भूमिका

युवा राष्ट्र निर्माण का संरचनात्मक एवं कार्यात्मक ढाँचा है जो उसके द्वारा किए गए क्रियाशील भागीदारी पर निर्भर करता है। राष्ट्र का विकास युवाओं के सर्वांगीण विकास पर निर्भर करता है। आज का युवा राष्ट्र के कल का स्थिति को प्राकार देने के लिए प्रतिबद्ध सा दिखता है। सचमुच, युवा राष्ट्र निर्माण में एक प्रेरक कड़ी है। राष्ट्र

निर्माण का सही अर्थ युवाओं के चरित्र निर्माण से है। 12 वीं योजना के अर्न्तगत भविष्य को मजबूत करने के लिए भविष्य की प्राथमिकताओं को सूचीबद्ध किया गया है। उदाहरण के लिए कौशल विकास प्रणाली को पीपीपी मॉडल पर बढ़ावा दिया जाना है। राष्ट्रीय कौशल फ्रेमवर्क को लागू करना, संस्थागत संरचना को मजबूत करना, क्षेत्रीय इक्विटी में वृद्धि दर्ज करना आदि भी सम्मिलित है। तीन महत्वपूर्ण क्षेत्र है जहाँ युवाओं के लिए प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पहला, युवाओं को कौशल विकास के अवसरों से लाभान्वित करना। दूसरा, स्पष्ट रूप से युवाओं के भविष्य निर्माण में हितधारकों को परिभाषित करना। तीसरा, सिस्टम और हितधारकों के बीच इंटरलिंकेज का निर्माण करना। चूँकि देश की तकरीबन 27.5 प्रतिशत आबादी युवा है, इनका विकास समग्रतापूर्ण ढंग से होना चाहिए। साथ ही साथ, भारत की जनांकीय चुनौतियों को अवसर में भी परिणित किया जाना भी अवश्यम्भावी है। युवाओ के दक्षता व कौशल में विकास के लिए निर्देशात्मक स्तर पर अध्ययन को प्रभावी बनाने के बाद ही नवीन योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। उपलब्ध संसाधनों के आधार पर युवाओं के कल्याण के लिए अभिनव प्रबंधन की भी आवश्यकता पर जोर दिया जाना आवश्यक है।

समाज के सदस्य विभिन्न प्रकार की क्रियाओं के माध्यम से युवा शक्ति को प्रभावित करते हैं। किसी दिए गए समाज में प्रचलित राजनीतिक क्रियाओं के प्रकार उन तरीकों से संबंधित होते हैं जिनसे संस्कृति अपने मौलिक मुद्दों को संबोधित करती है। इनके अर्न्तगत संघर्ष तथा मौलिक मुद्दों से संबंधित व्यवस्था का भी समाधान होता है (इन्केंलस एवं लेविंसन, 1969)। समाज के अर्न्तगत घटित होने वाली प्रक्रियाएँ सामाजीकरण की दशा व दिशा निर्धारित करती हैं। सामाजीकरण सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। समाज के अर्न्तगत अत्यधिक सामाजिक दूरी भी युवा के सर्वांगीण विकास में बाधक होता है (हॉफ स्टेट, 1991)। यदि लोकतंत्र को सुदृढ़ रहना है तो जन भागीदारी द्वारा न केवल सुशासन की स्थापना के लिए अनिवार्य है, अपितु विकास की गति को तीव्र भी करना आवश्यक है। नागरिकों के रूचियों, प्राथमिकताओं एवं जरूरतों को ध्यान में रखते हुए नीति संगत कार्यक्रमों को चलाया जाना चाहिए। संस्थागत राजनीतिक भागीदारी भी अनेक गतिरोधों को समाप्त करने में सहायक है। विरोधी ध्वनियों की श्रव्यता, सुशासन को प्रवेगित कर सकता है (क्लंडरमैन, 1984)। यदि लोक ध्वनि पर ध्यानपूर्वक मंथन न किया गया तो राष्ट्रवादी संकल्पना का सूत्रपात समांतर कष्टकारक हो सकता है। इतिहास साक्षी है कि ब्रिटिश राजनीतिक और आर्थिक शोषण के प्रभाव के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था की क्षति नव राष्ट्रवाद का कारण बना (देसाई, ए.आर. 1949)। स्थानीय दक्षताओं, कुशलताओं एव उपलब्ध ज्ञान का यदि सार्थक और फलदायी प्रयोग किया जाए तो न केवल राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में नवाचार का संचार होगा बल्कि बेरोजगारी से मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त होगा।

3. राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की भूमिका

भारत की जनसंख्या में करीब 48 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है। यदि नारी शक्ति के महत्व का बोध नहीं किया गया तो राष्ट्र निर्माण एक दिवा स्वप्न बनकर रह जाएगा। सच तो यह है कि जब-जब समाज में जड़ता आयी है, नारी शक्ति ने आगे आने वाली संतति के माध्यम से नवीनता का बीज मंत्र फूँका है। आगे भी, महिलाओं को पुरूष की भांति विकास यात्रा में शामिल होना प्रासंगिक है और यथोचित भी। यह उदाहरणार्थ है कि स्वयं सहायता समूहों द्वारा रोजगार व आर्थिक प्रक्रिया में योगदान देकर महिलाओं ने अपनी क्षमता का अभूतपूर्व बोध कराया है। भारत सरकार की नीतियों में महिलाओं को देश के सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाना है। महिलाओं के प्रति किसी भी प्रकार का भेदभाव को दूर करने लिए कानूनी प्रणाली एवं सामुदायिक विकास प्रणाली को भी यथोचित प्रश्रय दिया जाना आपेक्षित है। समाज में महिलाओं ने प्रासंगिक भूमिका का निर्वहन किया है। महिलाओं के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सामाजिक सुरक्षा में आपेक्षित अभिवृद्धि हुई है। स्थानीय एवं प्रशासन के अंतर्गत महिलाओं की भागीदारी उत्तरोत्तर बढ़ी है। परंतु महिलाओं के प्रति लोगों का दृष्टिकोण कुछ मनोवैज्ञानिक भ्रम का शिकार है। पुरूषत्व का भाव श्रेष्ठता के साथ होना उस भ्रम की परिणति है। आज महिलाओं के मुद्दों पर संवेदनशील एवं परिपक्व होने की आवश्यकता है। साक्षर एवं शिक्षित भारत में बालिका भ्रूण हत्या और अवनति भेदभाव जैसे भ्रम के उदाहरण हैं। यदि समाज इन भ्रमों को मिटा दे तो लैंगिक अनुपात में असमानता स्वतः ही समाप्त हो जाएगी। देश के तकरीबन 39 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या में एक चौथाई ही महिलाओं की भागीदारी है। वास्तव में, महिलाएँ त्याग एवं बलिदान की प्रतिमूर्ति मानी जाती है। अस्तु, महिलाओं को आगे लाने एवं उनकी हिस्सेदारी कार्यशील जनसंख्या में बढ़ाने के लिए और अधिक सरकारी उपायों की आवश्यकता है। यद्यपि उपायों की संख्या में भी उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है, तथापि इनके प्रसार की लोच को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। महिलाओं का सशक्तिकरण राष्ट्र निर्माण योजना को अर्थपूर्ण रूप से प्रभावित करेगा।

4. अनुसूचित, अनुसूचित जनजाति अन्य पिछड़ा वर्ग

भारत के संविधान में अनुसूचित जाति को अनुच्छेद 366 (24) में परिभाषित किया गया है। अनुसूचित जातियाँ वे स्वतंत्र जातियाँ हैं जिन्हें एक समय में समाज से बाहर, अस्पृश्य या अछूत, दलित या हरिजन कहा जाता था। वास्तव में इन जातियों को अनुसूचित करने का मुख्य उद्देश्य समाज में होने वाले भेदभाव को समाप्त करना था। दूसरी तरफ, अनुसूचित जन जातियों वे हैं जो आदिवासी समुदाय या आदिवासी जाति और आदिवासी सुमदायों की भाग मानी जाती है। इन्हें संविधान के अनुच्छेद 342 के अर्न्तगत अनुसूचित जनजाति माना गया है। तीसरी तरफ, भारत के संविधान के अनुच्छेद 15 (4), 16 (4) और 340 (1) में पिछड़ा वर्ग का उल्लेख मिलता है। पिछड़ा

वर्ग का अभिप्राय समाज के उन वंचित वर्गों से है जो सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े होने के कारण समाज के अन्य वर्गों की तुलना में निचले स्तर पर है। वर्ष 2011 के जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या का 16.6 प्रतिशत अनुसूचित जाति और 8.6 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति है। अनुमान के अनुसार करीब 41 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग है। Globle Multidimensiond Poverty Index (GMPI) के अनुसार पाँच व्यक्ति, छह व्यक्तियों के अन्तर्गत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग में से गरीब है। बहुआयामी गरीबी, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग में सर्वाधिक है। 50.6 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों में, 33.3 प्रतिशत अनुसूचित जातियों में एवं 27.2 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग में गरीबी आँकी गई है। सच तो यह है कि 2015 में निर्मित 5DG लक्ष्यों के अनुकूलन में गरीबी को समाप्त करना निर्दिष्ट है। उपरोक्त आंकलन का आधार स्वास्थ्य, शिक्षा एवं जीवनशैली के गुणवत्ता पर केंद्रित है। स्वास्थ्य में पोषण एवं बाल मृत्यु दर निहित है। शिक्षा में स्कूली वर्ष एवं स्कूल में उपस्थिति उल्लेखित है। साथ ही साथ गुणात्मक जीवन स्तर को खाना बनाने का ईंधन, साफ-सफाई, पेयजल, बिजली, घर तथा संपत्ति द्वारा इंगित किया गया है। अस्तु, राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग को भागीदार बनाने के लिए GMPI द्वारा निद्विष्ट फलनात्मक स्तम्भों के लिए विशेष नीति निर्मित कर उनके अनुपालन को अवश्यम्भावी बनाना होगा। यह संविधान के अनुच्छेद 46 के अनुकूल भी होगा क्योंकि इसके अंतर्गत राज्य समाज के कमजोर वर्गों में शैक्षणिक और आर्थिक हितों के विशेषतः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों को ध्यान में रखने के लिए बचनबद्ध है। इसके संदर्भ में नाना प्रकार की योजनाओं के माध्यम से सरकार अनेकानेक कदम उठा रही है जिसे ये समुदाय सबल एवं मुख्यधारा से जुड़ जाएं। इनके संबंध में जानकारी 'भारत का राष्ट्रीय पोर्टल' पर भी उपलब्ध है। विदित हो कि *'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास'* लक्ष्य प्राप्ति हेतु करीब 203 नवीन योजनाएँ समर्पित है जिनमें महिला, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग व अन्य निर्बल वर्गों के कल्याण का उचित महत्व दिया जाना उल्लेखित है।

इस प्रकार राष्ट्र निर्माण एक सतत चलनेवाली प्रक्रिया है जिसमें काल एवं अवधि के आलोक में संरचनाएँ नवीन करने योग्य हो जाती हैं। सुशासन का राष्ट्र निर्माण से इसलिए भी विशेष संबंध है क्योंकि अच्छी प्रशासन व्यवस्था सार्वजनिक सत्ता तो स्थापित करती ही हैं, साथ ही साथ लोगों को एक राष्ट्रीय संप्रदाय से जोड़ती है। अतः जब तक सामाजिक व्याधियों को समूल नष्ट नहीं किया जाएगा, राष्ट्र निर्माण में उर्जा प्रवाह सम्यक रूप से नहीं हो सकेगा। अंततः राष्ट्र निर्माण में समतामूलक मूल्यों के साथ, सह अस्तित्व व बंधुता सहानुभूतिक संकल्पों आदि में ताल-मेल आवश्यक है। जो पहले से अधिक ऊर्जावान, व्यापक, संपन्न एवं बंधुता से प्रेरित आकांक्षी भारत के सपनों का साकार करेगा।

संदर्भ

1. Inkeles, A. and D.J. Levinson. 1969. National Character: The study of model personality and socio cultrual systems *The Handbook of socialpsychology,* 2 (4), Menlo Park CA: Addison wisley, pp. 418-506.
2. Hofstede, I.G. 1991. Cultures and organisation: Software of the Mind, Londo: Mc Craw-Hill.
3. Klandermans, B. 1984. Molilization and Participations Social Psycholozical Expansions of Resourses Molilization Theroy, American Sociological Review. Vol. 49, pp. 583-600.
4. Desai, A.R. 1949. Social Background of Indian Xlationalism, New York: Oxford University Press.
5. Ladner, J.1971. Tanzanian Women and Nation Building , The Blackscholar, 3 (4), pp. 22-28.
6. UPDP and OPHI. 2021. Global Multidimensional Poverty Index 2021-Unmasking disparities by Ethnicity, Caste and Gender, UN Development Programme and Oxford Poverty and Humen Development Initiative.

भारत में समाज और लोक प्रशासन

कमलेश नारायण मिश्र एवं अंजुलता मिश्र

lkjk'k *कोई भी प्रशासन शून्य में संचालित नहीं हो सकता, इसलिए राज्य और समाज का सम्बन्ध अत्यन्त गहरा और पुख्ता है। भारत एक नव राष्ट्र है, लेकिन इसका समाज अत्यन्त प्राचीन काल से चला आ रहा है। इस प्रकार समाज के संस्थान और सामाजिक प्रक्रियाओं का प्रशासनिक संरचनाओं पर और उनकी कार्य शैलियों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। भारत को 1947 में मिली आज़ादी महात्मा गाँधी के नेतृत्व में चलाए गए लम्बे राष्ट्रवादी आंदोलन की भव्य परिणिति थी, जिन्होंने पूरे समाज को राष्ट्रीय राजनीति में शामिल किया। सभी आयु, वर्गों, धर्मों, क्षेत्रों और व्यवसायों से जुड़े लोगों ने उनके साथ राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान किया। जिससे लोगों को एकजुट करने की अत्याधुनिक कला विकसित हुई। आम आदमी को राजनीतिक स्वतन्त्रता का व्यावहारिक अर्थ समझाने के व्यापक सामाजिक आर्थिक मजबूती का संकल्प अनिवार्य हो गया था। स्वाधीनता ने इन संकल्पों को दोहराने का पहला अवसर प्रदान किया। औपनिवेशिक शासक अपने क्रियाकलाप चलाने के लिए अपने लक्ष्यों को स्पष्ट नही होने देते थे। संक्षेप में उनके शासन के चार लक्ष्य थे, देशक के संकीर्ण अर्थ में कानून और व्यवस्था बनाये रखना, सरकारी खर्च के लिए आवश्यक राजस्व एकत्र करना, सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अधिकार ब्रिटिश सिविल कर्मियों के हाथ में रखना, और केन्द्र की सर्वोच्च आवश्यकताओं के लिए प्रशासन को अधीन बनाए रखना।*

प्रस्तावना

1947 में भारतीय राजनीतिक नेताओं ने पाँच प्रमुख लक्ष्य निर्धारित किए जिनका सम्बन्ध देश के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक आयामों के साथ था। संक्षेप में ये लक्ष्य निम्नवत थे–

1. भारत में एक मजबूत संसदीय लोकतंत्र की स्थापना करना।
2. ऐसे संघ की निर्माण करना, जिसमें केन्द्र और घटक राज्यों को अपने-अपने कार्यक्षेत्र में स्वायत्तता प्राप्त हो।

3. आत्मनिर्भरता और आत्मसक्षमता पर आधारित सुदृढ़ अर्थव्यवस्था की स्थापना।
4. जाति, लिंग और धर्म के भेदभावों से ग्रस्त समाज में सामाजिक न्याय की व्यवस्था करना।
5. नए लक्ष्यों और मूल्यों के अनुकूल एक व्यवहार्य लोक-प्रशासन की स्थापना करना।

1947 में भारत के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती पश्चिमी उदार लोकतान्त्रिक विचारधारा पर आधारित नए राष्ट्र के निर्माण की थी और उसके साथ ही पूर्व सोवियत-संघ की शासन प्रणाली की तरह ही आर्थिक योजना की अवधारणा को उसमें शामिल करना था। भारतीय संविधान की सभी प्रमुख विशेषताओं को राष्ट्रीय आंदोलन ने तैयार किया था और इस तरह ये विशेषताएँ राष्ट्रीय आंदोलन ने पहले से ही तय कर ली थी। 1928 की नेहरू रिपोर्ट वस्तुतः भारत की संविधान सभा का ही लघु रूप थी, जिसका गठन स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण करने के लिए किया गया था और जिसने 1947 से 1949 तक इस काम को अंजाम दिया। इसका यह अर्थ नहीं है कि स्वतंत्र भारत की संविधान सभा में कोई संघर्ष न ही हुआ ''कानूनी प्रक्रिया'' और ''कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार'' संविधान सभा में बड़ी जोशीली बहस हुई। संविधान सभा में जो संविधान तैयार किया वह वेस्टमिनिस्टर मॉडल के लोकतंत्र पर आधारित था। इसी प्रकार राष्ट्रीय प्रयास यह रहा कि पश्चिमी राजनीतिक संस्थानों और प्रक्रियाओं को भारतीय सामाजिक वास्तविकताओं के अनुकूल बना लिया जाए। अतः अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया।

राज्य और समाज के बीच अन्तर सम्बन्ध भली-भांति स्थापित तथ्य है। समाज राज्य को और उसके सक्रिय हिस्से लोक प्रशासन को उसी तरह प्रभावित करता है, जिस प्रकार राज्य समाज को प्रभावित करता है।

ब्रिटिश साम्राज्य से विरासत में मिले लोक प्रशासन की ऊपर वर्णित विशेषताओं के अलावा कुछ विशिष्टताएँ और भी हैं, जो इस प्रकार हैः–

1. प्रशासन की मूलभूत इकाई और उसका पीठासीन अधिकारी यानी जिला कलेक्टर उच्च स्तर पर वामसराम का खास नुमाइंदा होता था।
2. केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति प्रशासन की सबसे अहम बात थी। शिक्षा, स्वास्थ्य, सार्वजनिक वित्त, विधि और व्यवस्था, न्याय प्रणाली आदि सभी क्षेत्रों में फैसले केन्द्रीय स्तर पर लिए जाते थे और यही स्वीकृत शाही नीति थी।
3. प्रशासन का प्रमुख आधार सामान्य सिविल सेवा थी, जिसके सदस्य नियमानुसार प्रशासन के सभी क्षेत्रों और सभी स्तरों पर अग्रणी पर संभालते थे, और हालांकि अखिल भारतीय और केन्द्रीय दोनों ही स्तरों पर कुछ और संगठित सेवाएं भी थी किन्तु दोनों के बीच बहुत अंतर रखा गया जिसे कभी दूर नहीं किया जा सकता था।

4. प्रशासन व्यापक नियमों, प्रक्रियाओं और विनियमों पर आधारित था, जो देश भर में फैले अधीनस्थ भारतीय अधिकारियों की बड़ी सेना पर कारगर ढंग से केन्द्रीय नियंत्रण सुनिश्चित करता था।
5. प्रशासन के दोनों स्तरों पर एक विखण्डित प्रणाली संचालित थी, जिसमें नीति निर्माताओं और उसे लागू करने वालों के बीच अलगाव रखा जाता था। इसका अर्थ यह है कि शिखर स्तर पर सचिवालय था, जिसकी भूमिका नीति बनाने की थी जबकि इसका प्रशासन चलाने की जिम्मेदारी अलग कार्यकारी अधिकारियों की थी।

भारतीय संविधान की एक असामान्य विशेषता यह है कि इसमें सिविल सेवा के सदस्यों, यानी समाज के सबसे अधिक शक्तिशाली विशिष्ट वर्ग के हितों और सुरक्षा की निश्चित गारण्टी दी गयी है। अधिकतर समीक्षकों का यह मानना है कि अनुच्छेद 311 के तहत सिविल सेवा के सदस्यों को अत्यधिक सुरक्षा प्रदान की गयी है, जिससे अपराधी को सजा देना बड़ा मुश्किल हो गया है, किन्तु न्यायपालिका सरकार का बचाव करती है। भारत सरकार बनाम तुलसी राम परेतु (1985) मामले में उच्चतम न्यायालय ने सरकार के इस अधिकार को वैध ठहराया कि वह अपने दोषी कर्मचारी को औपचारिक जांच की अपेक्षा पूरी किये बिना और उसे अपनी रक्षा करने का समुचित अवसर दिये बिना बर्खास्त कर सकती है। अनुशासनात्मक कार्यवाही करने वाले अधिकारी के लिये बर्खास्तगी के आदेश में केवल आरोपों का उल्लेख भर करना जरूरी है।

संविधान का स्वरूप अत्यन्त व्यापक है और इसमें राष्ट्र-निर्माण, राज्य निर्माण और विकास के संस्थानों एवं नीतियों का उल्लेख है। 1947 से 1967 के दौरान भारत में विधायी कार्यों में तीन गुणा से अधिक बढ़ोत्तरी हुई। दो दशक की इस अवधि में कानून की किताबों में लगभग एक हजार छह सौ कानून अंकित हुए, जिनमें 21 संविधान संशोधन, एक सौ से अधिक विनिमय, एक सौ राष्ट्रपति-अधिनियम, और डेढ़ सौ अध्यादेश शामिल थे। किन्तु अकेला संविधान पर्याप्त नहीं है। परिवर्तन और विकास की इन प्रक्रियाओं का शक्तिशाली अथवा कमजोर बनाने में सामाजिक भूमिका है। संविधान समूचे भारत में लागू है और इस प्रकार समूचा देश अपने को इसके आदेशात्मक फ्रेमवर्क के साथ बंधा हुआ महसूस करता है किन्तु समाज बहुसमुदायवादी है, जिसमें अलग-अलग तरह के विश्वासों वाले जनसमूह हैं और सीमित निष्ठा रखने वाले अन्य लोग हैं। ऐसी स्थिति में कभी-कभी झगड़े होना स्वाभामिक है, लेकिन उनका समाधान करने के लिये राजनीतिक प्रक्रियाओं का सहारा लिया जाता है।

पिछले वर्षों में संविधान ने कुल मिलाकर समाज को आधुनिक रूप प्रदान करने की भूमिका निभायी है। आजादी के साथ भारत को अनेक समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिनका तत्काल समाधान जरूरी था। भारत ने औपनिवेशिक शासन को तिलांजलि देकर उसके स्थान पर एक ऐसी पद्धति स्वीकार की, जो संघीय

प्रणाली के संसदीय लोकतंत्र पर आधारित है और संसद का चुनाव व्यस्क मताधिकार के आधार पर नियमित रूप से कराया जाता है। स्वतंत्र भारत के प्रारम्भिक कार्यों में एक महतवपूर्ण फैसला यह था कि हमने योजनाबद्ध विकास की प्रक्रिया अपनायी और योजनाओं के माध्यम से भरण-पोषण पर आधारित वर्तमान अर्थ-व्यवस्था को औद्योगिक प्रणाली में बदलने का प्रयास किया। गरीबी, बेरोजगारी, गंदगी और अभाव की समस्याओं पर सीधे-सीधे प्रहार किया गया। ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय समाज में अनेक स्तर हैं और नये राष्ट्र को जाति प्रणाली का उन्मूलन करने और संस्थागत भेदभाव करने वाले अन्य समूहों के खिलाफ संघर्ष करने की आवश्यकता है। राष्ट्र को आबादी के उपेक्षित वर्गों की हालत सुधारने की चुनौती का मुकाबला करने का काम तत्काल अपने हाथ में ले लिया था। ये सभी चुनौतियाँ अथवा अधिक सही कहे तो क्रांतियाँ साथ-साथ पूरी हुई है। भारत ने संकल्प व्यक्त किया कि वह विविध प्रकार के इन लक्ष्यों को ऐसे संसदीय लोकतन्त्र के दायरे में हासिल करेगा, जो कानून के शासन, संविधानवाद और न्यायिक समीक्षा पर आधारित हो। यहाँ हमें यह नहीं भूल जाना चाहिये कि संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का भी उल्लेख है और केन्द्र तथा राज्य सरकारें इन अधिकारों के रक्षा कि ये बिना विधान सम्बन्धी गतिविधियाँ नहीं चला सकती। भारत एक महाद्वीपीय आयाम वाला विस्तृत देश है। जहाँ 2011 की जनगणना के अनुसार विभिन्न धर्मों को मानने वाले 121 करोड़ लोग रहते हैं। विश्व के सभी प्रमुख धर्मों के अनुयायी भारत में पाये जाते हैं।

यहाँ बोली जाने वाली भाषाओं की विविधता भी आश्चर्यचकित करती है। अँग्रेजी जानने वाले लोगों का प्रतिशत अभी भी कम है, लेकिन इसमें निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। अँग्रेजी प्रभावशाली विशिष्ट जन की भाषा है, जो भारत में सभी शहरी क्षेत्रों में न्यूनाधिक मात्रा में बोली जाती है। भारत की 22 राष्ट्रीय भाषाएँ हैं जिन्हें संवैधानिक मान्यता प्राप्त है और 19,500 बोलियाँ हैं। हालांकि राजभाषा हिन्दी है। अनुसूचित जनजातियों की अपनी बोलियाँ है। समाज असंख्य जातियों और उपजातियों में विभाजित है। यह सब इसलिए बताया जा रहा है कि भारत अधिक मामलों में अनेकवादी समाज है। ध्यान देने की बात है कि भारत में प्रचलित अनेकवाद शासन के लिए पूरी तरह तनाव मुक्त नहीं रहा है। भारत के कुछ हिस्सों में तथाकथित ''जातिवादी-राष्ट्रवाद'' बढ़ रहा है जो राष्ट्र की एकता के प्रति खतरा है। उदाहरण के लिये देश के कुछ भागों में 'जातिवाद' इतना प्रबल हो जाता है कि गणराज्य से अलग होने तक मांग कर दी जाती है। इसके लिये यह जरूरी हो जाता है कि समय-समय पर समायोजन, समझौता और समन्वय स्थापित किया जाय। वास्तव में भारत के अनेक नीति सम्बन्धी निर्णयों को राष्ट्रीय अनिवार्यताओं के संदर्भ में ही सही समझा जा सकता है। भारतीय समाज की वास्तविकता को जाति के संदर्भ के बिना नहीं समझा जा सकता जो भारतीय सामाजिक जीवन की सर्वव्यापी विशेषता है।

जाति भारत में अर्न्तनिहित सामाजिक संस्था है जो कि हिन्दू धर्म की ही विलक्षणता से प्रेरित है। किन्तु अन्य धर्मों की सामाजिक संरचना पर भी जातिवाद का

रंग अलग तरह से छाया हुआ है। जाति एक वंशानुगत समूह है। जाति मूलरूप से जन्म से मृत्यु तक लोगों के सामाजिक व्यवहार को संचालित करती है। इसकी रूढ़ता बहुत गहरी है लेकिन जाति का परम्परागत स्वरूप तेजी से क्षीण होता जा रहा है। यही कारण है कि अन्तरजातीय माजे और विवाह आज असामान्य नहीं रहे हैं। अवधारणात्मक दृष्टि से 'जाति' एक बड़ी सामाजिक व्यवस्था है। लेकिन आधुनिकीकरण की ताकतों के दबाव से इसकी मूलभूत कठोरता कम होती जा रही हैं और सामाजिक मेल मिलाप के प्रतिबंध कम से कम होते जा रहे हैं। समीपवर्ती जातियाँ शक्ति को बढ़ाने के लिए संयुक्त होती जा रही हैं राजनीति ने जातिवाद को एक नया रूप प्रदान किया है और स्वतंत्र भारत में जाति को एक नए ढंग से इस्तेमाल किया जाने लगा है। यह एक शक्तिशाली संगठन बिन्दु के रूप में उभर रही है।

भारतीय समाज के उपेक्षित वर्गों के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए सरकारें वचन बद्ध है। इस बारे में स्वयं संविधान में भी रचनात्मक भेदभाव की व्यवस्था है। सरकारी नौकरियों में आरक्षण और निर्वाचित विधान मण्डलों (केन्द्रीय और राज्यों के) में सुरक्षित सीटों की व्यवस्था संवैधानिक दृष्टि से शुरू में दस वर्षों के लिए की गई थी लेकिन इसे नियमित रूप से बढ़ाया जाता रहा है। इतना ही नहीं नए सामाजिक-समूहों को आरक्षण की परिधि में लाया गया है और इसका प्रतिशत भी बढ़ाया गया है। शुरू में आरक्षण से सामाजिक परिवर्तन में तेजी आयी किन्तु बाद में इसे अनिश्चित काल तक जारी रखने से सामाजिक तनाव पैदा हुआ, जो कुछ राज्यों में विशेष रूप से देखा गया। जैसा कि पहले कहा गया है भारत ने सामाजिक-आर्थिक योजना व विकास को प्राथमिकता दी है और इस दिशा में उसने संविधान लागू होते ही योजना आयोग का गठन कर लिया था योजना आयोग योजनाएं बनाता है, राष्ट्रीय संसाधनों का मूल्यांकन करता है और योजनाओं को लागू करने के लिये प्रशासन तंत्र का निर्धारण करता है। योजना आयोग के कार्यों के लिये परामर्श और केन्द्र राज्य सहयोग को बढ़ावा देने के लिए एक शिखर संगठन 1952 में बनाया गया जिसके सदस्यों में संघ के सभी 28 राज्यों के मुख्य कार्यकारी शामिल है। योजना आयोग की सहायता के लिये प्रत्येक केन्द्रीय मंत्रालय में योजना सेल (प्रकोष्ठ) और राज्यों में योजना बोर्ड तथा योजना विभाग स्थापित किए गए है। भारत में आयोजन अत्याधिक केन्द्रीकृत है। हालांकि इसे विकेन्द्रीकृत करने और निचले स्तर पर आयोजना तंत्र संरचनागत संचालनगत और वित्तीय दृष्टि से कमजोर है। जिला स्तर की आयोजना 1969 में शुरू की गयी थी लेकिन यह पूरे संकल्प के साथ शुरू नहीं की गयी।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि भारत एक नव राष्ट्र है जिसकी आयु 74 वर्ष हुई है– लेकिन यह देश निश्चित रूप से प्राचीन समुदाय है। प्रस्तुत लेख में देश के सामाजिक राजनीतिक सांस्कृतिक संस्थानों और प्रक्रियाओं तथा इसके लोक प्रशासन के बीच सम्पर्क तथा अंतर-सम्बन्धों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

यह सम्पर्क दो तरफा है। प्रत्येक एक दूसरे को प्रभावित करता है और इस प्रक्रिया के दौरान दोनों आपस में प्रभावित होते हैं।

आजादी के बाद से प्रशासनिक विकास इसी बृहत् राष्ट्रीय संदर्भ में समझा जा सकता है। स्वतन्त्रता के बाद प्रमुख परिवर्तनों को संक्षेप में समझा जा सकता है– (2) भारत में जिले को लम्बे समय से प्रशासन की बुनियादी इकाई समझा जाता रहा है और औपनिवेशिक शासन के दौरान भी यह प्रशासन की समग्र योजनाओं का केन्द्र होता था। जिले के महत्व में कमी आयी है। इसी तरह इसके पीठासीन अधिकारी जिला कलेक्टर का महत्व भी कम हुआ है। जिला प्रशासन को आज जिस सामाजिक और राजनीतिक परिवेश में काम करना पड़ता है वह बदल रहा है और यह प्रवृत्ति लगता है जारी रहेगी औपनिवेश्विक शासन द्वारा बनाया गया संस्थान अपने वास्तविक रूप से कायम नहीं रह सकता लेकिन नयी स्थितियों में सामांजस्य स्थापित करने के लिये उसमें परिवर्तन किए जा सकते है। देश की सिविल सेवा के प्रति भी अविश्वास बढ़ा है और इसके प्रति आम आदमी की आस्था लगातार कम होती जा रही है। इसमें सेवा की भावना कम है और प्रभुत्ववादी प्रवृत्तियों की प्रधानता है। सिविल सेवा को क्षुद्र व्यवसायवाद से ऊपर उठना चाहिये और इसे समुदाय केन्द्रित होना चाहिये। नौकरशाही सभी जगह अधिकार सम्पन्न विशिष्टजनों का वर्ग है और भारत जैसा विकासशील देश इसका अपवाद नहीं है। आम जन की नजरों में सिविल सेवा में व्यापक भ्रष्टाचार है और उच्च स्तर पर भी भ्रष्टाचार राजनीतिक प्रशासनिक स्तर पर है और सूक्ष्म विश्लेषण से पता चलता है कि यह इससे कुछ अधिक है। भारत में भ्रष्टाचार त्रिकोणात्मक है जिसमें राजनीतिक व्यापारी और सिविल कर्मचारी शामिल हैं।

ऐसे में सार्वजनिक आचरण को दुरूस्त करना जरूरी है और इस दिशा में ''लेखपाल'' की नियुक्ति अत्यन्त आवश्यक है। लेकिन अभी यह सम्भव नहीं हुआ है। ब्रिटिश शासन के दौरान उच्च स्तरीय अधिकारी नियमानुसार निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल होते थे। कार्यालय से उन्हें आवश्यक जानकारी उपलब्ध करायी जाती थी। भारतीय प्रशासन में अधिकारी नियमानुसार सीमित अवधि के लिए एक स्थान पर नियुक्ति किए जाते है और इस तरह वे लगातार स्थान्तरित होते रहते हैं जबकि उन्हें आवश्यक जानकारी लिपिकीय कर्मचारियों से मिलती है जो आम तौर पर स्थाई होते हैं। लिपिक अधिकारी को प्रभावित होते हैं। लिपिक अधिकारी को प्रभावित करके अपने हित में फैसले करा लेते है। भारत में नियम और विनियमों की संख्या भी उतनी अधिक है कि अक्सर कहा जाता है कि ''आप मुझे आदमी दिखाइए, मैं उसी के अनुरूप नियम का हवाला दे दूंगा'' प्रशासनिक प्रक्रियाएं इतनी व्यापक हैं और इतनी अधिक है कि उनमें से अधिकांश अपनी उपयोगिता खो चुकी है, किन्तु जड़ता की वजह से वे जारी है। लोक प्रशासन में पारदर्शिता भी जरूरी है क्योंकि गोपनीयता सम्बन्धी प्रचलित नियमों से प्रशासन में भ्रष्टाचार फैलाने वालों को लाभ होता है। अधिकारी को

नियमों और प्रक्रियाओं की पूरी जानकारी नहीं होती। उसमें आम तौर पर उद्यम का अभाव होता है और वह विभागीय नियमों की जानकारी हासिल करने में अधिक रूचि नहीं दिखाता। वह लम्बे समय तक पद पर रहने के प्रति आश्वस्त भी नहीं होता। अगर ऐसा होता तो वह नियमों और प्रक्रियाओं से वाकिफ हो जाता। इस प्रकार वह अनिवार्य रूप से कार्यालय के लिपिकों पर निर्भर रहता है जो छिपे हुए शासक बन जाते हैं। उपरोक्त कुछ अप्रिय स्थितियाँ के बावजूद भारत की उपलब्धियाँ कम प्रभावशाली नहीं है। ध्यान देने की बात है कि विकासशील देशों में भारत का संविधान सबसे प्राचीन है। देश में सही समय पर आम चुनाव कराये जाते हैं। जिसकी अंतर्राष्ट्रीय जगत में प्रशंसा की जाती है। आर्थिक क्षेत्र में भी स्थिति आशाजनक है। अर्थ व्यवस्था उच्च विकास के मार्ग पर अग्रसर है। हालांकि शुरू में वार्षिक वृद्धि दर कमी तीन प्रतिशत से अधिक रिकार्ड नहीं की गयी किन्तु 1990 में आर्थिक उदारीकरण की नीति अपनाये जाने के बाद से वृद्धि दर बढ़कर आठ प्रतिशत के इर्द-गिर्द था, लेकिन नोटबंदी, जी.एस.टी. एवं कोरोना महामारी आदि के कारण आज वृद्धि दर अत्यन्त निचले स्तर पर है। जो बेहद चिंतनीय है।

संदर्भ

1. लोक प्रशासन, अवस्थी और माहेश्वरी लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, 2011, पृ.सं.–48. ISBN- 8185778183.
2. A Hand Book of Public Administration, New York, U.N. 1964, Pg. 5
3. James I perry (ed) Hand book of Public Administration 1989, Pg. 5.
4. Gladden E.N. : An Introduture to Public Administration 2nd ed. Pg. 4.
5. Sharma, M.P : Public Administration Theory and Purchase (Hindi) Pg. 35.
6. Gladden, E.N. : Approaches to Public Administration, London 1966, Pg. 14
7. Development Administration current Approaches & Trends in Public Administration for raction development Pg. 12.
8. Dirrock, Marshall E. Dimock Gladys O, and Koeing, Lows W. Public Administration 1954 Pg. 12.
9. Willoughby W.F. : Primiples of Public Administration, Pg. 1
10. Walker : Journal of Public Administration Vol. X.pp. 397 -408.
11. डॉ. एम.पी. शर्मा और डॉ. बी.एल. सडाना लोक प्रशासन सिद्धांत एवं व्यवहार किताब महल इलाहाबाद, 1999.

हरियाणा प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण हेतु प्रयासों की समीक्षा

राजबीर सिंह दलाल

lkjk'k: *लैंगिक समानता किसी भी सफल लोकतंत्र की कुंजी होती है। इसीलिए भारत की तमाम सरकारों ने आजादी के बाद से ही महिलाओं को सशक्त करने के लिए कई तरह के कार्यक्रमों और योजनाओं को लागू किया। इन योजनाओं और कार्यक्रमों को आधार 73 वें संविधान संशोधन ने दिया। इस संशोधन ने ग्रामीण स्तर पर विकेंद्रीकरण को मान्यता दी और महिलाओं को घर की चारदीवारी से बाहर निकाल कर सार्वजनिक क्षेत्र में ला खड़ा किया। हरियाणा प्रदेश के लिए यह संशोधन और अधिक महत्वपूर्ण रहा क्योंकि यह प्रदेश ग्रामीण प्रदेश के नाम से जाना जाता है। हरियाणा पंचायती राज अधिनियम 1994 ने महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास के उद्देश्य से 16 विभागों के कुछ विशिष्ट कार्यों को भी पंचायती राज संस्थाओं से जोड़ा। प्रदेश सरकार ने महिला सशक्तिकरण के लिए पंचायती राज संस्थाओं में कई तरह के बदलाव किए, जैसे पंचायती राज चुनाव न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता और वर्ष 2020 में महिला आरक्षण व्यवस्था को बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया और भी अन्य कई प्रयास किए हैं। इन प्रयासों के कारण वर्तमान में पंचायती राज संस्थाओं में लगभग 42 प्रतिशत महिलाएं हैं। इन संस्थाओं ने न केवल महिलाओं को राजनैतिक रूप से सशक्त किया है बल्कि सामाजिक ताकत भी दी है। प्रदेश में महिलाओं की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन देखा जा रहा है, वर्ष 2021 में ग्रामीण क्षेत्र का लिंग अनुपात 933 और महिला साक्षरता दर 66. 4 प्रतिशत दर्ज की गई। प्रस्तुत शोध पत्र हरियाणा प्रदेश में इन संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के प्रयासों का अध्ययन करता है और इसके सामने आ रही चुनौतियों को उजागर कर इस को प्रभावी बनाने के सुझाव देता है।*

प्रस्तावना

किसी भी लोकतांत्रिक देश की प्रगति वहां की मानव शक्ति पर निर्भर करती है। जब तक किसी भी राष्ट्र या देश की आधी जनसंख्या अर्थात महिलाएं रसोई तक सीमित रहेगी तो उस देश का लोकतांत्रिक विकास कैसे संभव हो सकता है ? महिलाएं किसी भी समाज या देश की केवल आधी जनसंख्या शक्ति नहीं बल्कि शेष आधी जनसंख्या शक्ति के जीवन विकास का आधार स्तंभ है। महिलाएं घर परिवार और समाज को मजबूती प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इनके विकास के महत्व को समझते हुए संविधान निर्माताओं ने महिला सशक्तिकरण हेतु संविधान में अनेक प्रावधान किए जैसे संविधान की प्रस्तावना में, मौलिक अधिकार, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत आदि। लेकिन ये सब प्रावधान सैद्धांतिक थे। इन्हें व्यवहारिक रूप से तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब स्थानीय स्तर पर महिलाओं में आत्मविश्वास और जागरूकता पैदा की जा सके और शासन प्रक्रिया में उनकी भागीदरी निर्धारित की जा सके। इसका सबसे बड़ा साधन पंचायती राज संस्थाएं बनी।[1]

जब समुदायिक विकास कार्यक्रम जिसका मूल मंत्र 'अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण' था जो कि विफल हो गया था, उसकी विफलता का सबसे बड़ा कारण स्थानीय स्तर पर आम जनता की भागीदारी का ना होना रहा था। इसलिए स्थानीय स्तर पर सत्ता के विकेंद्रीकरण करने और लोगों में जागरूकता पैदा करने के लिए बलवंत राय मेहता कमेटी की सिफारिश के आधार पर 2 अक्टूबर 1959 को भारत में पंचायती राज संस्थाओं का शुभारंभ किया गया। कई वर्षो तक तमाम प्रयासों के बाद भी पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित नहीं हो पाई थी। वर्ष 1992 में पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत बनाने और उन में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से संसद में 73 वा संविधान संशोधन पारित किया गया। इस अधिनियम से एक तरफ स्थानीय शासन पर लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को संवैधानिक मानता प्रदान हुई, वहीं दूसरी तरफ पंचायती राज संस्थाओं के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के लिए कम-से-कम एक तिहाई (33 प्रतिशत) स्थान आरक्षित किए गए। यह बदलाव महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक मील का पत्थर साबित हो रहा है।[2]

अवधारणा

महिला सशक्तिकरण की अवधारणा समाज और राष्ट्र में लैंगिक समानता और सामाजिक न्याय स्थापित करने के लिए महिलाओं के अधिकारों और स्वतंत्रता की वकालत करती है। यह समाज में पारंपरिक रूप से वंचित महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थिति के उत्थान की प्रक्रिया है। वीना अग्रवाल के अनुसार, ''महिला सशक्तिकरण का अर्थ है, महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना, समाज में समानता प्रदान करना और मौजूदा शक्ति सम्बंधों और आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक को बदलकर अपने पक्ष में करना"। किल्लर एंड मबेवे के अनुसार,

''सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा महिला आत्मनिर्भरता बनाने के लिए खुद को संगठित करने में, संसाधनों के चुनाव और उनको नियन्त्रित करने के अपने स्वतंत्र अधिकारों का प्रयोग करने में सक्ष्म हो जाती है जो उनकी अधीनता को चुनौती देने और समाप्त करने में सहायक बनाती है। इस प्रकार हम सशक्तिकरण को बहुयामी सामाजिक प्रक्रिया के रूप में देख सकते हैं, जो महिलाओं को अपने स्वयं के जीवन को नियन्त्रित और निर्देशित करने की क्षमता देती है।[3]

शोध पत्र के उद्देश्य

हरियाणा प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के लिए किए गए प्रयासों का अध्ययन करना। इन प्रयासों का महिला सशक्तिकरण पर पड़े प्रभाव को आकलन करना और महिला सशक्तिकरण के मार्ग में आ रही चुनौतियों को उजागर कर, इस को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए सुझाव देना।

विश्लेषण

लैंगिक समानता सफल लोकतंत्र की कुंजी है। इसीलिए भारत सरकार व राज्य सरकारों ने लैंगिक समानता और महिलाओं को सशक्त करने के लिए आजादी के बाद से ही कई कार्यक्रम और नीतियां लागू कीं। लेकिन इन नीतियों और कार्यक्रमों को अधिक सफलता नहीं मिल रही थी, क्योंकि ग्रामीण स्तर पर लोगों में खासतौर पर महिलाओं में इन योजनाओं और कार्यक्रमों के प्रति न तो जागरूकता थी और न ही उनकी कोई भागीदारी थी, दूसरा इन्हें लागू करने के लिए जमीनी स्तर पर स्थानीय सत्ता का अभाव था। "महात्मा गांधी" ने कहा था कि जब तक महिलाएं सार्वजनिक जीवन में भाग नहीं लेती, तब तक विकेंद्रीकरण का सपना कभी भी पूरा नहीं हो सकता।[4] इस कथन को 73वें संविधान संशोधन ने व्यावहारिकता प्रदान की। इसने मुख्तयः दो कार्य किए, *पहला* स्थानीय स्तर पर सत्ता के विकेंद्रीकरण को मान्यता, *दूसरा* इस सत्ता में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित किया ।

हरियाणा प्रदेश के लिए यह संशोधन अधिक महत्वपूर्ण रहा, क्योंकि यह ग्रामीण और कृषि प्रधान प्रदेश है। खासतौर से महिलाओं की दशा प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में प्राचीन समय से चिंताजनक रही है, क्योंकि इस क्षेत्र में रूढ़िवादिता और पितृसत्तात्मक सोच देखने को मिलती रही है। इसीलिए प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं को सशक्त करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से निम्नलिखित प्रयास किए गए।

हरियाणा पंचायती राज अधिनियम 1994: 73वें संविधान संशोधन अधिनियम को ध्यान में रखते हुए प्रदेश में दम तोड़ चुकी पंचायतों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया। यह महसूस किया जा रहा था कि जब तक स्थानीय स्तर की संस्थाओं को मजबूत कर उन्हें उचित शक्तियां नहीं दी जाती और उनमें हाशिए पर पड़े वर्गों खासतौर पर महिलाओं को उचित प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाता तब तक ग्रामीण

विकास संभव नहीं है। परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों के विकास और महिला सशक्तिकरण के लिए हरियाणा पंचायती राज अधिनियम 1994 बनाया गया। प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के त्रिस्तरीय ढांचे को अपनाया गया, ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतें, ब्लॉक स्तर पर पंचायत समितियां और जिला स्तर पर जिला परिषदें।[5]

महिलाओं में जागरूकता और आत्मविश्वास का संचार करने और घर की चारदीवारी से बाहर निकालने के लिए इन संस्थाओं के प्रत्येक स्तर पर इनकी कम से कम 33 प्रतिशत भागीदारी निश्चित की। इस अधिनियम के तहत पंचायतों को मजबूत बनाने के लिए उन्हें 29 मदों के 16 महत्वपूर्ण विभागों के कुछ विशिष्ट कार्यो से सम्बंधित शक्तियां और उत्तरदायित्व सौंपें ताकि पंचायतें प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र का संपूर्ण विकास करने में सक्षम हो। उनमें से कुछ विभाग जैसे महिला एवं बाल विकास विभाग, शिक्षा विभाग और स्वास्थ्य विभाग महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण थे। आंगनबाडी केन्द्रों, आईसीडीएस योजना जिसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार लाना है, एमवाईपी कार्यक्रम व अन्य कार्यक्रमों जिनको महिला एवं बाल विभाग के द्वारा महिलाओं के विकास के लिए समय-समय पर बनाए जाते हैं, उनके क्रियान्वयन और निरीक्षण का जिम्मा पंचायतों को दिया गया। इसके अलावा ग्रामीण स्तर पर स्वास्थ्य एवं शिक्षा की व्यवस्था के निरीक्षण की जिम्मेदारी भी पंचायतों को दी गई ताकि पंचायतें महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके।[6]

पंचायती राज चुनाव में दो -बच्चों का मापदंड समाप्तः हरियाणा सरकार ने 1995 में पंचयती राज चुनाव में दो-बच्चों के मानदंड लागू किया था, जिसके अनुसार पंचायती राज चुनाव दो से अधिक बच्चो वाला व्यक्ति नहीं लड़ सकता था। सरकार लगातार यह महसूस कर रही थी, इस शर्त के कारण सामाजिक बुराइयां बढ़ रही है। खास तौर पर जबरन गर्भपात, बच्चे गोद देना आदि, जिसका महिला सशक्तिकरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा था। इसलिए हरियाणा सरकार ने 1 जनवरी 2005 को इसे हटा दिया।[7]

शन्नो देवी पंचायती राज पुरस्कार (2010): यह पुरस्कार उस महिला प्रतिनिधि को दिया जाता है, जिसने महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में और महिला साक्षरता, स्वास्थ्य पोषाहार, शिक्षा का सार्वभौमीकरण, पर्यावरण संरक्षण जैसे क्षेत्रों में उत्कृष्ट कार्य किया हो। इसके तहत दी जाने वाली पुरस्कार राशि एक लाख रुपए है।[8]

पंचायती राज संस्थानों के चुनाव के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यताः हरियाणा पंचायती राज संशोधन विधेयक-2015 द्वारा पंचायत चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता निर्धारित की गई है। सामान्य श्रेणी के उम्मीदवार के लिए दसवीं, महिलाएं व अनुसूचित जाति के पुरूषों के लिए आठवीं, पंच पद के लिए अनुसूचित जाति के लिए पांचवी पास होना अनिवार्य कर दिया गया। यह कदम महिला

सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। अब यह निश्चित हो गया है कि महिला प्रतिनिधि अब अनपढ़ नहीं रहेगी। अब वह स्वयं पंचायतों से संबंधित कागजातों एवं कार्यों को समझ सकेगी और बिना किसी दबाव और बिना किसी सहारे के अपने निर्णय ले सकेगी।[9]

साक्षर महिला समूह (एसएमएस): साक्षर और शिक्षित महिलाओं का एक समूह है जो महिलाओं और बच्चों के उत्थान के लिए एक गाँव के भीतर गठित होता है। यह समूह गांव में महिलाओं में दबी हुई प्रतिभा को उजागर कर समाज में जागृति लाने का कार्य करता है। सबसे अधिक पढ़ी-लिखी महिला इस समूह की प्रधान होती है। इसका मुख्य कार्य महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए ग्राम पंचायत के साथ कार्य करना है। एसएमएस का गठन और उसका पंजीकरण आईसीडीएस के सभी कार्यक्रम अधिकारियों द्वारा किया तय किए जाते है।[10]

7 -स्टार ग्राम योजना: इस योजना के तहत राज्य सरकार का उद्देश्य गांव के लोगों के लिए बेहतर जीवन स्तर को बढ़ावा देना है, ताकि वे अपने ग्रामीण स्तर को सुधार सकें। जो पंचायते विभाग द्वारा निर्धारित सात मानकों में जिसमें लिंग अनुपात, शिक्षा, स्वच्छता, शांति और सद्भाव, पर्यावरण संरक्षण, सुशासन और सामाजिक भागीदारी में अधिकतम अंक प्राप्त करती है, उसे इंद्रधनुष ग्राम पंचायत का नाम दिया जाता है। प्रत्येक मानक के लिए एक विशेष रंग दिया जायेगा, जैसे गुलाबी रंग उस पंचयात को दिया जायेगा, जो गांव स्तर पर लिंग अनुपात में सुधार करने में सर्वोत्तम प्रदर्शन करेगी। यह योजना महिला सशक्तिकरण के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस योजना से प्रोत्साहित हो कर पंचायतें महिलाओं को सशक्त करने की दिशा में कार्य करेगी।[11]

हरियाणा में पंचायती राज में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण: प्रदेश सरकार ने ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में एक असाधारण क़दम उठाते हुए पंचायतों में इनकी आरक्षित संख्या 33 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दी है। आगामी चुनाव में पंचायतों में इनका बहुमत होना निश्चित माना जा रहा है। इस बार महिला प्रतिनिधियों की आवाज पुरूषों की आवाज के समान अपने गांव के विकास के लिए गूंजेगी और विकास के नए आयाम स्थापित करने के अवसर भी मिलेंगे।[12]

प्रभाव

प्रदेश में महिलाओं को सशक्त करने का सबसे बड़ा स्रोत पंचायती राज व्यवस्था बन रही है। इन संस्थाओं ने सत्ता को गांव तक पहुंचाया और इस में महिलाओं की भागीदारी निश्चित कर उनमे न केवल आत्मविश्वास का संचार किया बल्कि राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर आत्मनिर्भर, जागरूक और निर्भय बनने का अवसर दिया। हरियाणा पंचायती राज अधिनियम 1994 से न केवल पंचायतें सशक्त होने लगी

बल्कि सरकारी योजनाओं को ग्रामीण स्तर पर धरातल पर उतारा जाने लगा। खासतौर पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व पंचायतों में बढ़ने से महिलाओं से संबंधित योजनाओं के प्रति इन में जागरूकता को विकसित कर उनका प्रयोग महिलाओं के विकास के लिए करना आरंभ कर दिया। इन संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं की अच्छी खासी संख्या वर्तमान समय में स्थानीय सत्ता में भागीदार बनी हुई है। जहां हरियाणा में 1994 से पहले महिलाओं की सार्वजनिक जीवन में भूमिका न के बराबर थी जबकि मौजूदा समय में इनकी एक औसतन संख्या सार्वजनिक जीवन के कार्यों में भागीदारी को साझा करती है। वर्ष 2016 में प्रदेश में हुए पंचायती राज चुनाव में महिलाओं की भागीदारी इस प्रकार है:

	कुल प्रतिनिधि	महिला प्रतिनिधि	महिला प्रतिनिधि प्रतिशत
पंच	60436	25495	42.18
सरपंच	6186	2565	41.46
पंचायत समिति	2997	1258	41.97
जिला परिषद	416	181	43.50

स्रोतः http://prielections.nic.in/

तालिका के अनुसार इन संस्थाओं में लगभग 42 प्रतिशत महिलाएं हैं। इनकी 33 प्रतिशत भागीदारी ही निश्चित थी लेकिन इस बार नौ प्रतिशत महिलाएं बिना आरक्षण के अपने पुरूष प्रतिद्वंद्वियों के खिलाफ चुनाव जीतने में सफल रहीं जो हरियाणा जैसे पुरूष प्रधान प्रदेश में महिलाओं के लिए एक बडी उपलब्धि है। प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के सर्वोच्च निकाय जिला परिषद के अध्यक्ष पदों की वर्तमान संख्या 21 है और इनमें से 13 पदों पर महिलाएं अध्यक्ष के रूप में चुनी गई है यानि लगभग 62 प्रतिशत है। 13 ये आँकड़े महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण को दर्शाते हैं जिसका आधार ये संस्थाएं बन रही हैं। इतनी बड़ी संख्या में इनकी भागीदारी ने उनमें आत्मविश्वास को बढ़ाया है जिससे उनकी प्रभावशीलता में वृद्धि देखी जा रही है। खासतौर से महिला प्रतिनिधियों के आत्मसम्मान, घर के भीतर और ग्राम समुदाय के बीच सम्मान में वृद्धि हुई है जिसके कारण निर्वाचित महिलाओं में निर्णय लेने की क्षमता में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिला है।[14]

इन संस्थाओं ने न केवल इनको राजनैतिक रूप से सशक्त किया है बल्कि सामाजिक ताकत भी दी है। यदि हम विगत् दशकों में महिलाओं के सामाजिक आंकड़ों का विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से किए गए प्रयासों के कारण इनकी सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ है। हरियाणा पंचायती राज अधिनियम के लागू होने से पहले 1991 की जनगणना के अनुसार महिलाओं की सामाजिक स्थिति की अगर बात करें तो ग्रामीण क्षेत्र में लिंग अनुपात 864 और

महिलाओं की साक्षरता दर लगभग 33 प्रतिशत थी। इस अधिनियम के लगभग 26 वर्ष बाद वर्ष 2021 में ग्रामीण क्षेत्र का लिंग अनुपात 933 और महिला साक्षरता दर 66.4 प्रतिशत दर्ज की गई।[15] जबकि 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर 51 प्रतिशत थी। इनकी स्थिति में सकारात्मक बदलाव हुआ है। यह तथ्य दर्शाते हैं कि इन संस्थाओं के माध्यम से किए गए तमाम प्रयासों के ने महिला सशक्तिकरण में अहम भूमिका निभाई है।

महिला बाल विकास विभाग द्वारा हरियाणा में चलाई जा रही योजनाएं *बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ,* प्रधानमंत्री मातृवंदना योजना, आपकी बेटी हमारी बेटी, वनस्टॉप सेंटर महिलाओं के लिए राज्य संसाधन केंद्र, कामकाजी महिला छात्रावास, किशोरी शक्ति योजना, यौन उत्पीड़न/अन्य अपराधों की पीड़ित महिला/उत्तरजीवियों के लिए मुआवजा योजना-2018, कन्या कोष, तेजाब पीड़ित महिला राहत एवं पुनर्वास योजना, शिशु और छोटे बच्चे के आहार में सुधार आदि इन सभी योजनाओं की सफलता पंचायती राज संस्थाओं पर निर्भर करती है। पंचायतों के जरिए ये योजनाएं, सीधे तौर पर गांव और महिलाओं तक जुड़ पा रही है। दूसरी तरफ महिला प्रतिनिधि द्वारा पंचायतों के माध्यम से महिलाओं से संबंधित मुद्दों को उठाने के अवसर मिल रहे हैं।[16]

पंचायती राज चुनाव में न्यूनतम शिक्षा योग्यता की शर्त लगाए जाने के कारण वर्ष 2016 में हुए चुनाव में उच्च शिक्षा प्राप्त और युवा महिलाएं निर्वाचित हुई। महिला प्रतिनिधियों की औसत आयु लगभग 35 वर्ष रही।[17] युवा जोश और शिक्षा ने इनकी नेतृत्व क्षमता को उजागर किया। इसलिए महिला प्रतिनिधि इस बार पंचायत में विकास के नए आयाम स्थापित कर रही हैं। उदाहरण के लिए, गुरुग्राम जिले के सिंगार पंचायत की 32 वर्षीय सरपंच आमना (कंप्यूटर में बीटेक क्वालीफाइड) ने अपने गांव को पूर्ण रूप से शिक्षित करने के लिए अनेक कार्य किए। रोहतक जिले की गादला गांव की 26 वर्षीय सरपंच रजनी (एमएससी बीएड, नेट पास) ने लड़कियों को स्नातक तक की शिक्षा दिलवाने और महिलाओं की स्थिति सुधारने के पक्ष में अनेक कार्य किए। अंबाला जिले के सुभरी पंचायत की 22 वर्षीय सरपंच निधि (एमएससी और बीएड) ने *बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ अभियान* पर काम किया और अनपढ़ महिलाओं को शिक्षित करने की दिशा में काम किया।[18] धौज गांव की महिला सरपंच ने महिला सशक्तिकरण की दिशा में कई पहल की हैं। इनमें महिलाओं के कौशल विकास लिए कंप्यूटर प्रशिक्षण संस्थान पर काम किया, स्कूली लड़कियों को उनके अधिकारों के लिए प्रेरित किया, पर्दा/घूंघट (घूंघट) प्रथा के खिलाफ अभियान आदि शामिल हैं। करनाल जिले की चन्दसमन्द ग्राम पंचायत की महिला सरपंच ने गंदे पानी को साफ करवाने के उद्देश्य से मनरेगा के तहत तीन तालाबों को विकसित करवाया। अब बागवानी और सिंचाई के उद्देश्य से इनका उपयोग किया जा रहा है। धनी मियां खान ग्राम पंचायत की महिला सरपंच ने महिलाओं के लिए प्रशिक्षण केंद्र बनाया और सुनिश्चित किया कि

गांव का हर बच्चा स्कूल जाए। उनके मार्गदर्शन में उनके गांव ने अपनी बेहतर स्वच्छता और बेहतर लिंग अनुपात के लिए पुरस्कार जीते हैं।[19]

चुनौतियाँ

इस बात में कोई संदेह नहीं है कि पंचायती राज व्यवस्था महिला सशक्तिकरण का दर्पण साबित हो रही हैं। इन संस्थाओं के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को आसानी से हासिल किया जा सकता है। खास तौर से हरियाणा जैसे ग्रामीण प्रदेश में। लेकिन अभी भी प्रदेश में महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को हासिल नहीं किया जा सका है। इनको कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जो इस प्रकार हैं:

- समाज में पितृसत्ता और रूढ़वादिता आज भी विद्यमान हैं, जिसके कारण महिलाएं पंचायतों में सक्रिय भागीदारी नहीं कर पा रही हैं, यदि कोई महिला आगे बढक़र कोई कार्य करना भी चाहती है तो उसे समाज स्वीकार नहीं करता। महिलाएं पुरुषों की सहमति के बिना सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर सकतीं।
- ग्रामसभा पंचायती राज्य की विधायिका और लोकतंत्र की आधारशिला है। यहां पर ग्राम पंचायत के कार्यो, गांव की समस्याओं और समाधान, सामाजिक मुद्दों ग्रामीण विकास, महिलाओं व कमजोर वर्गों के उत्थान से संबंधित चर्चा हो सकती है। लेकिन ज्यादातर गांव में इसकी बैठक खानापूर्ति के तौर पर होती है और उस बैठक में भी महिलाओं की भागीदारी न के बराबर होती है। इसकी बैठक को सुचारू रूप से करवाने और इसमें महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना इस समय एक बहुत बड़ी चुनौती बनी हुई है।
- प्रोक्सी प्रतिनिधित्व : पुरूष अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए महिलाओं की आरक्षित सीटों पर अपने परिवार की ऐसी महिलाओं को चुनाव में लड़वाते हैं जिस पर उनका पूर्ण नियंत्रण हो। अधिकतर महिला प्रतिनिधि अपने परिवार के रसूखदार पुरूष के कारण चुनाव जीतती है और जीतने के बाद वह एक रबड़ की मोहर बन जाती है फिर पंचायतों के सभी कार्य पुरूषों के द्वारा प्रोक्सी प्रतिनिधि बनकर किए जाते हैं।
- अपर्याप्त क्षमताः अधिकतर महिला प्रतिनिधि पहली बार पंचायतों के माध्यम से सार्वजनिक जीवन में प्रवेश करती है। उनके पास पंचायतों के मामले को संभालने के लिए पर्याप्त ज्ञान, अनुभव और कौशल नहीं होता। इसके लिए सरकारी एजेंसियों द्वारा प्रशिक्षण संचालित किए जाते हैं, लेकिन समय पर सभी प्रतिनिधियों को यह प्रशिक्षण नहीं मिल पाता। बड़ी संख्या में महिला प्रतिनिधि अपने कार्यकाल में किसी भी प्रशिक्षण में भाग नहीं ले पाती। सरकारी एजेंसियों द्वारा प्रशिक्षण किसी जगह पर संचालित होता है तो वहां

पर जाने के लिए उनके परिवार के सदस्यों द्वारा उन्हें यात्रा करने और अकेले रहने की भी अनुमति नहीं दी जाती।

- कमजोर पंचायतें: पंचायतों के पास अधिकार और शक्तियों का अभाव है इसके बाद भी जो भी अधिकार और शक्तियाँ दी गए हैं उन पर भी राज्य सरकार की नौकरशाही का नियंत्रण रहता है। पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर नौकरशाही का पूर्ण नियंत्रण है। दूसरा नौकरशाही का नियंत्रण महिला प्रतिनिधियों पर और अधिक देखा जा सकता है क्योकि अधिकतर संख्या पुरूष अधिकारियों की है। पितृसत्तात्मक मानसिकता से ग्रस्त पुरूष अधिकारियों के साथ महिला प्रतिनिधियों का स्वतंत्र रूप से बातचीत करना मुश्किल हो जाता है जब भी इनसे बात करने की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम निश्चित तौर पर कह सकते हैं कि हरियाणा में पंचायती राज संस्थाएं महिला सशक्तिकरण का प्रमुख माध्यम चुकी हैं। हरियाणा पंचायती राज अधिनियम 1994 के लागू होने के बाद अभूतपूर्व संख्या में महिलाएं घर की रसोई से सार्वजनिक जीवन में प्रवेश कर रही हैं। प्रदेश सरकार भी महिला सशक्तिकरण के प्रति संवेदनशील दिखाई दे रही है। इसलिए लगातार इन संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं को सशक्त करने के प्रयास किए जा रहे है। प्रदेश में महिला प्रतिनिधि ग्राम पंचायतों में दो तरह से महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, एक तो ग्रामीण विकास की योजनाओं को बनाकर और दूसरा महिला सशक्तिकरण से संबंधित सरकारी कार्यक्रमों को ग्रामीण परिवेश तक पहुंचाकर, जिससे गांव और खास तौर पर महिलाओ का विकास हो रहा है। जिसका परिणाम हमारे सामने आ रहा है, लिंग अनुपात और महिला साक्षरता दर में सुधार हो रहा है, लेकिन अभी भी पंचायतें महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को संपूर्ण रूप से हासिल नहीं कर पा रही है। ग्रामीण परिवेश में अभी भी इनकी साक्षरता दर संतोषजनक नहीं है और न ही अभी तक रढ़िवादिता और पुरूषवादी सोच में सकारात्मक बदलाव हुआ है जिसके कारण इनकी पंचायतों में भूमिका निर्णायक नहीं हो पा रही है। ऐसा नहीं है कि सरकारी प्रयासों में कमी है या फिर पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं का सशक्तिकरण नहीं हो सकता। इस को प्रभावी बनाने के कुछ सुझाव है, जो इस प्रकार हैं:

- शिक्षा मनुष्य को जागरूक और मजबूत बनाती है। इसलिए महिलाओं को ना सिर्फ साक्षर बनाना है बल्कि उनको उच्च शिक्षा मिल सके इसके लिए सरकार को प्रभावी कदम उठाने होगे। प्रदेश में हमने देखा कि उच्च शिक्षा प्राप्त महिला प्रतिनिधि पंचायतों में निर्णायक भूमिका अदा कर रही है।
- पंचायतों को अधिक सशक्त करना होगा। इन्हे और अधिक अधिकार और

शक्तियाँ देनी होगी इस पर से नौकरशाही के नियंत्रण को कम करना होगा। सशक्त पंचायतें महिलाओं को सशक्त कर पाएगी।

- जहां पर महिला प्रतिनिधि कार्य कर रही हो सरकार द्वारा सुनिश्चित किया जाए कि वहां पर महिला पंचायत अधिकारी हो ताकि महिलाएं खुलकर उनसे विचार-विमर्श कर सकें।
- सरकार की ओर से विशेष तौर से महिला प्रतिनिधियों को आर्थिक सहायता देनी चाहिए, ताकि महिलाएं आर्थिक रूप से मजबूत हो सके और उनका पूरा ध्यान पंचायतों के कार्यों पर हो। ऐसा करने से महिलाओं में चुनाव लड़ने की एक प्रतियोगिता पनपने लगेगी।
- पहली बार निर्वाचित हुई महिला प्रतिनिधियों के लिए शुरुआती समय में ही उनके जिले में विशेष तौर पर अनिवार्य प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।
- सरकार के ग्रामीण विकास और महिला सशक्तिकरण के कार्यकर्मो/योजनाओं में और इनके निष्पादन में महिला प्रतिनिधियों को शामिल करने की आवश्यकता है।
- सरकार को पंचायतों में प्रोक्सी प्रतिनिधित्व के खिलाफ सख्त कदम उठाने होंगे और सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि ग्राम सभा की बैठक धरातल पर और समय पर हो और उसमें महिलाओं की संख्या बढ़ाने के लिए विशेष कदम भी उठाने होंगे।

संदर्भ

1. आर्या, मीना. (2017). पंचायती राज संस्थाएँ एवं महिला सशक्तिकरणः उत्तराखण्ड़ के विशेष सन्दर्भ में. जर्नल ऑफ़ अचार्य नरेंद्र देव रिसर्च इंस्टीट्यूट।
2. अश्वनी. (2016). पचायती राज संस्थाओं मे अनुसूचित जाति व जनजाति नेतृत्व का अध्ययन. रिव्यू जर्नल ऑफ़ पॉलीटिकल फिलॉसफी।
3. दलाल, राजबीर सिंह. (2012). रोल ऑफ पी.आर.आई. 'एस इन वूमेन एंपावरमेंटः ए स्टडी ऑफ सिरसा डिस्ट्रीक्ट. एशियन एकेडमिक रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंस एंड ह्यूमैनिटीज, 1(4)।
4. नायक, एन.बी. (2016). एंपावरमेंट ऑफ वूमेन रिप्रेजेंटेटिव्स इन पंचायती राज. जर्नल ऑफ पॉलिटिक्स एंड गवर्नेंस. 5-18।
5. चाहर, एस.एस. (2000) पंचयती राज इन हरियाणारू एन ओवरव्यू "(गवर्नेंस एट ग्रासरूट्स लेवल इन इंडिया, मक.) नई दिल्लीरू कनिष्का पब्लिशर।
6. हरियाणा सरकार. (2004, 14अक्टूबर). पंचायत निदेशालय रिपोर्ट. Notification No. S.O. 202/H.A. 11/1994/S/209/2004।
7. https://www.epw.in/journal/2006/01/special-articles/two-child-norm-htmlTribune India ।

8. (2010, October 18). हरियाणा में महिलाओं के लिये तीन नये अवार्ड. January, from The Tribune Trust website: https://www.dainiktribuneonline.com /news / archive/gurugram/%E0%A4%B9%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE %E0%A4%A3%E0%A4%BE&%E0%A4%AE%E0%A5%87 %E0%A4%82%E0%A4 %AE%E0%A4%B9%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A4%BE%E0%A4%93%E0%A4%82&%E0%A4%95%E0%A5%87%E0%A4%B2%E0%A4%BF%E0%A4%AF% E0%A5%87%E0%A4%A4%E0%A5%80%E0%A4%A8%E0%A4%A8 %E0%A4%AF%E0%A5%87 %E0%A4%85%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%A1-205909

9. हरियाणा सरकार राजपत्र. (07 सितंबर, 2015)।

10. माथुर, डी. (2017). केस स्टडी ऑन इनोवेटिव स्कीम फॉर वूमेन'एस एंपावरमेंट इन हरियाणा. इंटरनेशनल जर्नल आफ रिसर्च इन सोशल साइंस।

11. Retrieved January 8, 2022, from Gov.in website: http://haryanadp.gov.in/SCHEMES/7-star-Gram-Panchayat-Rainbow-Scheme।

12. हरियाणा सरकार राजपत्र. 25 अगस्त, 2020।

13. Retrieved from http://prielections.nic.in ।

14. भारत सरकार. (2008). स्टडी ऑन EWRs इन पंचायती राज इंस्टीट्यूशंस. पंचायती राज मंत्रालय।

15. Retrieved from Gov-in:8081 website: http://lsi.gov.in:8081/jspui/bitstream/123456789/4722/1/50251-1991-SDP.pdf

16. भारत सरकार. (2019–2021). राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण रिपोर्ट. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय।

17. महिलाओं के लिए योजनाएं. (द.क.). Retrieved from Gov-in website: https://wcdhry.gov.in/schemes-for-women।

18. Jha, S.K. (2020, March 8). International Women's Day: हरियाणा के पंचायती राज सिस्टम की ताकत बनीं महिलाएं. Dainik Jagran. https://www.jagran.com/haryana/panchkula-women-become-strength-of-haryanas-panchayati-raj-system-20095640-html।

19. चौधरी, कृष्ण चंद्र. (2018,जुलाई). पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी. कुरुक्षेत्र पत्रिका।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम : स्वस्थ ग्राम आधार स्तम्भ

ब्रजेश कुमार मिश्र

lkjk'k *भारत में ग्रामीण संस्कृति का विकास आदि काल से ही होता रहा है। यह व्यवस्था आज भी विद्यमान है। यद्यपि वर्तमान सदी के तीसरे दशक के आरम्भ तक आते-आते ग्रामीण भारत का स्वरूप वह नहीं रहा है जो पहले हुआ करता था। इसके पीछे मूल कारण पंचायती राज संस्था का मजबूत होना है। ग्रामीण भारत के राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में अब व्यापक बदलाव आ गया है। 'डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम' ने ग्रामीणों के जीवन शैली को बदल दिया है। ग्रामीण जीवन शैली में एक और बदलाव राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम के जरिए भी आया है। प्रस्तुत शोध पत्र में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम के वर्तमान स्वरूप को व्याख्यायित करते हुए उसके भारत के ग्रामीण क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है।*

प्रस्तावना

स्वास्थ्य किसी भी राज्य के विकास का मूल आधार है। बेहतर स्वास्थ्य के अभाव में कोई भी राज्य अपना सर्वोत्तम विकास नही कर सकता है। सम्प्रति लोक कल्याणकारी राज्यों के द्वारा स्वास्थ्य के क्षेत्र में व्यापक कार्य किए गए हैं। पंचायतीराज के संवैधानिक प्रावधानों के लागू होने के पश्चात् 'ग्रास रूट स्तर' पर बहुत सी योजनाओं को संचलित किया गया है जिसने समृद्ध भारत के विकास में योगदान दिया है।

भारत सरकार ने देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को सुलभ, वहनीय और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सुविधा प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एन. आर.एच.एम) की शुरूआत की है। इस मिशन का प्रमुख उद्देश्य मातृ और शिशु मृत्युदर कम करना और विशेष तौर पर कमजोर वर्गों तक बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं को पहुँचाना है। वर्ष 2013 में एन.आर.एच.एम. को राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत सम्मिलित किया गया है, जिसके दो प्रमुख घटक– राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन

(एन.आर.एच.एम.) और राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एन.यू.एच.एम.) बनाए गए है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अन्तर्गत प्रमुख राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों का विवरण तालिका एक में दर्शाया गया है[1]। –

rkfydk l-&01

Ø-l-	ie[k jk"Vªh; LokLF; dk;ZØe	e[; gLr{ki {k=
1	प्रजनन, मातृत्व, नवजात, बाल स्वास्थ्य और किशोर (आर.एम. एन.सी.एच) सेवाएं	• माता का स्वास्थ्य • सुरक्षित गर्भपात सेवाओं तक पहुँच • प्रजनन पथ संक्रमणों (आर.टी.आई) और यौन संचारित संक्रमणों (एस.टी.आई.) की रोकथाम और प्रबन्धन • लिंग आधारित हिंसा • सार्वभौमिक टीकाकरण • बाल स्वास्थ्य जांच और पूर्व हस्तक्षेप सेवाएं • किशोर स्वास्थ्य • परिवार नियोजन • घटते लिंग अनुपात पर ध्यान देना
2	संचारी रोगों का नियंत्रण	• राष्ट्रीय वैक्टर जनित रोग नियंत्रण (एन.वी.बी.डी.सी.पी.) • संशोधित राष्ट्रीय तपेदिक नियंत्रण कार्यक्रम (आर.एन.टी.सी.पी.)
3	गैर-संचारी रोगों (एन.सी.डी.) का नियंत्रण	• राष्ट्रीय कैंसर, मधुमेह, कार्डिया-वैस्कुलर रोग और आघात रोकथाम और नियंत्रण कार्यक्रम (एन.पी.सी.डी.सी.एम) • राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण कार्यक्रम (एन.पी.सी.बी) • राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम (एन.एम.एच.पी.) • राष्ट्रीय वरिष्ठजन स्वास्थ्य कार्यक्रम (एन.पी.एच.सी.ई.) • राष्ट्रीय बधिरता रोकथाम और नियंत्रण कार्यक्रम (एन.सी.पी.सी.डी.) • राष्ट्रीय तम्बाकू नियंत्रण कार्यक्रम (एन.टी.सी.पी.) • राष्ट्रीय उपशामक देखभाल कार्यक्रम (एन.पी.पी.सी.) • राष्ट्रीय जलन रोकथाम और नियंत्रण कार्यक्रम (एन.पी.पी.एम.बी.आई) • राष्ट्रीय फ्लोरोसिस रोकथाम और नियंत्रण कार्यक्रम (एन.पी.पी.सी.ए) • गैर संचारी रोगों के लिए निवारक और प्रोत्साहन स्वास्थ्य देखभाल में देश में वर्धित स्वास्थ्य सेवाओं के लिए आयुष (आयुर्वेद की चिकित्सा प्रणाली) को प्रोत्साहन

इस तालिका के अतिरिक्त ग्रामीण स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने के निमित्त निम्नांकित योजनाओं को सरकार द्वारा संचालित किया जाता है –

मोबाइल चिकित्सा यूनिट (एम.एम.यू.)

एम.एम.यू ग्रामीण और सुदूर इलाकों में सेवाएं पहुंचाने की एक प्रणाली है। यह रोगियों का स्थानान्तरण करने के लिए नहीं है। एम.एम.यू. में चिकित्सकीय और गैर-चिकित्सकीय कार्मिकों, उपकरणों/उपस्करों और मूल प्रयोगशाला सुविधाओं के परिवहन और नैदानिक उपकरणों जैसे एक्स-रे, अल्ट्रासाउंड, ईसीजी मशीन और जनरेटर ले जाने के लिए एक, दो या तीन वाहन सम्मिलित होते हैं। प्रत्येक एम.एम.यू. यूनिट में एक डॉक्टर, एक नर्स, एक रेडियोलॉजिस्ट, एक लैब सहायक, एक फार्मासिस्ट और एक सहायक तथा चालक होता है। यूनिट में दवाईयों का भी प्रावधान है।

जननी सुरक्षा योजना (जे.एस.वाई.)

इस योजना का लक्ष्य गर्भवती महिलाओं को सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं में प्रसव कराने के लिए प्रोत्साहित करके उनमें मातृत्व मृत्य को कम करना है। इस योजना के अन्तर्गत, सरकारी स्वास्थ्य सुविधा में जन्म देने के लिए पात्र गर्भवती महिलाओं को नकद सहायता प्रदान की जाती है।[2]

यह कार्यक्रम सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थानों में प्रसव कराने वाली सभी गर्भवती महिलाओं को सीजेरियन खण्ड सहित बिल्कुल मुफ्त और बिना खर्च प्रसूति का पात्र बनाता है। योजना के तहत लाभों में मुफ्त दवाईयाँ, निदान, और स्वास्थ्य संस्थानों में ठहरने के दौरान भोजन, मुफ्त रक्त की व्यवस्था, घर से स्वास्थ्य संस्थान तक और वापसी का मुफ्त परिवहन, और बिना उपयोक्ता शुल्क शामिल है। एक वर्ष तक आयु के शिशुओं के इलाज के लिए भी इसी प्रकार के लाभ प्रदान किए जाते हैं।[3]

मिशन इन्द्रधनुष

मिशन इन्द्रधनुष, इस टीकाकरण कार्यक्रम का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि दो वर्ष से कम आयु के सभी बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं का टीके से निवारण योग्य सात रोगों जैसे कि डिप्थीरिया, काली खांसी, टिटनस, तपेदिक (टीबी), पोलियो, हैपेटाइटिस बी और खसरा के लिए पूर्ण टीकाकरण किया गया है। इसके अतिरिक्त, चुने हुए राज्यों में जहाँ ये रोग अधिक प्रचलित हैं, जापानी इन्सिफलाइटिस (जेई) और हैमोलियस इनफ्लुएंजा टाइप बी (एच.आई.बी.) के टीके भी उपलब्ध कराए जाते हैं।[4]

राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम (आर.बी.एस.के.)

इस कार्यक्रम में 4 डी यानी जन्म के समय विकारों, रोगों, न्यूनताओं, विकलांगता

सहित विकास में देरी को जल्दी पता लगाने और प्रबंधन के माध्यम से बाल स्वास्थ्य जांच और पूर्व हस्तक्षेप सेवाओं का प्रावधान है।[5]

स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अंतर्गत स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम विशेष रूप से स्कूल जाने वाले बच्चों की शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य आवश्यकताओं पर ध्यान देने के लिए है। इसके अतिरिक्त, इसमें पोषण हस्तक्षेपों, योग सुविधाओं और काउंसलिंग का भी प्रावधान है।

राष्ट्रीय वैक्टर जनित रोग नियंत्रण (एन.वी.बी.डी.सी.पी.)

एन.वी.बी.डी.सी.पी. भारत में वैक्टर जनित रोगों यानी मलेरिया, डेंगू, फीलपांव, कालाजार, जापानी इन्सेफिलाइटिस और चिकुनगुनिया की रोकथाम और नियंत्रण के लिए है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आर.एस.बी.वाई.)

आर.एस.बी.वाई. योजना श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा इस योजना के तहत गरीब परिवारों को इलाज के लिए 30,000 रूपये तक की सहायता का प्रावधान है, जिनका इलाज अस्तपाल में होना आवश्यक है।

लाभार्थियों में गरीब और जरूरतमंद यानी जिला बी.पी.एल. सूची में सूचीबद्ध बी. पी.एल., रेढ़ी-ठेले, वाले, मनरेगा श्रमिक जिन्होंने पिछले वर्ष में न्यूनतम 15 दिनों का कार्य किया है, बीड़ी श्रमिक, घरेलू कामगार, सफाई कर्मी, खान कर्मी, रिक्शा चलाने वाले/टैक्सी/ऑटो चालक, लाईसेंस शुदा रेलवे कुली और कल्याण बोर्डों से पंजीकृत निर्माण श्रमिक शामिल होंगे।

स्वास्थ्य सुविधाएं और स्वास्थ्य संस्थान

स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं के तीन स्तर– *प्राथमिक, द्वितीयक* और *तृतीयक* होते हैं:–

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल– यह व्यक्तियों और परिवारों तथा स्वास्थ्य प्रणाली के मध्य सम्पर्क का पहला स्तर है। इसमें माँ और बच्चे की देखभाल, परिवार नियोजन, टीकाकरण, सामान्य रोगों या चोटों का इलाज, अनिवार्य सुविधाओं की व्यवस्था, स्वास्थ्य शिक्षा, भोजन और पोषण की व्यवस्था और सुरक्षित पेय जल की पर्याप्त आपूर्ति शमिल है।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल, ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य उप-केन्द्रों और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के नेटवर्क के माध्यम से प्रदान की जाती है। ग्राम स्तर पर आशा, आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और ए.एन.एम. जागरूकता सृजन, मूल रोगनिवारक स्वास्थ्य सुविधाओं और सामुदायिक स्तर सेवाओं तक पहुंच की सुविधा प्रदान करते हैं।

द्वितीयक स्वास्थ्य देखभाल– द्वितीयक स्वास्थ्य देखभाल में रोगियों को इलाज के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों से बड़े अस्पतालों में विशेषज्ञों के पास भेजा जाता है। द्वितीयक स्वास्थ्य देखभाल हेतु स्वास्थ्य केन्द्रों में जिला अस्पताल और ब्लॉक स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र शामिल होते हैं

तृतीयक स्वास्थ्य देखभाल– इसमें, आम तौर पर प्राथमिक और द्वितीयक स्वास्थ्य देखभाल के संदर्भ पर विशिष्ट परामर्श देखभाल प्रदान की जाती है। गम्भीर बीमारी के लिए विशिष्ट गहन देखभाल यूनिटों, उन्नत नैदानिक सहयोग सेवाओं और विशिष्ट चिकित्सा कार्मिक की सुविधाएं प्रदान की जातीं हैं। *तृतीयक* देखभाल सेवा मेडिकल कॉलेजों और उन्नत चिकित्सा अनुसंधान संस्थानों द्वारा प्रदान की जाती है।

स्वास्थ्य केन्द्र समितियों में विभिन्न समितियाँ और पदाधिकारी होते हैं। विभिन्न स्तरों पर उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाएं निम्नांकित हैः –

- *ग्राम स्तर पर–* ग्राम स्तर पर, मूल स्वास्थ्य और पोषण सुविधाएं स्वास्थ्य पदाधिकारियों जैसे प्रत्याशित सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (आशा), सहायक नर्स मिडवाइफ (एएनएम) और आगंनबाड़ी कार्यकर्ता द्वारा प्रदान की जाती है। ग्राम स्तर पर प्रति 400 से 800 की आबादी पर एक आईसीडीएस केन्द्र और प्रति 5000 की आबादी पर एक स्वास्थ्य उप-केन्द्र होता है।
- उप केन्द्र पर दो एएनएम होते हैं। उप-केन्द्र से ऊपर प्रति 30000 की आबादी पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में, चिकित्सा अधिकारी (एमओ), स्वास्थ्य कार्यकर्ता जैसे नर्स, कम्पाउंडर या फार्मासिस्ट और परिचर होते हैं। ये सभी स्वास्थ्य सेवाएं सामान्य तौर पर ग्राम और ग्राम पंचायत या ब्लॉक से निम्न स्तर पर उपलब्ध होती है।
- *ब्लॉक स्तर पर–* डॉक्टरों, नर्सों ब्लॉक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (बी.पी.एच.सी) या सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र में चिकित्सा अधिकारी, विशिष्ट डॉक्टर, नर्सें तथा परिचर होते हैं। इन केन्द्रों में नैदानिक सुविधाएं और मेडिकल टैक्नोलॉजिस्ट भी होते हैं। सामान्य तौर पर बीपीएचसी/सीएचसी में 30 बिस्तर होते हैं।
- *उप-मण्डलीय स्तर पर–* उप मण्डलीय अस्पताल में लगभग 150 बिस्तरे होते हैं और ऐसे अस्पतालों में सामान्यतः विशेष सुविधाएं प्रदान की जाती हैं।
- *ब्लॉक और उप मण्डल के बीच* अस्पतालों के दो और प्रकार होते हैं –ग्रामीण अस्पताल (आरएच) और राज्य सामान्य अस्पताल। ग्रामीण अस्पतालों में सुविधाएं बीपीएचसी के समान ही होती हैं किन्तु बिस्तरें अधिक होते हैं और राज्य के सामान्य अस्पतालों में सुविधाएं उप मण्डलीय अस्पताल के समान ही होती है।

- *जिला और राज्य स्तर पर–* जिला अस्पताल में सामान्य तौर पर 500 या अधिक बिस्तरे और उप-मण्डलीय अस्पतालों की तुलना में कुछ अधिक विशिष्ट सुविधाएं होती हैं।
- राज्य स्तर पर सामान्य तौर पर विशिष्ट अस्पताल, मेडिकल कॉलेज और अस्पताल उपलब्ध होते हैं।

ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य के प्रमुख मंच

ग्राम स्तर पर आशा, ए.एन.एम और आंगनबाड़ी कार्यकर्ता प्रमुख स्वास्थ्य सेवा प्रदाता है जो नियमित तौर पर समाज में रहते हैं और लोगों की स्वास्थ्य प्रणाली और ग्राम पंचायत के बीच सम्पर्क सेतु का कार्य करते हैं।

1. *आशा–* राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का एक प्रमुख घटक देश के प्रत्येक गांव को आशा नामक एक प्रशिक्षित सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता उपलब्ध कराना है। आशा ग्राम पंचायत द्वारा चुनी गई महिला होती है जो सामान्यतः 1000 आबादी पर एक होती है। आशा सामान्य बीमारियों के लिए सामुदायिक स्तर पर देखभाल करती है। यह पोषण, स्वच्छता, बीमारियों के रोकथाम, टीकाकरण, जन्म पूर्व और जन्म के पश्चात् जांच, आंगनबाड़ियों में स्वास्थ्य देखभाल जैसी सेवाओं की आवश्यकता वाले लोगों को एकत्रित करती है तथा स्वास्थ्य सेवाओं का मार्गदर्शन करती है और गांव के स्वास्थ्य रिकार्ड का रखरखाव करती है।[6]
2. *सहायक नर्सिंग मिडवाइफ (एएनएम)–* ग्रामीण स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में एएनएम बाल स्वास्थ्य कार्यक्रमों पर फोकस रखने वाली प्रमुख क्षेत्रस्तरीय अधिकारी है। यह परिवार कल्याण, मातृत्व स्वास्थ्य और निवारक सेवाएं प्रदान करती है। मातृत्व एवं बाल स्वास्थ्य को बेहतर बनाएं रखने के लिए टीकाकरण की व्यवस्था की देखभाल करती है।
3. *रोगी कल्याण समिति–* रोगी कल्याण समिति (आरकेएम) एक पंजीकृत सोसाइटी है जो अस्पताल के मामलों के प्रबन्धन के लिए अस्पतालों के लिए ट्रस्टियों के समूह के तौर पर कार्य करती है। इसमें स्थानीय पंचायतीराज संस्थाओं, एनजीओ के सदस्य, राज्य स्तर के चुने हुए प्रतिनिधि, राज्य एवं सरकारी क्षेत्र के अधिकारी शामिल होते है। यह रोगी कल्याण हेतु गतिविधियों को चलाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है।
4. *ग्राम स्वास्थ्य स्वच्छता एवं पोषण समिति (बी.एच.एस.एन.सी)–* इसका गठन राजस्व गांव पर किया जाता है। इसका उद्देश्य स्वास्थ्य कार्यक्रमों में सामुदायिक प्रतिभागिता को बढ़ावा देने, स्वास्थ्य गतिविधियों के कार्यान्वयन में सहयोग करने तथा ग्राम पंचायतों के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण के

अंतर्गत, स्वास्थ्य, पोषण और स्वच्छता पर कार्यक्रमों के नियोजन और निगरानी के लिए किया गया है।

5. *आंगनबाड़ी*– अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त करने और बनाएं रखने में सुपोषण की एक प्रमुख भूमिका होती है। महिलाओं, बच्चों और किशोरों में कुपोषण लोक स्वास्थ्य में चिंता का मुख्य विषय है। इस स्थिति से निपटने और बच्चों के समग्र विकास के लिए, ग्रामीण क्षेत्रों में आंगनबाड़ी केन्द्र की स्थापना की गई है। आंगनबाड़ी केन्द्र पर प्रदान की जाने वाली प्रमुख सेवाएं निम्नांकित हैः–
   - छह वर्ष की आयु से कम और गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली माताओं के लिए पूरक पौष्टिक आहार उपलब्ध कराना तथा टीकाकरण करना।
   - छह वर्ष की आयु से कम और गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली माताओं की स्वास्थ्य जांच करना।
   - 15 से 45 वर्ष की आयु समूह की महिलाओं को स्वास्थ्य और पोषण शिक्षा/काउंसलिंग करना।
   - कुपोषण या बीमारी के गंभीर मामलों को स्वास्थ्य उपकेन्द्र प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र या ब्लॉक स्तर के केन्द्र सामुदायित स्वास्थ्य केन्द्रों (सी. एच.सी) या जिला अस्पतालों को रेफर करना।

इन सबके अतिरिक्त आयुष्मान भारत योजना भी एक विशिष्ट योजना है जिसने स्वास्थ्य सेवा वितरण के क्षेत्रीय तथा खण्डित दृष्टिकोण से हटकर एक व्यापक और अपेक्षित प्राथमिक, माध्यमिक तथा तृतीयक स्तर पर सेवा प्रणाली को समग्रित रूप से सम्बोधित करना है। आयुष्मान भारत अबाध्य स्वास्थ्य सेवाओं की ओर एक बड़ा कदम है। यह योजना यूनिवर्सल हेल्थ कवरेज के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु भारत सरकार द्वारा 2017 में अनुशांसित की गई।[7]

अगर देखा जाए तो विगत 15-16 वर्षों में एन.एच.एम. ने स्वास्थ्य की सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की उपलब्धि को सक्षम किया है। इस योजना से मातृ, नवजात और बाल स्वास्थ्य संकेतकों विशेषतः मातृ-मृत्यु अनुपात में, शिशु मृत्यु दर में वैश्विक औसत की तुलना में कमी आई है। इसका आशय है कि एन.एच.एम. ने ग्रामीण स्वास्थ्य के प्रति अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है। सम्प्रति एन.एच.एम. के चलते सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधा में वृद्धि हुई है। इस योजना के समान विकास पर बल दिया है। पहुँच तथा उपयोग में समानता सुनिश्चित करने के निमित्त आकांक्षी जिला कार्यक्रम की शुरूआत 118 जिलों (जो विशेष रूप से पिछड़े हैं।) आरम्भ की गई है।[8] इससे मानव संसाधन में भी वृद्धि हुई है। इसी का प्रतिफल है दुनिया का सबसे बड़ा सामुदायिक स्वास्थ्य स्वयं सेवक कार्यक्रम (आशा) लागू किया गया है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता बढ़ी है।

संदर्भ

1. ग्राम पंचायतों में स्वास्थ्य विकास, सक्रिय पंचायत श्रृंखला पुस्तक-VII, पंचायतीराज मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 15,16
2. https://pmmodiyojana.in/janani-suraksha-yojna
3. वही
4. योजना, फरवरी, 2016, पृ. 52
5. https://hi.vikaspedia.in/health/nrhm
6. कुरूक्षेत्र, वर्ष-52, अंक-12, अक्टूबर, 2016, पृ. 78
7. https://pmjay.gov.in/about/pmjay
8. किसानों की तरक्की की राह कैसे आसान कर रहा है। आकांक्षी जिला कार्यक्रम https://hindi.news18.com/news/nations

हिमाचल प्रदेश पंचायती राज संस्थाओं में युवाओं की बढ़ती भागीदारी

बलदेव सिंह नेगी

Lkkjk'k% *ग्रामीण स्थानीय शासन में पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायती राज संस्थाओं के काम-काज में उल्लेखनीय वृद्धि और जटिलता दोनों को संविधान के 73वें संशोधन के बाद दर्ज किया है। संवैधानिक प्रावधानों के सहयोग से समाज के कमजोर तबके की भागीदारी तो सुनिश्चित हुई है लेकिन कितनी क्रियाशील है यह शोध का विषय है। साथ में यह भी शोध का विषय है कि इन पंयायती राज संस्थाओं में देश की जनसंख्या के एक बड़े हिस्से 'युवाओं' की क्या भागीदारी है। हिमाचल प्रदेश जहां 90 प्रतिशत आबादी ग्रमीण है और 17882 गांव और 3615 ग्राम पंचायतों में रहती है। इस शोध-पत्र में हिमाचल प्रदेश में 2021 के प्रारम्भ में हुए पंचायती राज चुनावों में चुनकर आए प्रतिनिधियों की सामाजिक-आर्थिक पृष्टभूमि का विश्लेषण किया गया है जिसके लिए राज्य चुनाव आयोग के आकड़ों का प्रयोग किया गया है। इस शोध-पत्र के माध्यम से हिमाचल प्रदेश की पंचायतों में निर्वाचित प्रतिनिधियों में युवाओं की भागीदारी, प्रतिनिधियों की शैक्षिणिक, सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि का ब्यौरा दिया गया है जो शोधार्थियों के आगामी शोध और योजनाकारों की नीति निर्माण के लिए मददगार है।*

प्रस्तावना

xkeh.k LFkkuh; 'kklu

स्थानीय सरकार के मायने ऐसी शासन व्यवस्था से है जिसका संबंध एक क्षेत्र विशेष होता है जैसे एक गांव, खण्ड, जिला, कस्बा, शहर या देश। स्थानीय सरकार का संदर्भ उन सभी राजनीतिक संस्थानों से है जिनके पास एक निश्चित अधिकार क्षेत्र में वहां शासन चलाने के लिए निश्चित शक्तियां होती हैं। इसलिए 'स्थानीय सरकार' शब्द का मतलब है कि स्थानीय लोगों के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा स्थानीय

मामलों का प्रशासन और प्रबंधन। यह सरकार का एक रूप है जिसका संप्रभुता में कोई ज्यादा हिस्सेदारी नहीं होती और यह केंद्र सरकार के अधीन है। इनकी जिम्मेदारी एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्न हो सकती है सामान्यतः शिक्षा, स्थानीय योजनाएं, स्थानीय व्यापार और परिवहन, अवकाश और मनोरंजन तथा सामाजिक सेवाएं इनमें शामिल रहती हैं।[1]

भारतीय संदर्भ में स्थानीय शासन की अवधारणा कोई नई नहीं है और न ही इसे विश्व बैंक जैसी बड़ी संस्थाओं से लिया गया है।[2] रूसी मीर या 'Mir' की तरह भारत में स्थानीय शासन व्यवस्था बहुत पुरानी है। रूस के स्थानीय स्वशान के इतिहास में मीर Mir वहां के किसानों का एक स्वशासित समुदाय जो अपने प्रतिनिधियों का खुद चुनाव कर के स्थानीय वनों, शिकार करने के मैदानों और खाली भूमि पर नियंत्रण करते थे। पंचायती राज व्यवस्था भारतीय स्थानीय शासन प्रणाली एक बहुत बड़ा उदाहरण है। पंचायत मतलब पांच आदर योग्य बुजुर्गों की सभा जिन्हें गांवों के लोगों के द्वारा स्वीकारा और चुना गया हो।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अपनी किताब 'ग्राम स्वाराज' में पंचायतों पर अपना दृष्टिकोण का उल्लेख किया। गांधी जी का विचार था कि गांव की सरकार प्रबंधन का पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किया जाना चाहिए जिसमें में गांव के पांच व्यस्क पुरूष या स्त्री शामिल हों।[3] इसी प्रकार देश के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपनी किताब *'डिस्कवरी ऑफ इण्डिया'* में उल्लिखित किया कि परम्परागत रूप से ग्राम पंचायत या निर्वाचित परिषद् के पास कार्यपालिका के साथ-साथ न्यायिक सहित बड़ी शक्तियां थीं। लेकिन ये पारंपारिक स्थानीय शासन प्रणाली औपनिवेशिक काल के दौरान खत्म हो गईं।[4]

बीसवीं सदी में महात्मा गांधी ने पंचायती राज संस्थाओं को फिर से जीवित करने पर जोर दिया और इन संस्थाओं को लोकतांत्रिक मूल्यों के आधार पर उचित शक्तियाँ देकर सशक्त करने पर बल दिया ताकि गांवों वासियों को ग्राम स्वाराज या ग्राम गणतंत्र का आभास हो सके। स्वाधीनता संग्राम में भी ग्राम पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही जो गांधी के वैचारिक ढांचे का केंद्र था। उन्होंने निर्धारित किया कि पांच बुद्धिमानों की ग्राम पंचायत बननी चाहिए, जहां उन व्यक्तियों की कुछ न्यूनतम योग्यता होनी चाहिए और हर साल चुनावों के माध्यम से चुने जाने चाहिए। यह संस्थाएं एक पूर्ण गणतंत्र होंगी लेकिन परस्पर आवश्यकताओं के लिए पड़ोसी पंचायतों और गांवों पर अन्योन्याश्रित होंगी। अपने काम काज चलाने कि लिए पंचायतों के पास सभी विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका शक्तियां होंगी। गांधीजी ने हमेशा ही समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व जैसे सामान्य सिद्धांतों के आधार पर सामजिक, आर्थिक और राजनितिक क्षेत्रों की एक विकेन्द्रीकृत प्रणाली चाहते थे। इसी प्रणाली को वो पश्चिम द्वारा पैदा किए साम्राज्यवाद, बेरोजगारी, उपनिवेशवाद और अपराधीकरण जैसी समस्याओं का सामाधान मानते थे।

वैश्वीकरण, उदारीकरण और लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में संघीय, प्रांतीय प्रशासन के समान स्थानीय शासन का अपना महत्व है। वास्तव में स्थानीय स्वशासन की उपयोगिता और महत्व तब और बढ़ जाता है जब हम इसकी चर्चा सुशासन के संदर्भ में करते हैं। क्योंकि भागीदारी, पारदर्शिता, जवाबदेही, प्रभावशीलता, दक्षता, कानून का शासन इत्यादि सुशासन के मुख्य घटक हैं। उसी प्रकार राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भारतीय संदर्भ में पंचायत की परिकल्पना भी एक गांव में पांच सम्मानीय बुजुर्गों की सभा जिसें गांवों के लोगों के द्वारा स्वीकारा और चुना गया हों की सभा के रूप की है। ऐतिहासिक दृष्टि से स्थानीय स्वाशासन व्यवस्था वैदिक काल प्रचलित रही है आधुनिक समय में इसकी उपयोगिता लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में कई गुणा बढ़ी है। भारत में पंचायतें ग्रामीण क्षेत्र और नगरपालिकाएं शहरी क्षेत्र में स्थानीय स्वाशासन की महत्वपूर्ण इकाईयाँ हैं। महात्मा गांधी ने गांव को देश की प्रगति का आधार माना इसलिए वह गांवों को सशक्त करने की वकालत हमेशा करते रहेः–

> "आजादी की शुरूआत धरातल से होनी चाहिए इसलिए हरेक गांव अपने आप में गणतंत्र या पंचायत के पास पूर्ण शक्तियां हो। इसलिए यह इस प्रकार है कि प्रत्येक गांव आत्मनिर्भर होना चाहिए और अपने मामलों का प्रवंधन स्वयं करे यही नहीं गांव इतने सक्षम हो कि यह बाहरी हमले से अपना बचाव भी खुद कर सके।" ....हरिजन, 28.07.1946ः 85.32

पंयायती राज व्यवस्था

भारत में ग्राम पंचायतों के लम्बे इतिहास और स्वतंत्रता आंदोलन व पंचायती राज संस्थाओं के संवर्धन में महात्मा गांधी की भूमिका के बावजूद संविधान के पहले प्रारूप की कोई जगह नहीं थी। पंचायत राज के समर्थकों और विरोधी गुटों के बीच एक लम्बा वाद-विवाद हुआ। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर जो संविधान सभा के अध्यक्ष का एक चरम दृष्टिकोण था, कि गांव क्या है, स्थानीयता का गढ़, अज्ञानता, संकीर्णता और साम्यावाद की मांद है?[5] बहुत सारे कांग्रेस के बड़े नेता भी स्थानीय लोगों के साथ शक्तियों को नहीं बांटना चाहते थे। तथापि, गांधीवादी नेता को सशक्त बनाने के लिए पंचायती राज को अहम मानते थे और उनके पास जबावी दृष्टिकोण था जैसे मैसूर से माधव राव मानते थे कि बहुत से गांव गुटबाजी में जकड़े हुए हैं और छुआछूत जैसी कुरीतियों में लिप्त हैं।[6] अंततः पंचायत राज को संविधान के भाग-4 अनुछेद 40 (राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत) में स्थान मिला। लेकिन जिस प्रकार से महात्मा गांधी ने ग्राम पंचायतों की परिकल्पना की थी सिर्फ राज्य के नीति-निर्देश सिद्धांतों में जिक्र करने मात्र से पंचायती राज का विकास संभव नहीं था।

आजादी के बाद साल 1952 में सरकार के द्वारा ग्रामीण विकास के लिए कई सामुदायिक विकास परियोजनाएं शुरू की लेकिन इन सारी परियोजनाओं की योजना में स्थानीय लोगों की भागीदारी नहीं थी जिस पर महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज का

खास जोर था, फलतः ये परियोजनाएं इतनी सफल नही रहीं। साल 1957 में बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में गठित कमेटी ने सामुदायिक कार्यों में जनभागीदारी की संस्तुति की जिन का गठन वैधानिक प्रतिनिधि निकायों के माध्यम से हो। राष्ट्रीय विकास परिषद ने इस लोकतांत्रिक विकेंद्रीयकरण की पुष्टि की और उपयुक्त संरचना निर्माण के लिए इसे राज्यों पर छोड़ दिया। बलवंत राय मेहता द्वारा प्रधानमंत्री नेहरू को पंचायती राज प्रणाली शुरू करने बारे आवगत कराया था लेकिन न तो वह और न ही राज्य विकेंद्रीयकरण में इच्छुक थे जो लोगों को शक्तियों को शक्तियां देते। मेहता कमेटी ने सामुदायिक परियोजनाओं और ग्रामीण भारत की सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों पर पड़ने वाले इसके प्रभाव का अध्ययन किया और स्थानीय शासन में सुधार के लिए संस्तुति की।[7] हांलाकि राजस्थान पहला राज्य बना जब 2 अक्तूबर 1959 को पंचायती राज प्रणाली की शुरूआत तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू द्वारा की गई उन्होंने नए भारत की दिशा में क्रान्तिकारी और ऐतिहासिक कदम बताया। एस. के.डे. सामुदायिक विकास मंत्राल्य के पहले मंत्री और पंचायती राज के वास्तुकार ने ग्राम सभा और लोक सभा के बीच एक जैविक और अंतरग संबंध, व्यक्ति को ब्रह्मण्ड से जोड़ने की कल्पना की।[8] साल 1959 से 1964 के बीच के समय को पंचायती राज संस्थाओं के स्वर्णिम काल के रूप व्यक्त किया जा सकता है जब अधिकांश राज्यों ने पंचायती राज अधिनियम पारित ताकि इस प्रणाली को देश भर में पहुच बढ़ाई जा सके।

पंचायती राज संस्थाओं के संदर्भ में बलवंत राय मेहता कमेटी के अलावा अशोक मेहता कमेटी (1977) ने दो स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था जिला परिषद और मंडल स्तर का सुझााव दिया, अन्य महत्वपुर्ण कमेटिया हनुमन्ता राव कमेटी (1983), जी.वी. के. राव कमेटी (1985) जिसमें जिला को योजना की आधार इकाई बनाने की संस्तुति की, एल.एम. सिघवीं कमेटी (1986) की संस्तुतियों में मुख्यतः ने ज्यादा से ज्यादा वित्तीय संसाधनों को उपलब्ध कराने और पंचायतों को और सुदृढ़ बनाने के संविधानिक दर्जा इत्यादि शामिल थे।

संविधान का 73वें संशोधन और पंचायती राज संस्थाएं

संशोधन से पहले पंचायतों का काम लोगों के पारिवारिक मतभेदों को सुलझाने मात्र तक सीमित था ये मतभेद चाहे पारिवारिक विवाद या भूमि विवादों से सम्बन्धित होते थे। पंचायतों का हस्तक्षेप विकासात्मक कार्यों में नाम मात्र का था क्योंकि नियमित रूप से चुनावों का न होना, गांवों के प्रभावशाली परिवारों का पंचायतों पर दशकों तक कब्जा रहता था और कमजोर वर्ग जिसमें महिलाओं, दलितों और आदिवासियों का इन पंचायतों में कोई प्रतिनिधित्व न होने के कारण सुनवाई व भागीदारी नहीं होती थी।

संविधान के 73वें संशोधन के अनुरूप पंचायती राज अधिनियम 1992, 24 अप्रैल, 1993 से लागू किया गया। इस अधिनियम की मुख्य विशेषताओं में 'पचायतें' शीर्षक के नाम से संविधान के भाग-9 में जोड़ा गया। ग्रामसभा को मुख्य आधार इकाई बनाया

गया जिसमें उस के सभी मतदाता व्यस्क सदस्य होगें। त्रि-स्तरीय पंचायती राज प्रणाली जिसमें ग्राम, मध्यवर्ती स्तर पर मण्डल/तालुक/ब्लॉक और जिला स्तर पर (अनुच्छेद 243 बी)। सभी स्तरों पर सीटों को प्रत्यक्ष चुनावों के माध्यमों से भरा जाएगा (243 सी (2)), एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित और इतनी ही अनुसूचित जाति, जनजाति व महिला वर्ग के लिए (अनुच्छेद 243 डी.), हर पांच साल में चुनाव, पंचायते भंग होने की परिस्थिति में छह माह के भीतर अनिवार्य चुनाव पर (अनुच्छेद 243 ई.), हर राज्य में स्वतंत्र चुनाव आयोग जो निर्वाचक नामावली का पर्यवेक्षण, निर्देशन और नियंत्रण करेगा (अनुच्छेद 243 के.), पंचायतें आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करेगी (अनुच्छेद 243 जी.), हर राज्य में वित आयोग की स्थापना (अनुच्छेद 243 आई.) और संविधान की ग्यारवीं अनुसूची में 29 कार्यों को पंचायती राज निकाय के दायरे में रखा गया है।

संविधान के 73वें संशोधन से पंचायती राज संस्थाओं के पास बहुत सारी जिम्मेदारियों और शक्तियों का विकेंद्रीकरण हुआ है। केन्द्र और राज्य की सरकारों के बाद स्थानीय सरकार यानि ग्रामीण स्तर पर पंचायतों के काम काज में क्रान्तिकारी बदलाव इस संशोधन के बाद हुए है।

युवा व पंयायती राज व्यवस्था

सतत् और समावेशी विकास प्राप्त करने में युवाओं के योगदान के महत्व को अंतर्राष्ट्रीय विकास समुदाय के भीतर स्वीकार किया जाता है। संयुक्त राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव 2250 (2015) और 2419 (2018) मानते हैं कि युवा लोग शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देने में बदलाव के एजेंट हो सकते हैं और स्थानीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतराष्ट्रीय, स्तरों पर निर्णय लेने में सार्थक युवा भागीदारी के लिए अधिक से अधिक युवाओं की भागीदारी और अवसरों का आवहान कर सकते हैं। युवा अधिक समावेशी और सार्थक सहभागिता मांग कर रहें हैं और स्वयं विकास की चुनौतियों का समाधान करने के लिए कार्यवाही कर रहें हैं। युवा वर्ग को बड़े पैमाने पर एजेंडा 2030 में पथप्रदर्शक और भागीदार के रूप में माना जा रहा है।[9]

सयुंक्त राष्ट्र की परिभाषा के अनुसार जो व्यक्ति 14-24 वर्ष के आयु वर्ग में है वो युवा है।[10] लेकिन कई देशों के अपने-अपने मापदण्ड हैं जैसे भारत की राष्ट्रीय युवा नीति-2014 के अनुसार 15-29 वर्ष के आयु वर्ग को युवा परिभाषित किया हुआ है और 2011 की जनगणना के मुताबिक 27.5 प्रतिशत आबादी युवाओं के आयु वर्ग आते हैं।[11] हिमाचल प्रदेश ने साल 2018 में "युथ इन हिमाचल प्रदेश–2018" शीर्षक से एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिस में 15 से 35 आयु वर्ग को युवा की श्रेणी में रखा गया है। इस रिपोर्ट के अनुसार 2011 की जनगणना के आधार पर हिमाचल प्रदेश में कुल 24,19,844 व्यक्ति युवा हैं जिसमें 11,98,017 महिलाएं और 12,21,827 पुरूष हैं। इस

प्रकार हिमाचल की कुल आबादी एक बड़ा हिस्सा 35.25 प्रतिशत युवा है।[12] जबकि देश सभी नीतियों में जनसंख्याकीय लाभांश की चर्चा हो रही है और हर योजना और कार्यक्रमों में युवाओं के समावेश के प्रयास किये जा रहे हैं। अब इन युवाओं की अगर देश की 2.5 लाख से ज्यादा पंचायतों में भागीदारी को सुनिश्चित नहीं किया गया तो कहीं न कहीं जिस ग्रामीण विकास के प्रयास हमारी सरकारें कर रही हैं उनसे वांछित परिणाम नहीं मिल सकते।

यह भी कहना मुश्किल है पंचायती राज संस्थाओं युवाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कोई आरक्षण नीति का सहारा लिया जाए। क्योंकि समय के साथ युवाओं में शिक्षा और जागरूकता का स्तर बढ़ने के साथ साथ रोजगार, उद्यमशीलता और कौशल विकास के कई अवसर बहुत सी नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से बढ़ाए जा रहे हैं। लेकिन सवाल यही है कि जो भी कार्यक्रम और योजनाएं हैं उनको धरातल पर आमजन की सहभागिता और पारदर्शिता के साथ लागू और सफल बनाने में में देश की ढाई लाख से ज्यादा पंचायती राज संस्थाओं की बहुत अहम भूमिका है। इन संस्थाओं में अगर देश के युवा बढ़ चढ़ कर हिसा लेते हैं तो इन योजनाओं में भी युवा जोश दिखेगा।

हिमाचल प्रदेश में पंचायती राज संस्थाएँ

भौगोलिक रूप से हिमाचल प्रदेश का कुल क्षेत्रफल 55673 वर्ग किलोमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार यह की कुल जनसंख्या 68,64,602 है जिसमें 34,81,873 (51 प्रतिशत) पुरूष और 33,82,729 (49 प्रतिशत) महिलाएं हैं। अधिकांश 90 प्रतिशत ग्रामीण आबादी और 10 प्रतिशत शहरी आबादी है। यहां का जनसंख्या घनत्व 123 व्यक्ति है, सबसे ज्यादा 405 व्यक्ति जिला हमीरपुर सबसे कम जनसंख्या घनत्व दो व्यक्ति जनजातीय जिला लाहौल-स्पिति का है। प्रदेश में लिंगानुपात की दर प्रति हजार पुरूषों पर 972 महिलाएं है और 2001-2011 दशक में 12.9 प्रतिशत जनसंख्या में वृद्धि दर्ज की गई।[13] प्रशासनिक रूप से प्रदेश में कुल 12 जिले, 81 विकास खण्ड, 52 उप-मण्डल, 75 तेहसीलें, 34 उप-तेहसीलें। प्रदेश में कुल आबादी का 26 प्रतिशत अनुसूचित जाति और छह प्रतिशत जनजाति आबादी है। प्रदेश में कुल 17,882 आबाद गांव हैं जो 3615 ग्राम पंचायतों संगठित है।

हिमाचल प्रदेश में पंचायती राज प्रणाली की स्थापना वैधानिक रूप से वर्ष 1954 में, हिमाचल प्रदेश पंचायती राज आधिनियम, 1952 के अन्तर्गत की गई। अधिनियम के लागू होने से पूर्व प्रदेश में 280 ग्राम पचायतें थी जो 1954 के बाद 466 और 1962 में बढ़कर 638 ग्राम पंचायतें हुई। एक नवम्बर 1966 में पंजाब के कुछ पहाड़ी क्षेत्रों को हिमाचल में मिलाया गया जिसके कारण प्रदेश में ग्राम पंचायतों की संख्या बढ़कर 1965 हो गई। मिलाए गए क्षेत्रों में पंजाब पंचायत सतिकत तथा जिला परिषद अधिनियम के प्रावधानों के अनतर्गत त्रि-स्तरी पंचायती राज प्रणाली गठित थी जबकि हिमाचल

प्रदेश में द्विस्तरीय प्रणाली गठित थी। पुराने और नए क्षेत्रों की पंचायती राज व्यवस्था में एकरूपता लाले के उदेष्य से हिमाचल प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1968 दिनांक 15 नवम्बर 1970 से लागु किया ओर सम्पुर्ण प्रदेश में द्विस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था स्थापित की गई।[14] संविधान के 73वें संशोधन के अनुरूप पंचायती राज अधिनियम, 1994 को 23 अप्रैल 1994 से लागू किया गया।

lkj.kh1 fgekpy in'k e xke ipk;r dh l[;k&1972 l ydj 2020&21

Øe l[;k	lky	xke ipk;r	xke ipk;r dh l[;k e of)
1.	1954 से पहले	280	-
2.	1954	466	186
3.	1962	638	172
4.	1966	1965	1347
5.	1972	2035	70
6.	1978	2357	322
7.	1985	2597	240
8.	1991	2757	200
9.	1995	2922	165
10.	2000	3037	115
11.	2005	3243	206
12.	2010	3243	0
13.	2015	3226	.17
14.	2020	3615	389

lkr% पंचायती राज विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला।

हिमाचल प्रदेश का पुर्ण राज्य का दर्जा मिलने के बाद से पंचायतों की संख्या का विश्लेषण सारणी में दिया गया है कि 1972 में कुल 2035 पंचायते प्रदेश में थी जो साल 1978 में 322 नई जुड़ने से 2357 हो गई। इसी प्रकार साल 1985 में 240, साल 1991 में 200, साल 1995 में 165, साल 2000 में 115, साल 2005 में 206 और साल 2020 में सबसे ज्यादा 389 नईं पंचायतों का गठन किया गया और इनकी संख्या 3615 पहुंच गई।

हिमाचल प्रदेश में 2015 के पंचायत चुनावों के समय कुल ग्रांम पचायतों की संख्या 3226 थी जो 2020–21 में बढ़ कर 3615 हो गई है जिसमें सबसे ज्यादा जिला कांगड़ा 814 ग्रांम पंचायतें, फिर मण्डी 559, शिमला 412, चम्बा 309, सिरमौर 259, हमीरपुर 248, सोलन 240, कुल्लू 235, बिलासपुर 176, किन्नौर 73 और लाहौल स्पिति में 45 हैं।

मानचित्रः 1 हिमाचल प्रदेष का मानचित्र जिसमें जिलावार ग्राम पंचायतों की संख्या

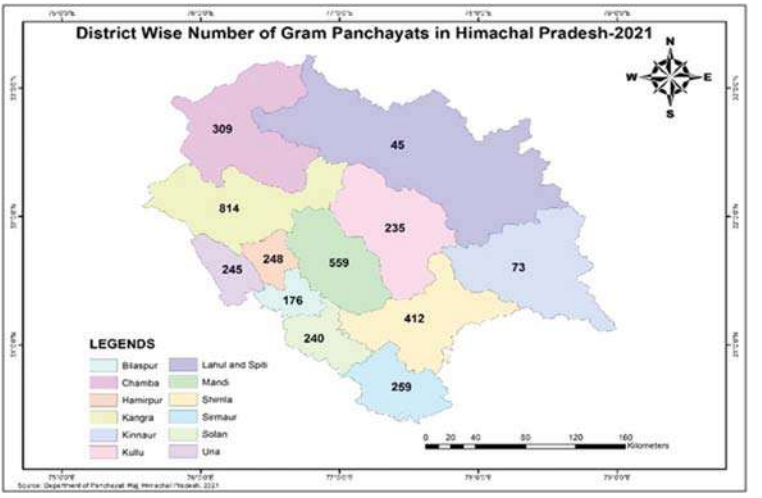

प्रदेश में संविधान के 73वें संशोधन के बाद त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था स्थापित हुई और वर्तमान में कुल 3615 ग्राम पंचायतें, 81 ब्लॉक समितियां और 12 जिला परिषदें हैं। जिलावार व्यौरा निम्मलिखित सारणी में विस्तार से वर्णित है।

lkj.kh% 2 fgekpy in'k e ftykokj ipk;rh jkt lLFkkvk dh lhV- 2020

Ø-l-	ftyk	ftyk ifj"kn	ch-Mh-lh-	i/kku	mi-i/kku	ckM lnL;	dy ;kx
1.	बिलासपुर	14	97	176	176	1140	1603 (5.2)
2.	चम्बा	18	136	309	309	1771	2543 (8.3)
3.	हमीरपुर	18	125	248	248	1435	2074 (6.8)
4.	कागड़ा	54	359	814	814	4835	876 (22.4)
5.	किन्नौर	10	45	73	73	389	590 (1.9)
6.	कुल्लू	14	103	235	235	1387	1974 (6.4)
7.	लाहौल-स्पिति	10	30	45	45	227	357 (1.2)
8.	मण्डी	36	249	559	559	3271	674 (15.3)
9.	शिमला	24	201	412	412	2309	358 (11.0)
10.	सिरमौर	17	120	259	259	1601	2256 (7.4)
11.	सेलन	17	118	240	240	1547	2162 (7.1)
12.	उना	17	113	245	245	1557	2177 (7.1)
कुल योग		249 (0.8)	1696 (5.5)	3615 (11.8)	3615 (11.8)	21469 (70.1)	30644 (100.0)

lkr% हिमाचल प्रदेश राज्य चुनाव आयोग, शिमला।

प्रदेश में पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत 30644 सीटें हैं, जिसमें सबसे ज्यादा सीटें 70.1 प्रतिशत वार्ड सदस्यों की, 11.8 प्रतिशत प्रधानों और उप-प्रधानों की, 5.5

प्रतिशत पंचायत समिति सदस्यों की और 0.8 प्रतिशत जिला परिषद् सदस्यों की है। सबसे बड़ा जिला कागड़ा है जहां कुल 22.4 प्रतिशत सीटें हैं और सबसे छोटा लाहौल-स्पिति हैं जहां पंचायती राज में प्रदेश के मुकाबले कुल 1.2 प्रतिशत सीटें हैं।

हिमाचल प्रदेश में पंचायत प्रतिनिधियों का पार्श्वचित्र

संविधान के 73वें संशोधन के बाद पंचायती राज संस्थाओं के पास बहुत सारी शक्तियों का हस्तांतरण हुआ है। जो भी योजनाएं या कार्यक्रम देश की संसद या प्रदेश की विधानसभा में जनकल्याण के लिए बनाई जाती है अंततः उसे धरातल पर आमजन के सहयोग के साथ लागू करने की जिम्मेबारी पंचायतों की है। यही नहीं पंचायतों के तहत आने वाले गांवों की तरक्की के लिए विभिन्न प्रकार की जरूरतों का आकलन करना ताकि गांव का समग्र विकास हो सके। ग्रामीण के दर्जनों विकास के दर्जनों कार्यक्रमों का प्रबंधन, प्रकिया के अनुसार लागू करना, ग्राम पंचायत विकास योजना के तहत योजनाओं का निर्माण, सबसें महत्वपूर्ण पंचायत के तहत आने वाले सभी वर्गों का सहयोग और आम सहमती बनाना। विकासात्मक कार्यों और दैनिक जन कल्याण के कार्यों हे तु खण्ड स्तर, जिला स्तर के कार्यालयों के साथ संबंध स्थापित करना व पंचायत के अन्दर विभिन्न फ्रंटलाईन कार्यालयों जिसमें आंगनवाड़ी, स्कूल, स्वास्थ्य केन्द्र, ग्राम पंचायत, महिला मण्डल, युवक मण्डल, स्वयं सहायता समुहों इत्यादि के साथ सामजस्य कायम करने जैसे कई जटिल कार्य होते हैं जो पंचायत प्रतिनिधियों को करने होते हैं।

पंचायतों की जिम्मेवारियों में परम्परागत पंचायतें जो संशोधन से पहले थी काफी व्यापकता आई है, जिसका अन्दाजा लगाया जा सकता है कि जो संविधान की ग्याहरवीं अनुसूची में भी दर्ज है कि पंचायतों के परिधि में 29 विषयों को रखा गया है। जिसमें कृषि और कृषि विस्तार, भुमि सुधार, भुमि सुधारों को लागू करना, चकबंदी और भूमि सुरक्षा, लघु सिंचाई, जल व्यवस्था और वाटरशैड का विकास, पशुपालन, डेयरी और मुर्गी पालन, मछली पालन, सामाजिक बानिकी और फार्म फोरेस्टरी, लघु वन उत्पादन, लघु उद्योग जिसमें कृषि उत्पादन का प्रस्संकरण करने के उद्योग भी शामिल है, खादी ग्रामीण और कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास व्यवस्था, पेयजल, ईंधन और पशुचारे की व्यवस्था, सडकें, पुलिया, पुल, राजवाहे और आने-जाने के अन्य साधनों की व्यवस्था करना, ग्रामीण विधुतीकरण जिसमें बिजली की सप्लाई भी शामिल है, गैर-परंम्परागत उर्जा स्रोत, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, शिक्षा जिसमें प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा भी शामिल है, पंचायत स्तर की तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा, पंचायत स्तर पर पुस्तकालय, सांस्कृतिक कार्यक्रम, मंडियां और मेले, स्वास्थ्य और स्वच्छता जिसमें अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र और डिस्पैंसरी भी शामिल है, परिवार कल्याण, महिला और बाल कल्याण, समाज कल्याण जिसमें

विकलांगों और मंदबुद्धि व्यक्तियों का कल्याण भी शामिल है, कमजोर वर्गों का कल्याण विशेषकर अनुसूचित और जन-जाति वर्ग के लोगों का कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और सामुदायिक सम्पति की देखभाल और रख-रखाव शामिल है।

ग्राम पंचायत की इतनी विशाल और बहु-आयामी गतिविधियां एक युवा, गतिशील और शिक्षित पंचायत प्रतिनिधि ही कर सकते हैं। उन्हें भी जरूरत रहेगी कि सम्बन्धित विभाग समय-समय पर क्षमता निमार्ण कार्यक्रमों का अवसर दें और वो पढ़े-लिखे, गतिशील युवा पंचायत प्रतिनिधि उन कार्यक्रमों का फायदा उठा कर धरातल पर पूरी तत्परता से आमजनता को सरकारी कार्यक्रमों का लाभ पहुचाए।

किसी भी प्रदेश में यह बहुत जरूरी हो जाता है कि इन स्थानीय शासन की संस्थाओं में किस प्रकार के प्रतिनिधि चुनकर आ रहे है मसलन उनका उम्र समूह क्या है? ज्यादातर प्रतिनिधि किस आर्थिक पृष्टभूमि से आ रहे हैं? उनकी शैक्षणिक पृष्ठभूमि क्या है? महिलाओं और युवाओं की क्या भागीदारी है? इन सब शोध प्रश्नों के जबाव में कई स्रोतों विशेषकर राज्य चुनाव आयोग हिमाचल प्रदेश और पंचायती राज विभाग इत्यादि से आकड़ों का संकलन कर साधारण शतमक विधि से इसी वर्ष के आरम्भ में हुए हिमाचल प्रदेश पंचायती राज चुनावों में निर्वाचित प्रतिनिधियों की पृष्ठभुमि का विश्लेषण किया गया है।

प्रतिनिधियों का आयु वर्ग

राजनीति में एक बहुत बड़ी बहस का मुददा है कि युवा राजनीति में कम रूचि ले रहे हैं जबकि हमारी जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा युवाओं का है और राष्ट्रीय स्तर पर हम जनसांख्यकीय लाभांश लेने की बात कर रहें हैं। जब तक आबादी का बड़ा हिस्सा राजनीति या स्थानीय राजनीति में रूचि नहीं लेगा तो युवा उन्मुख क्या नीतियां हो कौन तय करेगा। जिस तरीके की जटिलता पंचायतों के कार्यों दिन व दिन आ रही है जिसमें सूचना प्रौद्यौगिकी का भरपूर इस्तेमाल हो रहा है निश्चित तौर पर युवा और गतिशील प्रतिनिधि ही सही तरीके से इन कार्यों का अंजाम दे सकते है।

पंचायती राज संस्थाओं में चुने प्रतिनिधियों की उम्र के मुताबिक विश्लेषण से पता चलता है कि प्रदेश के युवा इन संस्थाओं में बढ़चढ़ कर हिस्सा ले रहे हैं। कुल 26,734 प्रतिनिधियों में 33.51 प्रतिशत प्रतिनिधियों की उम्र 21-30 वर्ष के बीच थी और उससे भी अधिक 37.53 प्रतिशत प्रतिनिधि 31-40 वर्ष के समूह में थे। कुल मिलाकर देखे तो 71.04 प्रतिशत पंचायत के प्रतिनिधियों की आयु 21-40 वर्ष थी। कुल प्रतिनिधियों में 19.11 प्रतिशत की आयू 41-50 वर्ष और 7.41 की आयु 51-60 वर्ष के बीच थी। केवल 1.5 प्रतिशत ही ऐसे प्रतिनिधि चुनाव जीते जिनकी उम्र 61 वर्ष से ज्यादा थी।

अगर यह आंकड़ा जिलावार देखें तो चम्बा ऐसा जिला है जहां सबसे ज्यादा 53.4 प्रतिशत प्रतिनिधियों की उम्र 21-30 वर्ष के बीच थी इसके बाद सिरमौर 46.4

lkj.kh&3 fgekpy izn'k ipk;r puko&2020&21 esa p;fur lnL;ksa dk vk;q dk vuqlkj fooj.k

Ø- ftyk l-	izfrfuf/k;ksa dk vk;q leg ¼o"kksa esa½										dy ;ksx
	21-30		31-40		41-50		51-60		61>		
	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	
1. उना	381	21.14	665	36.90	466	25.86	236	13.09	54	2.99	1802
2. कांगड़ा	1632	25.24	2530	39.13	1525	23.59	641	9.91	136	2.10	6464
3. किन्नौर	258	45.10	224	39.16	70	12.23	16	2.79	4	0.69	572
4. कुल्लू	723	43.31	623	37.32	238	14.26	74	4.43	11	0.65	1669
5. चम्बा	1227	53.39	752	32.72	250	10.87	59	2.56	10	0.43	2298
6. बिलासपुर	352	25.03	557	39.61	316	22.47	150	10.66	31	2.20	1406
7. मन्डी	1828	42.02	1608	36.96	658	15.12	211	4.85	45	1.03	4350
8. लाहौल-स्पिति	9	40.90	6	27.27	5	22.72	2	9.09	0	0	22
9. शिमला	937	40.19	902	38.69	372	15.95	108	4.63	12	0.51	2331
10.सिरमौर	970	46.41	719	34.40	303	14.49	88	4.21	10	0.47	2090
11.सेलन	565	30.87	700	38.25	409	22.34	130	7.10	26	1.42	1830
12.हमीरपुर	343	18.05	746	39.26	496	26.10	266	14	49	2.57	1900
dy ;ksx	9225 ¼33-51½		10032 ¼37-53½		5108 ¼19-11½		1981 ¼7-41½		388 ¼1-5½		26734 ¼100-0½

lkr% हिमाचल प्रदेश राज्य चुनाव आयोग, शिमला।

प्रतिशत और जनजातिय जिला 45.1 प्रतिशत के साथ दूसरे और तीसरे नम्बर पर थे। अगर आयू समूह के पहले दो को जोड़ कर देखें तो चम्बा जिला में 86.11 प्रतिशत, किन्नौर जिला में 84.26 प्रतिशत, कुल्लू में 80.63 प्रतिशत, सिरमौर में 80.81 प्रतिशत, मण्डी और शिमला में 78.8 प्रतिशत प्रतिनिधियों की आयू 40 वर्ष या इसके कम है। प्रदेश के छः ऐसे जिले जिसमें उना, कांगड़ा, बिलासपुर, लाहौल स्पिति, सोलन और हमीरपुर जहां 21-40 वर्ष की आयू वर्ग में आने वाले प्रतिनिधियों की प्रतिशता प्रदेश की औसत से कम हैं या 71.04 प्रतिशत से कम है।

सनद् रहे चम्बा और सिरमौर जिले वे जिले हैं जो विकास के कई संकेतकों जिसमें साक्षरता, शिक्षा और स्वाथ्य इत्यादि के मामले में अन्य 10 जिलों में पीछे है। यही दो जिले थे जब रोजगार गारन्टी योजना को 2005 में शुरू किया गया था तो प्रथम चरण के 200 जिलों में प्रदेश के ये दो जिले शामिल थे। यही नही साल 2018 मे नीति आयोग ने देश के 115 जिलों को आकांक्षी जिले घोषित किया तो प्रदेश का चम्बा जिला को भी उसमें शामिल किया गया। जब युवाओं की भुमिका का सवाल है तो यही दो जिलें हैं जहां अधिकतर युवा चुनकर पंचायत प्रतिनिधि बनें हैं।

यह आंकड़े दर्शाते हैं कि हिमाचल प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी किसी भी प्रदेश के मुकाबले सम्भवतः अतुल्नीय है और अगर यह प्रतिनिधि पंचायत के कामकाज में पूरी नैतिकता के साथ समर्पित होते हैं तो पांच साल में यह अपने गांव और पंचायत की तस्वीर बदल सकते हैं। क्योंकि समय के साथ-साथ पंचायतों के कार्यों बहुत गतिशीलता को दर्ज किया गया है। पंचायतों को गांवों के विकास कार्यो

के लिए कई तरीके से सशक्त किया गया है। युवा प्रतिनिधि अच्छे तरीके से पंचायत के काम काज चलाने के लिए अपने सामर्थ्य का उपयोग कर सकता है और पंचायत के हर वर्ग का सहयोग उन की हाजिरी ग्रामसभा में सुनिश्चित कर सकता है। पंचायत को सही प्रकार से लोकतांत्रिक तरीके से चला सकता है विभिन्न प्रकार की कमेटियों का गठन और क्रियाशील करके, हर काम में पादर्शिता सुनिश्चित करे, महिलाओं को विभिन्न स्वयं सहयता समूहों और महिला मण्डलों में संगठित कर महिला सशक्तिकरण कर सकते हैं।

हर सरकारी कार्यक्रमों के लाभार्थियों की पहचान ग्रामसभा में ही हो, महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारन्टी योजना के तहत हर कार्य का सामाजिक अकंक्षेण पूरे पादर्शी तरीके से हो, मनरेगा के अलावा हर ग्रामीण विकास के कार्यों को धरातल पर सहभागिता और पारदर्शी तरीके से लागू करना, पंचायत के कार्यों का लेखा जोखा रखना और हर ग्रामसभा में सभी के समक्ष प्रस्तुत करना आज एक बहुत बड़ी चुनौती है। इस चुनौती का सामना एक युवा प्रतिनिधि ही कर सकता है।

प्रतिनिधियों का सामाजिक पृष्ठभुमि

हिमाचल प्रदेश के संदर्भ में देखें तो 49 प्रतिशत महिलाएं, 26 प्रतिशत जनसंख्या अनुसूचित जाति और करीव 6 प्रतिशत जन-जाति की है। इन सभी वर्गों के लिए 73वें संशोधन के बाद आरक्षण का प्रावधान हुआ है जिसके बाद सामाज के इन कमजोर तबकों को भी पंचायत की नुमायदगी का मौका मिला है। जिलावार कहां क्या स्थिति है का विवरण आगामी सारणी में दिया गया है।

कुल 26734 प्रतिनिधियों में से 39.28 प्रतिशत (10,502) पंचायत प्रतिनिधि सामान्य श्रेणी से चुने गए बाकि सभी आरक्षित वर्ग के हिस्से में गईं। जिसमें 30.3 प्रतिशत महिला सामान्य वर्ग, 15.17 प्रतिशत अनुसूचित जाति महिला, 7.85 प्रतिशत अनुसूचित जाति, 3.72 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति महिला, 1.83 प्रतिशत अनुसूचित जन–जाति, 1.16 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग महिला, 0.96 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग के प्रतिनिधियों के हिस्से में आईं।

पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी

महिलाएं प्रदेश की आबादी का लगभग आधा हिस्सा है और हिमाचल प्रदेश में पंचायतों में 50 प्रतिशत महिलाओं के लिए आरक्षरण का प्रावधान 2009 से पहले से है। यही नहीं महिलओं के लिए दो विशेङ्ख ग्राम सभाओं का प्रावधान भी प्रदेश सरकार ने किया है ताकि इन स्थानीय शासन में महिलाओं क्रियाशील भागीदारी को सुनिश्चित किया जा सके।

lkj.kh 4 fgelpy in'k ipk;r puko-2020-21 e pu ifrfuf/k;k dk lkekftd ox vuqlkj fooj.k

Ø- ft;k l-	ifrfuf/k;k dh lkekftd i"BHkwfe														dy ;ox	
	lkekU;		vuqlfpr tkfr efgyk		vuqlfpr tkfr efgyk		vuqlfpr tutkfr efgyk		vuqlfpr tutkfr vU; efgyk		fiNM+k ox vU; efgyk		fiNM+k ox Efgyk ¼vU;½			
	संख्या	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*	*संख्या*	*प्रतिशत*
1. उना	749	41.6	229	12.7	142	7.9	9	0.5	4	0.2	55	3.1	43	2.4	571	31.7	1802
2. कांगड़ा	2670	41.3	905	14.0	360	5.6	228	3.5	71	1.1	146	2.2	118	1.8	1966	30.4	6464
3. किन्नौर	104	18.2	56	9.7	21	3.7	204	35.7	140	24.4	0	0	0	0	47	8.2	572
4. कुल्लू	661	39.6	277	16.5	165	9.9	29	1.73	5	0.3	1	0.1	1	0.1	530	31.8	1669
5. चम्बा	781	33.9	313	13.6	130	5.7	358	15.6	190	8.3	4	0.2	4	0.2	518	22.5	2298
6. बिलासपुर	578	41.1	211	15.0	111	7.9	28	1.9	8	0.6	5	0.4	9	0.6	456	32.4	1406
7. मन्डी	1776	40.8	713	16.4	387	8.9	33	0.8	9	0.2	23	0.5	21	0.5	1388	31.9	4350
8. लाहौल–स्पिति	3	13.6	1	4.5	0	0	13	59.1	4	18.2	0	0	0	0	1	4.5	22
9. शिमला	957	41.0	378	16.2	235	10.1	6	0.3	11	0.5	4	0.2	3	0.1	737	31.6	2331
10. सिरमौर	761	36.4	386	18.4	228	10.9	23	1.1	9	0.4	26	1.2	27	1.3	630	30.1	2090
11. सोलन	664	36.3	308	16.8	198	10.8	59	3.2	33	1.8	13	0.7	8	0.4	547	29.9	1830
12. ह्मीरपुर	798	42	279	14.68	122	6.4	5	0.3	5	0.3	33	1.7	22	1.2	636	33.5	1900
dy ;ox	**10502**		**4056**		**2099**		**995**		**489**		**310**		**256**		**8027**		**26734**
	¼39-28½		**¼15-17½**		**¼7-85½**		**¼3-72½**		**¼1-83½**		**¼1-16½**		**¼0-96½**		**¼30-03½**		**¼100-00½**

lkj'k हिमाचल प्रदेश राज्य चुनावआयोग, शिमला।

lkj.kh% 5 fgekpy izn'k ipk;r puko-2020-21 e p;fur lnL;k dk fyx vuqlkj fooj.k

Ø-l- ftyk	ifrfuf/k;k dh ylfxd igpku				dy ;kx
	i:"k		efgyk,a		
	l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	
1. उना	864	47.9	938	52.0	1802
2. कांगड़ा	2917	45.1	3547	54.9	6464
3. किन्नौर	255	44.6	317	55.4	572
4. कुल्लू	820	49.1	849	50.9	1669
5. चम्बा	1046	45.5	1252	54.5	2298
6. बिलासपुर	675	48.0	731	51.9	1406
7. मण्डी	2061	47.4	2289	52.6	4350
8. लाहौल–स्पिति	7	31.8	15	68.2	22
9. शिमला	1169	50.2	1162	49.8	2331
10. सिरमौर	1006	48.1	1084	51.9	2090
11. सेलन	878	47.9	952	52.0	1830
12. हमीरपुर	892	46.9	1008	53.1	1900
dy ;kx	**12590**		**14144**		**26734**
	¼48-0½		**¼52-0½**		**¼100-0½**

lkr% हिमाचल प्रदेश राज्य चुनाव आयोग, शिमला।

साल 2020-21 में जो पंचायत चुनाव हुए उसमें पुरूषों से ज्यादा महिलाओं चुनी गई जैसा कि सारणी प्रदर्शित होता है 52 प्रतिशत महिलाएं पंचायती राज संस्थाओं में विभिन्न पदों पर विजयी रहीं जो 50 प्रतिशत आरक्षित पदों से 2 प्रतिशत अधिक हैं।

प्रदेश के सभी जिलों में महिलाओं की प्रतिशतता पंचायती राज संस्थाओं में शिमला जिला को छोड़ कर 50 प्रतिशत से ज्यादा रही है। इस सारणी में जनजातिय जिला लाहौल–स्पिति को 68.2 प्रतिशत के साथ सबसे ज्यादा बताया गया है हालांकि इस जिले के अधिकांश हिस्से में चुनाव होन शेड्ड हैं। लेकिन इस के अलावा भी दूसरा जनजातिय जिला किन्नौर में 55.4 प्रतिशत, सबसे बड़ा जिला कांगड़ा में 54.9 प्रतिशत, चम्बा में 54.5 प्रतिशत, मण्डी में 52.6 प्रतिशत, हमीरपुर में 53.1 प्रतिशत, सोलन और उना में 52 प्रतिशत, बिलासपुर में 51.9 प्रतिशत और कुल्लू में 50.9 प्रतिशत महिलाएं पंचायती राज संस्थाओं में चुनी गई। जो महिला सशक्तिकरण का उदाहरण है जहां महिलाएं पंचायती राज में अपनी जबरदस्त भागीदारी सुनिश्चित कर रहीं हैं।

प्रतिनिधियों का आर्थिक पृष्ठभूमि

प्रदेश की आबादी का 90 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीण है और मुख्यतः कृषि उनका व्यवसाय है लेकिन कृषि जनगणना 2014-15 के अनुसार औसत भुमि जो एक हैक्टयर

है। पंयायत प्रतिनिधियों की आर्थिक पष्टभुमि को आगामी सारणी दर्शाया गया है।

lkj.kh% 6 fgekpy izn'k iapk;r pquko-2020-21 esa p;fur izfrfuf/k;ksa dk vkfFkd i"BHkwfe dk vuqlkj foHkktu

Ø-la-	ftyk	izfrfuf/k;ksa dh vkfFkd i"BHkwfe								dqy ;ksx
		xjhch js[kk ls mij		djnkrk		xj-djnkrk		xjhch js[kk ls uhps		
		la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	la[;k	izfr'kr	
1.	ऊना	1663	92.28	29	1.60	20	1.10	90	4.99	1802
2.	कांगड़ा	5558	85.98	49	0.75	368	5.69	489	7.56	6464
3.	किन्नौर	499	87.23	4	0.69	20	3.49	49	8.56	572
4.	कुल्लू	1417	84.90	7	0.41	157	9.40	88	5.27	1669
5.	चम्बा	1519	66.10	9	0.39	40	1.74	730	31.76	2298
6.	बिलासपुर	1087	77.31	24	1.70	146	10.38	149	10.59	1406
7.	मन्डी	3368	77.42	43	0.98	570	13.10	369	8.48	4350
8.	लाहौल-स्पिति	17	77.27	0	0	0	0	5	22.77	22
9.	शिमला	1927	82.66	17	0.72	86	3.68	301	12.91	2331
10.	सिरमौर	1789	85.59	14	0.66	189	9.04	98	4.68	2090
11.	सेलन	1459	79.72	45	2.45	177	9.67	149	8.14	1830
12.	हमीरपुर	1526	80.31	21	1.10	198	10.42	155	8.15	1900
dqy ;ksx		**21829**		**262**		**1971**		**2672**		**26734**
		¼81-65½		**¼0-98½**		**¼7-37½**		**¼9-99½**		**¼100-00½**

lzksr% हिमाचल प्रदेश राज्य चुनाव आयोग, शिमला।

प्रदेश के 2020-21 के पंचायती राज चुनावों में विजयी होने वाले प्रतिनिधियों की आर्थिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण करने के लिए चार श्रेणियों में बांटा गया है जिसमें गरीबी रेखा से उपर, करदाता, गैर-करदाता और गरीबी रेखा से नीचे। प्रतिनिधियों का अधिकांश हिस्सा 81.65 प्रतिशत गरीबी रेखा से उपर की श्रेणी में है और फिर 9.99 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे, 7.37 प्रतिशत गैर-करदाता और एक प्रतिशत से भी कम 0.98 प्रतिशत करदाता है जो पंचायत प्रतिनिधि बने हैं।

अगर जिलावार देखें तो गरीबी रेखा से उपर की श्रेणी में उना जिला में सबसे ज्यादा 92.28 प्रतिशत प्रतिनिधि हैं फिर 87.23 प्रतिशत किन्नौर जिला में, 85.98 प्रतिशत कांगड़ा में, 84.90 प्रतिशत कुल्लू में इसी प्रकार चम्बा जिला में सबसे कम 66. 10 प्रतिशत प्रतिनिधि इस श्रेणी में थे। उना और बिलासपुर दो जिले ही थे जहां करदाता पंचायत प्रतिनिधि एक प्रतिशत से उपर बढ़ पाए। तीन जिले जहां गैर करदाता पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या ज्यादा थी उनमें शामिल है मण्डी 13.10 प्रतिशत, हमीरपुर 10.42 प्रतिशत और बिलासपुर 10.38 प्रतिशत। चम्बा जिला ऐसा

lkj.kh% 7 fgekpy iznsk ipk;r pquko-2020-21 esa fuokfpr ifrfuf/k;ksa dh 'k{kf.kd i"BHkfe dk fooj.k

Ø-l-	ftyk	ifrfuf/k;ksa dh 'k{kf.kd i"BHkfe												dy ;kx
		dkbl vkipkfjd f'k{kk ugh		ckgjoh		nloh		nloh ls de		lukrd		Lukrdkrj		
		l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	l[;k	ifr'kr	
1.	उना	14	0.8	193	10.7	972	53.4	433	24.2	143	7.9	47	2.6	1802
2.	कांगड़ा	81	1.3	973	15.1	3272	50.6	1525	23.6	454	7.0	159	2.5	6464
3.	किन्नौर	5	0.9	94	16.4	202	35.3	183	31.9	57	10.0	31	5.4	572
4.	कुल्लू	44	2.6	320	19.2	550	32.9	551	33.0	137	8.2	67	4.0	1669
5.	चम्बा	112	4.9	368	16.0	920	40.0	725	31.5	121	5.3	52	2.3	2298
6.	बिलासपुर	19	1.4	235	16.7	602	42.8	357	25.4	116	8.3	77	5.5	1406
7.	मन्डी	26	0.6	859	19.7	2216	50.9	748	17.2	327	7.5	174	4	4350
8.	लाहौल-स्पिति	3	13.6	7	31.8	3	13.6	6	27.3	3	13.6	0	0	22
9.	शिमला	20	0.9	438	18.8	1113	47.7	396	16.9	256	10.9	108	4.7	2331
10.	सिरमौर	122	5.8	270	12.9	712	34.1	778	37.2	154	7.4	54	2.6	2090
11.	सेलन	52	2.8	221	12.1	820	44.8	536	29.3	143	7.8	58	3.2	1830
12.	हमीरपुर	6	0.3	223	11.7	1023	53.8	399	21	168	8.8	81	4.3	1900
dy ;kx		**504**		**4201**		**12405**		**6637**		**2079**		**908**		**26734**
		(1.9)		(15.7)		(46.4)		(24.8)		(7.9)		(3.4)		(100.0)

lkr% हिमाचल प्रदेश राज्य चुनाव आयोग, शिमला।

जिला है जहां सबसे ज्यादा 31.76 प्रतिशत प्रतिनिधि गरीबी रेखा से नीचे की श्रेणी से सम्बंध रखतें थे।

प्रतिनिधियों की शैक्षणिक पृष्ठभूमि

जिस तरीके से पंचायतों की ग्रामीण व स्थानीय योजना, विकास और सहभागिता में भूमिका बढ़ी है निःसंदेह यह मायने रखता है कि प्रतिनिधि जनता के उम्मीदों पर खरा उतरने के लिए कितना शिक्षित है।

पंचायत प्रतिनिधियों की शैक्षणिक पष्टभूमि सारणी 1.5 में दर्शाती है कि कुल 26,734 प्रतिनिधियों में मात्र 1.9 प्रतिशत ही एक प्रतिनिधि हैं जिनकी कोई औपचारिक शिक्षा नही हुई है अन्य 98.1 प्रतिशत पंचायत प्रतिनिधि किसी न किसी स्तर तक पढ़े लिखे हैं जिसमें सबसे ज्यादा 46.4 प्रतिशत दसवीं तक, 24.8 प्रतिशत दसवीं से कम तक और 15.7 प्रतिशत बाहरवीं तक पढ़ाई कर चुके हैं। यही नहीं पंचायती राज संस्थाओं में इस बार 7.9 प्रतिशत सनातक और 3.4 प्रतिशत स्नातकोतर प्रतिनिधि पहुचे हैं। जिला किन्नौर लाहौल स्पिति और शिमला एक जिले है जहां स्नातक स्तर तक पढ़े लिखें प्रतिनिधियों की तादात 10 प्रतिशत से अधिक है। जिला किन्नौर और बिलासपुर जिलों में स्नातकोतर स्तर के पंचायत प्रतिनिधियों की प्रतिशतता पाँच से ज्यादा है। चम्बा और सिरमौर में क्रमशः 4.9 और 5.8 प्रतिशत ऐसे प्रतिनिधि पंचायती राज संस्थाओं में है जिनकी कोई औपचारिक पढ़ाई की पष्टभुमि नही थी।

निष्कर्ष

निःसदेह ग्राम पंचायतों की भूमिका सरकार की कल्याणी कार्यक्रमों को सफलतापर्वक जमीनी स्तर लागू करने में महत्वपूर्ण भुमिका है और जिस प्रकार 29 विषय पंचायतों दायरे में संवैधानिक प्रावधानों के तहत आते हैं। इसके अलावा भी कई नवाचारोन्मुख कार्यों का एक प्रगतिशील, शिक्षित युवा प्रतिनिधि अच्छे कर सकते है। हिमाचल प्रदेश में युवाओं की पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी और प्रतिभागियों का बढ़े पैमाने पर शिक्षित होना साकारात्मक ही नहीं बल्कि पड़ोसी प्रदेशों के साथ साथ पूरे देश के लिए उत्साह का स्रोत है। क्योकि बढ़े पैमाने पर युवा बढ़-चढ़ कर प्रदेश की पंचायती राज व्यवस्था में आए हैं अब यह देखना होगा कि आगामी पांच वर्षों में ये युवा प्रतिनिधि अपनी सम्बन्धित पंचायतों में विकासात्मक परियोजनाओं को लागू करने, कल्याणकारी योजनाओं के गांवों में क्रियान्वन, ग्राम सभा में जनता की सहभागिता, विभिन्न योजनाओं के लाभार्थियों के चयन, पंचायत के अन्दर फ्रंटलाईन विभागों के साथ समन्वय, ब्लॉक और जिला कार्यालयों के साथ सम्बंध इत्यादि के संदर्भ में क्या प्रदर्शन करते हैं। यह युवा प्रतिनिधि एक उत्साहपूर्ण प्रदर्शन करे, औरों के लिए प्रेरणा स्रोत बने सरकार को चाहिए कि इन युवा प्रतिनिधियों की क्षमता निमार्ण के लिए एक रणनीति तैयार करे ताकि इन में एक साकारात्मक प्रतियोगिता की भावना पैदा हो। नैतिकता की दृष्टि से ये अपनी-अपनी पंयायतों, पंचायत समिति या जिला परिषद् जैसे

मंचों पर रचनात्मक योगदान दे सके ऐसा प्रशिक्षण देने का बन्दोबस्त सरकार द्वारा किया जाना चाहिए, और हर प्रशिक्षण के बाद उनके कार्य कुशलता पर पड़ने वाले प्रभाव की निगरानी भी की जानी चाहिए।

संदर्भ सूची

1. Heywood, Andrew., 2000: Key Concepts in Politics, Palgrave, New York
2. Jayal, N. G., Amit, P., and Sharma, P.K., (Eds.) 2006: Local Governance in India: Decentralisation and Beyond, Oxford India Paperbacks, New Delhi.
3. Gandhi, M.K., 1962: Village Swaraj, Navajivan Publishing House, Ahmedabad. (Compiled by H. M. Vyas).
4. Meenakshisundaram, S.S., 2007: Rural development for Panchayat Raj' in Decentralization and Local Governance, Orient Longman, New Delhi.
5. Nath, Suryakant., 2016: Gandhi, Ambedkar and the Indian village: A Study in Contrasting Perceptions, International Journal of Applied Research, 2(6), Pp. 361-364.
6. http://www.allresearchjournal.com/archives/2016/vol2issue6/PartF/2-6-32-147.pdf. Accessed on 12th June, 2017.
7. Venkatarangaiya, M. and Pattabhiram M. (Eds.) (1969). "Introduction", Local Government in India. Allied Publishers. Calcutta, Pp. 1-59.
8. Kashyap, Anirban., 1989: Panchayati Raj: Views of Fathers and Recommendation of Different Committees, Lancer Books, New Delhi-
9. Dey, S.K., 1961a: Panchayati Raj- A Synthesis, Asian Publishing House, Bombay.
10. World Youth Report: Youth Social Entrepreneurship and the 2030 Agenda, United Nations, p.44 https://www.un.org/development/desa/youth/wp-content/uploads/sites/21/2020/10/WYR2020-Chapter2.pdf https://www.un.org/esa/socdev/documents/youth/fact-sheets/youth-definition.pdf.
11. Definition of Youth, https://www.youthpolicy.org/factsheets/country/india.
12. Youth in Himachal Pradesh-2018, Department of Economics and Statistics, Government of Himachal Pradesh, p2.
13. Statistical Abstract of Himachal Pradesh-2019-20, Department of Economics and Statistics, Government of Himachal Pradesh.
14. Annual Administrative Report, 2019-20, Department of Panchayati Raj, Himachal Pradesh P1.

Acknowledgement: Sincer thanks to State Election Commission, Himchal Pradesh Shimla for uploading data related to the candidates contestested PRIs election in the year 2020-21 on public domain which is accessible to interested researchrs https://sechimachal.nic.in/

कोरोना वायरस : प्रकृति का तांडव एवं मानव जीवन संहिता

श्याम मोहन अग्रवाल एवं सुमित्रा देवी शर्मा

lkjk'k% कोरोना वायरस ने संपूर्ण विश्व में अपना तांडव मचा रखा है। पूरी दुनिया में फैलती इस महामारी ने विशाल संकट खड़ा कर दिया है। जीवाणुरूपी इस दैत्य के हमले से चरमराई देशों की अर्थव्यवस्था को उबरने में ना जाने कितना समय लगेगा। हर विवेकशील देश को कोरोना जैसी आपात स्थिति से अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों से निपटने के लिए नए मॉडल पर काम करना होगा ताकि लोगों को तात्कालिक सहायता व रोजी-रोटी की उपलब्धता के पुख्ता इंतजाम हो सकें। इस त्रासदी का पूरे विश्व को पहला संदेश है कि हमारा पहला नंबर दुश्मन कोई देश, धर्म या किसी विचारधारा के अनुयायी न होकर कोरोना जैसी महामारी है जो धर्म, जाति, नस्ल अथवा नागरिकता के आधार पर नहीं सर्वत्र और सब पर तथा कभी भी आक्रमण कर सकती है। इससे बचाव सभी देश मिलकर ही कर सकते हैं। दुनिया के सभी देश विश्व स्वास्थ्य संगठन के माध्यम से इस बीमारी से संबंधित नवीनतम जानकारी तथा आंकड़ों का आदान-प्रदान कर समाधान निकालने में योगदान दे सकते हैं। किसी भी वायरस की उत्पत्ति के मूल में प्रकृति के साथ छेड़छाड़ ही रही है जो बाद में वीभत्स रूप ले लेती है। प्रकृति एक वरदान है हमें इसका सम्मान करना चाहिए क्योंकि मानव जीवन पूर्णतः प्रकृति पर ही निर्भर है। प्रकृति असंतुलन मानव जीवन के लिए आपदाओं का एक वीभत्स द्वार है जिसके मुहाने पर ना जाने कितने वायरस मानव सभ्यता का अंत करने के लिए खड़े हैं। आज आविष्कार, नवाचार की होड़ में इन्सान प्रकृति का मनमाने रूप में उत्खनन, प्रयोग करता जा रहा है। हमारे पूर्वजों, धर्मग्रन्थों, विद्वानों ने हमें समय-समय पर चेताया है कि प्रकृति के साथ अनुचित छेड़छाड़ सही नहीं है हमें इसका सम्मान करना चाहिए ना कि लगातार दोहन। वर्तमान समय में भी बहुत से विद्वानों द्वारा प्रकृति के साथ सामंजस्य पर जोर दिया जा रहा है ताकि मानव

जीवन सुरक्षित रह सके। आज कोरोना वायरस की वजह से दुनिया एक मुश्किल दौर से गुजर रही है। संघर्ष के इस समय में लेखक के द्वारा कुछ विद्वानों के विचारों का संकलन इस लेख में किया गया है। इस लेख में यह बताने का प्रयास किया गया है कि हमें मानव जीवन की रक्षार्थ प्रकृति की रक्षा और संरक्षण का दायित्व निभाना होगा।

कोरोना वायरस प्रकृति के संदेश को समझना जरूरी

नॉवेल कोरोना वायरस (सीओवीआइडी-19) के प्रकोप ने पूरी दुनिया में अभूतपूर्व स्थिति उत्पन्न कर दी है। संक्रामक रोग और महामारी फैलना, मानवजाति के लिए कोई नई बात नहीं है। फिर भी, इतने बड़े पैमाने पर इस प्रकार के वायरस का प्रकोप, हम सबके जीवन काल में एक नई घटना है। कोरोना पर राष्ट्रपति राम नाथ कोविन्द जी के विचार– मेरी संवेदना, इस वायरस के संक्रमण से जूझ रहे सभी लोगों तथा पूरी दुनिया में इसके शिकार हुए लोगों के परिवारों के साथ हैं। मेरी संवेदना उन डॉक्टरों, नर्सों, पैरामेडिकल, स्वास्थ्यकर्मियों तथा उन अन्य सभी लोगों के साथ भी है जो अपने जीवन को जोखिम में डालकर मानवजाति की सेवा कर रहे हैं।

इस महामारी ने हमें अन्य लोगों के साथ सम्मानजनक दूरी बनाए रखने के लिए विवश कर दिया है। अपने विवेक से अथवा चिकित्सकों द्वारा अनिवार्य किया गया एकांतवास, हमारी अब तक की यात्रा और हमारे भविष्य के मार्ग पर चिंतन-मनन करने के लिए एक आदर्श अवसर सिद्ध हो सकता है। आज के इस कठिन दौर से गुजरते हुए हमें इस चुनौती को एक अवसर में बदलना चाहिए और यह विचार करना चाहिए कि इस संकट के जरिए प्रकृति हमें क्या संदेश देना चाहती है। प्रकृति से हमें अनेक प्रकार के संकेत मिल रहे हैं, लेकिन इस लेख में कुछ ही पहलुओं पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

हम सभी जानते हैं कि इस संकट का सबसे स्पष्ट और पहला सबक है– साफ-सफाई। एहतियात बरतना ही, कोरोना वायरस की इस नई समस्या से निपटने का एकमात्र तरीका है और इसके लिए डॉक्टर यही सलाह दे रहे हैं कि *''सोशल डिस्टेन्सिंग''* के अलावा सभी लोग साफ-सफाई पर ध्यान दें। स्वच्छता और सफाई बनाए रखना, अच्छे नागरिक के मूलभूत गुणों में शामिल हैं। इन गुणों को कम महत्व दिया जाता रहा है। स्वयं महात्मा गांधी ने इन गुणों को सर्वोच्च प्राथमिकता देने के लिए हम सबको प्रेरित किया था। साफ-सफाई और स्वच्छता, दक्षिण अफ्रीका और भारत में उनके ऐतिहासिक अभियानों के महत्वपूर्ण अंग रहे।

हम सभी के लिए अगला सबक यह है कि हमें प्रकृति का सम्मान करना चाहिए। मनुष्य ही, एकमात्र ऐसी प्रजाति है जिसने अन्य सभी प्रजातियों पर आधिपत्य जमा लिया है, पूरी धरती का नियंत्रण अपने हाथों में ले लिया है और यहाँ तक कि उसके

कदम चाँद तक पहुँच गए है। लेकिन विडम्बना देखिए कि इतनी शक्तिशाली मानवजाति इस समय एक छोटे से जीव यानि कोरोना वायरस के सामने लाचार है। हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि अंततोगत्वा, हम सभी मनुष्य जीवधारी मात्र हैं, और अपने जीवन के लिए अन्य जीवधारियों पर निर्भर है। प्रकृति को नियंत्रित करने और अपने लाभ के लिए सभी प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने की तैयारियाँ, वायरस के एक ही प्रहार से तहस-नहस हो सकती हैं, और वायरस भी ऐसा जो माइक्रोस्कोप के बिना दिखाई भी नहीं देता।

हमें याद रखना चाहिए कि हमारे पूर्वज, प्रकृति को माँ का दर्जा देते थे। उन्होंने हमें सदैव प्रकृति का सम्मान करने की शिक्षा दी। लेकिन इतिहास के किसी मोड़ पर, हम उनके दिखाए मार्ग से हट गए और हमने अपने परंपरागत विवेक का परित्याग कर दिया। अब महामारियाँ और असामान्य मौसम की घटनाएँ आम होती जा रही है। समय आ गया है कि हम थोड़ा ठहर कर यह विचार करें कि हम रास्ते से कहाँ भटक गए, और यह भी कि हम सभी रास्ते पर कैसे लौट सकते हैं?

विश्व समुदाय के लिए समानता का सबक उतना स्पष्ट नहीं रहा है। लेकिन प्रकृति यह संदेश देती रही है कि उसके सामने हम सभी बराबर है। जाति, पंथ, क्षेत्र या अन्य किसी मानव निर्मित भेदभाव को वायरस नहीं मानता। तरह-तरह का भेदभाव पैदा करने और अपने-पराए के झगड़े में दुनिया लिप्त रहती है। फिर अचानक एक दिन कोई गंभीर जानलेवा खतरा हमारे समक्ष आ खड़ा होता है। तब हमें यह समझ में आता है कि मनुष्य के रूप में हमारी एक ही पहचान है– हम सब हर स्थिति में केवल और केवल इंसान है।

अपने संबोधनों और वक्तव्यों में प्रायः मैं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सद्विचार का उल्लेख करता हूँ; इसका का अर्थ है कि सम्पूर्ण विश्व, एक ही परिवार है। यह कथन, आज के संदर्भ में जितना सार्थक है उतना पहले कभी नहीं रहा। आज हमारे सामने यह स्पष्ट है कि हर व्यक्ति, एक दूसरे के साथ बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। हम सब वहीं तक सुरक्षित हैं जहाँ तक हम दूसरों की सुरक्षा का ध्यान रखते हैं। हमें केवल मनुष्यों की ही नहीं अपितु पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों की सुरक्षा भी करनी है। असाधारण संकट प्रस्तुत होने पर ज्यादातर लोग स्वार्थी हो जाते हैं। लेकिन वर्तमान संकट हमें यह सिखाता है कि हमें अपने समान ही दूसरों की भी चिंता करनी चाहिए।

यह महामारी अति-संक्रामक है इसलिए लोगों को एकजुट करके, स्वैच्छिक सेवाएँ देने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जा रहा है। फिर भी, वायरस की रोकथाम और उन्मूलन के काम में लोग कई तरीकों से सहायता कर सकते हैं। जागरूकता बढ़ाने और घबराहट से बचाने में प्रत्येक नागरिक अपना योगदान दे सकता है। जो समर्थ है वे अपने संसाधनों को साझा कर सकते हैं– विशेषकर कम सुविधा सम्पन्न पड़ोसियों के साथ।

प्रकृति हमें यह याद दिलाना चाहती है कि हम पूरी विनम्रता के साथ, समानता व परस्पर-निर्भरता के मूलभूत जीवन-मूल्यों को स्वीकार करें। यह सबक हमें बहुत भारी कीमत चुका कर प्राप्त हुआ है। पर जलवायु संकट जैसी वैश्विक चुनौतियों का सामना करने तथा बेहतर व साझा भविष्य निर्माण में यह सबक हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।[1]

कोरोना की वजह से दुनिया में बदलाव

विभिन्न बीमारियाँ मानव प्रजाति के लिए हरदम समस्या रही है लेकिन कोरोना वायरस ने तो संपूर्ण विश्व को ही हिला दिया है। पूरी दुनिया में फैलती इस महामारी ने एक ओर तो मौजूदा संकट खड़ा किया है और साथ ही खतरे की घंटी भी बजाई है कि विकसित देशों सहित समूचा विश्व ऐसी बीमारियों का सामना करने के लिए तैयार नहीं है। यह आशा की जानी चाहिए कि रोगियों को अलग रखने, लॉकडाउन, अनुभव व अनुसंधान सहित चौतरफा उपायों से कोरोना काबू में आ जाएगा लेकिन जीवाणु रूपी इस दैत्य के हमले से चरमराई हमारी अर्थव्यवस्था को उभरने में ना जाने कितना समय लगेगा। हर विवेकशील देश को कोरोना जैसी आपात स्थिति से अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों से निपटने के लिए नए मॉडल पर काम करना होगा, जिसमें मंदी, घटती मांग और लॉकडाउन से बेरोजगार हुए लोगों तथा दिहाड़ी मजदूरों को तात्कालिक सहायता व रोजी-रोटी की उपलब्धता के पुख्ता इंतजाम हों।

आशा की जानी चाहिए कि कोरोना वायरस का आतंक अंततोगत्वा खत्म होगा लेकिन इसके बाद की दुनिया क्या होगी? क्या देश एक दूसरे के पहले की तरह नजदीक रहेंगे? लोगों की एक दूसरे से हाथ मिलाने और स्पर्श करने में रूचि रहेगी? क्या क्लास रूम की शिक्षा जारी रहेगी? हम सामाजिक और धार्मिक उत्सव मिलकर मनाया करेंगे? क्या चिकित्सा पेशे के जोखिम के चलते लोग अपने बच्चों को इस पेशे में खुशी से भेजेंगे? क्या भारत और अन्य देशों में स्वास्थ्य चुनावों से सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा बनकर उभरेगा? क्या एक देश से दूसरे देश में जाना अभी की तरह आसान होगा?

अन्तरराष्ट्रीय संबंधों में चीन और अमरीका के साथ राष्ट्रों का ध्रुवीकरण होगा। अमेरीका के इस आरोप में वास्तविकता प्रक्षलित होती है कि चीन ने सूचनाओं को अपने हित में छुपाने की आदत के अनुरूप अपनी अर्थव्यवस्था को बुरे प्रभावों से बचाने के लिए कोरोना से संबंधित सूचनाएँ छिपाई जिसकी कीमत पूरे विश्व को चुकानी पड़ी। दूसरी ओर चीन का आरोप है कि अमरीका उसके बढ़ते व्यापार से ईर्ष्यावश उसके विरूद्ध दुष्प्रचार कर रहा है। स्वास्थ्य सेवाओं पर अपने जीडीपी का 1.1 से 1.4 प्रतिशत खर्च करने वाले हमारे देश से लेकर 17 प्रतिशत खर्च करने वाले देश अमरीका तक को भी अपने रक्षा एवं अन्य बजट में कटौती कर स्वास्थ्य बजट को बढ़ाना पड़ेगा ताकि कोरोना जैसे संकट से निपटने के लिए लघु एवं दीर्घ दोनों तरह के उपाय किए जा सकें।

इस त्रासदी का पूरे विश्व को पहला संदेश है कि हमारा नंबर वन दुश्मन कोई देश, धर्म या किसी विचारधारा के अनुयायी नहीं होकर कोरोना जैसी महामारी है जो धर्म, जाति, नस्ल अथवा नागरिकता के आधार पर नहीं सर्वत्र और सब पर तथा कभी भी आक्रमण कर सकती है। इससे बचाव सभी देश मिलकर ही कर सकते हैं। दुनिया के सभी देश विश्व स्वास्थ्य संगठन के माध्यम से इस बीमारी से संबंधित नवीनतम जानकारी तथा आंकड़ों का आदान-प्रदान कर समाधान निकालने में योगदान दे सकते हैं।

दिसम्बर, 2019 के अंत से कोरोना वायरस के आक्रमण के बाद सिंगापुर और दक्षिण कोरिया ने ऐसी महामारी से बचने की अपनी सालों की तैयारी, अति उन्नत टेक्नोलॉजी और नागरिकों की नियमों व निर्देशों का पालन करने की प्रकृति से इसे समय रहते नियंत्रित कर लिया। इटली और ईरान ने इसकी गंभीरता को नहीं समझा और सबसे ज्यादा नुकसान उठाया। स्पेन सहित अधिकांश यूरोपीय देश भी अपने अति आत्मविश्वास के चलते इस परीक्षा में फेल हो गए। भारत में अपार जनसंख्या और सीमित संसाधनों के चलते यह आपदा कहाँ जाकर समाप्त होगी, यह कहना अभी मुश्किल है।

प्रश्न यह है कि कोरोना और भविष्य में होने वाली ऐसी इससे भी खतरनाक महामारी से क्या केवल लॉकडाउन, स्कूल कॉलेजों की छुट्टी, सामाजिक दूरी और घर से काम जैसे उपाय व्यावहारिक व प्रभावी सिद्ध होंगे?

कोरोना जीवाणुओं को मारने के लिए डॉक्टरों और नर्सिंग स्टाफ की सेना की जरूरत होगी। इससे स्वाभाविक है कि हमें न केवल मौजूदा अस्पतालों की क्षमता बढ़ानी होगी और नए अस्पताल खोलने होंगे तथा बड़ी संख्या में नए डॉक्टर व नर्स तैयार करने होंगे बल्कि मौजूदा को प्रोत्साहित कर उनका मनोबल ऊँचा रखने के लिए उन्हें भी सैन्य कर्मियों के जैसा सम्मान देना होगा।

संक्रमित व संदिग्ध लोगों को जानबूझकर लापरवाही से संक्रमण फैलाने से रोकने के साथ उनकी पहचान छुपाने के लिए सख्त कानून बनाने की जरूरत होगी। एक देश से दूसरे देश में प्रवेश से पूर्व यात्रियों के स्वास्थ्य की सम्पूर्ण स्क्रीनिंग की व्यवस्था करनी पड़ेगी ताकि कोई भी देश दूसरे देश के नागरिकों को अपने देश में प्रवेश देने से ना हिचकिचाएँ। भारत जैसे विकासशील देशों में कोई भी रोग सामान्यतः व्यक्ति की अपनी समस्या होती है लेकिन कोरोना जैसी जानलेवा एवं संक्रमणकारी बीमारी ने स्पष्ट कर दिया है कि यदि वे संक्रमित और गंभीर बीमारियों की रोकथाम में उपचार पर एकीकृत व सरकारी स्तर पर उपचार और रोकथाम का काम नहीं करेंगे तो सम्पूर्ण देश का अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।

कोरोना के दुष्प्रभाव से निपटने के लिए सभी देशों को विभिन्न प्रकार के वायरस पर शोध की गति को बढ़ाना होगा तथा चिकित्सा विज्ञान में टेक्नोलॉजी के प्रयोग में कई गुना वृद्धि करनी होगी। कोरोना के बाद की दुनिया मनोबल, अर्थव्यवस्था,

विश्वास और हैप्पीनेस सभी दृष्टियों से कमजोर होती नजर आ रही है। इस दुनिया को दोबारा स्वस्थ और खुशहाल बनाने के लिए नए सिरे से सभी देशों और समुदायों को नवीन और अर्थपूर्ण प्रयास करने होंगे।[2]

दुनिया के लिए नई शुरुआत का वक्त

पवन सुखदेव : भारतीय पर्यावरण अर्थशास्त्री और *ग्लोबल इनीशिएटिव फॉर ए सस्टेनेबल टुमॉरो (जिस्ट)* के संस्थापक और सीईओ हैं। वे संयुक्त राष्ट्र में पर्यावरण संबंधी मामलों के लिए गुडविल एंबेसेडर भी है। कोरोना संकट और प्रकृति के साथ हमारे संबंधों को लेकर नील किंग और गेब्रियल बरू ने डॉइचे वैली के लिए उनका साक्षात्कार लिया। पेश है इस साक्षात्कार के अंशः–

D;k dkjkuk ok;jl gekjh /kjrh dh ok lgt ifrfØ;k g tk ge fu;f=r j[ku d fy, g

केवल कोरोना वायरस ही नहीं बल्कि कहना चाहिए कि हमारी धरती पर वायरस का यह चौथा बड़ा हमला है। इससे पहले हम सार्स, एच-1 एन-1 और मर्स के हमले भी झेल चुके हैं। ये सभी वायरस जानवरों के माध्यमों से मानवी शरीर में आए हैं। इस आधार पर कह सकते हैं कि प्रकृति हमें कुछ इशारा कर रही है। शायद हमें नियंत्रण में रहने का संदेश दे रही हो।

इसमें कोई संदेह नहीं है पर्यावरण असंतुलन का हम ही मुख्य कारण है। हमने ही जंगलों को नष्ट किया है, हम ही नमी वाली जगहों को ढकते जा रहे हैं, हम ही जंगली जानवरों के संसार में घुसे हैं और हम उन्हें भोजन का हिस्सा बना रहे हैं। ऐसे में हो सकता है कि समूचा पर्यावरण तंत्र संतुलन स्थापित करने के लिहाज से अधिक वायरस छोड़ रहा हो।

dHkh vkiu dgk fd ge viu vkfFkd vkj dkjikjiV ekMy dk l'kks/kr dju dh t:jr gA rk fQj vki fdl rjg dh vFk0;oLFkk dh pkgr j[kr g

यह एक चक्रीय अर्थव्यवस्था है। ऐसी अर्थव्यवस्था जिसमें मानव के धन बनाने की प्रक्रिया में मानव पूंजी, सामाजिक पूंजी और प्राकृतिक पूंजी की लागत नहीं लगती। दूसरे शब्दों में इसे ग्रीन या स्वच्छ और न्यायसंगत अर्थव्यवस्था कह सकते हैं। स्वच्छ इसलिए कहता हूँ क्योंकि इसमें पर्यावरण पर कोई विशेष भार नहीं पड़ता। न्यायसंगत इसलिए कहता हूँ क्योंकि यह सामाजिक रूप से संतुलित है। यह न बहुत अमीरों के लिए ही है और न ही केवल गरीबों के लिए।

कॉरपोरेट जगत वास्तव में इस तथ्य को नजरअंदाज कर देता है कि वे शेयरधारकों के लिए केवल पैसा बनाने वाली मशीन ही नहीं है बल्कि एक बड़ा संस्थान है क्योंकि वे सैकड़ों और हजारों लोगों को प्रशिक्षित कर रहे हैं। इस तरह वे मानव पूंजी सृजित कर रहे हैं। वे प्राकृतिक विध्वंस के इंजन बनकर कभी उत्खनन

में, तो कभी जंगलों को नष्ट करने में भी लग जाते हैं। इसके लिए कटाई करते हैं तो कभी धरती की खुदाई करते हैं। सवाल यह है कि क्या वे इन मामलों में कमी कर सकते हैं? क्या वे इस काम को बहुत ही दक्षता के साथ कर सकते हैं? क्या वे यह सब उन जगहों पर नहीं कर सकते जहाँ अस्तित्व में जैव विविधता अत्यंत दुर्लभ है? और अंत में, मैं यह पूछना चाहता हूँ कि वे सामाजिक ताने-बाने को बर्बाद कर रहे हैं, या उसका निर्माण कर रहे हैं?

yfdu D;k ,slk ugh g\ fd mudk Hkh ekx d vu:i mRiknu rk djuk gh gkrk g\l

इसे साफ शब्दों में कहें तो यह पूछा जाना चाहिए कि क्या वे अपने आपूर्तिकर्ताओं, ग्राहकों और सरकार जिसे वे कर अदा करते हैं, के साथ सहयोग कर रहे हैं? क्या वे अधिकाधिक उत्पादन के लिए आपूर्तिकर्ताओं पर दबाव नहीं डाल रहे हैं? क्या वे अपनी आक्रामक रणनीति के जरिए ग्राहकों की मानवीय असुरक्षा का लाभ नहीं उठा रहे? और, यह भी कि क्या वे चाहतों को आवश्यकताओं में और आवश्यकताओं को मांग में और फिर मांग को उत्पादन में परिवर्तित नहीं कर रहे हैं? कया वे इस तरह से उत्पादित वस्तुओं से लाभ नहीं कमा रहे हैं।

मुझे लगता है कि ऐसे कॉरपोरेट को खुद को बदलना ही चाहिए। ऐसा नया कॉरपोरेशन जो ज्यादा जिम्मेदार हो और जो लाभ के साथ प्रकृति का भी ध्यान रखता हो। ऐसा कॉरपोरेशन जो अपने शेयरधारकों के हितों का ध्यान रखने के साथ-साथ अपने कर्मचारियों, समाज और आसपास के पर्यावरण का भी ध्यान रखता हो।

D;k ;g cgr vkn'kksoknh ugh g] ;g n[kr g, fd ekuo LoHkkor ykyph gkrk g\l

बेशक हम लालची हैं लेकिन यह लालच कुछ नवीनता भी उत्पन्न करता है इसलिए यह पूरी तरह से बुरी बात भी नहीं है। लेकिन, कोई भी अनियंत्रित और बेलगाम नहीं हो सकता। इसलिए हमें नियंत्रण और संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता है और यही हम नहीं कर रहे।

इस बात का ध्यान रखिए कि दुनिया केवल निजी धन अर्जन के बारे में नहीं है। पूरी दुनिया एक बाजार भी नहीं है। हमारे पास परिवार है, हमारे पास दोस्त हैं, हमारे पास समाज है, और हम उन्हें लाभ या हानि के तौर के संदर्भ में उनका मूल्यांकन नहीं कर सकते। और अक्सर हम उनके मूल्य को अलग-अलग तरीकों से मापते भी हैं। हमें ध्यान रखना चाहिए प्रकृति भी बहुत कुछ प्रदान करती है। हम उसकी आर्थिक लागत का अनुमान, उसकी सेवाओं को खो देने के आधार पर लगा सकते हैं। किसी भी वस्तु की कीमत लगाकर लाभ के लिए अंधी दौड़ मूर्खों का काम है और दुर्भाग्य से संसार में ऐसा कुछ ज्यादा ही हो रहा है। हमें समझना ही होगा कि हर चीज को पैसों में नहीं तोला जा सकता।

तो हम कैसे रुकेंगे?

ये यह गलत धारणा है कि निजी कंपनियाँ हमारी अर्थव्यवस्था के लिए भगवान के समान हैं। हम सभी अपने-अपने भाग्य के मालिक हैं। हम सभी आज के सही नेतृत्वकर्ता हैं। हमें बाजारों के जादू के आगे मंत्रमुग्ध नहीं हो जाना। हमें कंपनी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी को पूजना नहीं हैं। समझे कि वे आपके और हमारे जैसे लोग ही हैं। इस बारे में जागरूकता पैदा करें।

फिर, प्रभावों का आकलन शुरू करें। हमारे काम के दौरान समाज के लिए लागत, मानव स्वास्थ्य के लिए लागत का जैसे– जैसे आकलन हम करते जाएँगे, हम जीवन से नकारात्मकता को अलग करते जाएँगे, हम जीवन से नकारात्मकता को अलग करते जाएँगे, हमारे जीवन की दिशा बदलती जाएगी।

इसके बाद यह देखें कि हम क्या चाहते हैं और क्या नहीं चाहते हैं। यदि आप चाहते हैं कि वन्यजीवों के बाजार नहीं लगें तो इसके लिए नियम बनाएँ। देश बदलें और फिर देखिए कि बाजार भी किस तरह से बदलते और खुद को व्यवस्थित करते हैं। बहुत कठिन कार्य नहीं है यह।

cgrj Hkfo"; dk fdyke e=*

आज दुनिया एक मुश्किल दौर से गुजर रही है। इससे उबरने के लिए देश-विदेश की सारी संस्थाएँ कई मोर्चों पर परस्पर सहयोग कर रही हैं। संघर्ष के इस समय में, पूर्व राष्ट्रपति और भारत रत्न डॉ. ए पी जे अब्दुल कलाम की यह बात मानवजाति के लिए एक मार्गदर्शक की तरह है कि यह धरती ही एकमात्र उपग्रह है, जहाँ जीवन संभव है, मानवजाति को इसकी रक्षा और संरक्षण का दायित्व निभाना ही होगा। उनका जीवन भी प्रकृति के संरक्षण की दिशा में हमें काफी कुछ सीख देने वाला है। उनकी पुण्यतिथि का इस अवसर पर रोजमर्रा के जीवन में उनकी बुद्धिमत्ता का स्मरण और अंगीकरण ही उस महान आत्मा के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

27 जुलाई, 2015 को शिलांग में, भारतीय प्रबंधन संस्थान में *'क्रिएटिंग ए लिवेबल प्लेनेट अर्थ'* विषय पर उन्होंने विकास की जद्दोजहद में पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र को हो रहे नुकसान के प्रति आगाह किया था। डॉ. कलाम ने सबसे पहले 2 नवम्बर, 2012 को चीन में पेइचिंग फोरम में इस ओर ध्यानाकर्षण किया था कि धरती को रहने योग्य बनाए रखना कितना जरूरी है। उन्होंने कहा था, 'हमें एक रमणीक धरा के लिए वैश्विक दृष्टि विकसित करनी होगी। मानवजाति के लिए इससे अधिक कल्याणकारी कुछ नहीं हो सकता।'

उनके इस स्वप्न को साकार करने के लिए यह आवष्यक है कि हम चीजों को दोबारा उपयोग योग्य बनाने, अपशिष्ट प्रबंधन, ऊर्जा दक्षता, धरती को रहने योग्य बनाने के प्रति लोगों को शिक्षित करने अथवा अन्य संगत कदम उठाने के लिए अपने प्रयास बढ़ाएँ, ताकि इस विश्वदृष्टि को अमलीजामा पहनाया जा सके।

आधुनिक समय की जटिलताओं के समाधान और भारत को 21वीं सदी का अग्रणी देश बनाने के प्रयास तेज करने के लिए हमें समस्या का समाधान करने की कला सीखनी होगी, ताकि वह विकराल रूप न धारण कर ले। समकालीन और भावी चुनौतियों का समाधान करने तथा भारत को विकासशील से विकसित देश बनाने की दिशा में मिसाइल मैन के नाम से प्रसिद्ध डॉ. कलाम के विचार राष्ट्र के लिए हमेशा प्रासंगिक बने रहेंगे। अंतरिक्ष विज्ञान एवं तकनीक क्षेत्र में उनका योगदान सदैव अविस्मरणीय एवं अतुलनीय रहेगा।[4]

कोरोना की लड़ाई को आसान बनाती है भारतीय जीवन पद्धति[5]

कोरोना से लड़ाई कठिन है लेकिन भारतीय प्राचीन परंपराओं/पद्धतियों को अपनाकर इस लड़ाई को आसानी से जीता जा सकता है। जानते हैं इसके बारे में–

शवाड़-सूतक/क्वारंटाइन – अपने यहाँ क्वारंटाइन प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसे शवाड़ (सुतक) कहते हैं। प्रसव के बाद प्रसूता-शिशु को अलग कमरे में रखकर सेवा सुश्रुता की जाती है, क्योंकि दोनों की इम्युनिटी कम होती, वायरस-बैक्टीरिया से बचाव होता है।

प्राचीन सैनिटाइजर– यज्ञ, हवन-पूजन में धूप, घी, लोबान, गुगुल, काला तिल, चंदन, कर्पूर, लौंग आदि इस्तेमाल होता है। ये प्राकृतिक सैनिटाइजर हैं। घर के अंदर आने पर जूता-चप्पल बाहर निकालते थे। वहीं किचन में हर किसी का प्रवेश नहीं होता था। सूतक में भी ऐसे बचाव करते हैं।

सूर्यास्त के बाद खाना न खाएँ– हमारे भोजन में दही, दूध, घी, हरी और मौसमी सब्जियों को महत्व दिया जाता है। खाने में सभी षट्रस (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कसाय) होते हैं। खाना सूर्यास्त से पहले ही खाने से संक्रमण से बचाव होता है। शरीर मजबूत होता, इम्युनिटी बढ़ती है।

प्रणाम से सोशल डिस्टेंसिंग– ब्रह्म मूहूर्त में उठते और योग-प्राणायाम करते हैं। शाम को जल्दी सो जाते हैं। शरीर के साथ मन और याद्दाश्त अच्छा रहता है। इम्युनिटी भी बढ़ती है। पैर छूकर प्रणाम या नमस्ते से सोशल डिस्टिंग होता है। संयुक्त परिवार में तनाव कम होता और मनोबल बढ़ता है। तनाव से इम्युनिटी घटती है। मनोबल कमजोर होने और एकाकी रहने से कई तरह का संक्रमण बढ़ता है। मनोव्याधियों से शरीर को ज्यादा नुकसान होता है।

संदर्भ

1. राजस्थान पत्रिका, *''कोरोना वायरस : प्रकृति के संदेश को समझना जरूरी''*, राजस्थान, जयपुर, 20 मार्च, 2020, पृ. 10।
2. राजस्थान पत्रिका, *''कोरोना से दुनिया में क्या-क्या बदलेगा''*, राजस्थान, जयपुर, 24

मार्च, 2020, पृ. 10, देवाशीष माथुर (गोवा इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट में हेल्थ केयर प्रबंधन विषय का अध्यापन करते हैं।)।

3. राजस्थान पत्रिका, *''दुनिया के लिए नई शुरुआत का वक्त''*, राजस्थान, जयपुर, 13 जून, 2020, पृ. 6, पवन सुखदेव।
4. राजस्थान पत्रिका, *''बेहतर भविष्य का कलाम मंत्र''*, राजस्थान, जयपुर, 27 जुलाई, 2020, पृ. 6, अर्जुन राम मेघवाल (केन्द्रीय भारी उद्योग एवं लोक उद्यम और संसदीय कार्य मंत्री)।
5. राजस्थान पत्रिका, *''कोरोना की लड़ाई को आसान बनाती है भारतीय जीवन पद्धति''*, राजस्थान, जयपुर, 19 जुलाई, 2020, पृ. I, Health…., डॉ. रूपराज भारद्वाज (वरिष्ठ आयुर्वेद विशेषज्ञ, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

भारत में सकारात्मक कार्यवाही

पिंकी पुनिया एवं ऋतेश भारद्वाज

lkjk'k *समानता का मुद्दा प्रत्येक राज्य में एक बहुत चुनौतीपूर्ण मुद्दा रहा है चाहे वह सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक समानता हो। लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित किसी भी राष्ट्र का प्राथमिक दायित्व विषमता को कम करना है, उदाहरण के तौर पर भारत में सकारात्मक भेदभाव की अवधारणा और संयुक्त राज्य अमेरिका में सकारात्मक कार्यवाही की अवधारणा का पालन किया जाता है। यद्यपि दोनों ही उपागम का उद्देश्य एक ही है लेकिन इनके माध्यम से अपनाई जाने वाली विधियां अलग-अलग हैं। सकारात्मक कार्यवाही या संरक्षणमूल्क भेदभाव का मुद्दा समानता के सिद्धांत के साथ जुड़ा हुआ है। समानता का सही अर्थ यह नहीं है कि सभी लोगों के साथ बिलकुल एक जैसा बर्ताव किया जाए। समानता का सही अर्थ है, एक जैसे लोगों के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए (Equality would imply that equals out to be treated alike in the respect in which they are equal) । भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, और अनुच्छेद 17 साथ-साथ अनुच्छेद 340, 341, 342 और अन्य कई स्थानों पर सकारात्मक कार्यवाही को लागू करने का प्रयास किया गया है। इसी सकारात्मक कार्यवाही को जॉन रॉल्स ने भेदमूलक न्याय (Differential Justice) की संज्ञा दी थी। इस लेख में सकारात्मक कार्यवाही से संबंधित भारतीय संविधान में मौजूद प्रावधानों, सिद्धांतों और व्यावहारिक पहलुओं का अध्ययन करते हुए नरम और कठोर सकारात्मक कार्यवाही के प्रयासों की समीक्षा की गई है।*

प्रस्तावना

समानता का सिद्धांत एक गतिशील सिद्धांत है जोकि प्रचलित भेदभाव को मिटाने के लिए सब लोगों को एक-जैसा सम्मान और अवसर प्रदान करने का समर्थन करता है। जब हम सामाजिक अधिकारों (सामाजिक न्याय) की मांग करते हैं तब हमारा अभिप्राय यह होता है कि समाज में विशेष वर्गों के परंपरागत विशेषाधिकारों (Traditional Privileges) को समाप्त कर दिया जाए और वंचित वर्गों को अन्य वर्गों के समान अपनी

योग्यता और परिश्रम के बल पर आवश्यक संपदा, सम्मान व शक्ति प्राप्त करने का उचित अवसर दिया जाए। दूसरे शब्दों में, किसी भी व्यक्ति को लिंग, जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र या रंग, इत्यादि के आधार पर उन्नति के अवसरों से वंचित ना रखा जाए क्योंकि इनमें से कोई भी तत्व भेदभाव का तर्कसंगत आधार (Logical Ground of Discrimination) प्रस्तुत नहीं करता। समानता का सिद्धांत निष्पक्षता पर बल देता है और यह मानकर चलता है कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को आत्मविकास के लिए समान अवसर मिलने चाहिए। जब हम समान अवसरों की बात करते हैं तो उससे हमारा अभिप्राय होता है 'सभी के लिए पर्याप्त अवसर' (Appropriate opportunity for all)। समानता का अर्थ है मानवीय प्रतिष्ठा और अधिकारों की दृष्टि से सब समान है।

इस प्रकार समानता के सिद्धांत के कुछ मुख्य लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं:

(क) समानता का एक पहलू यह है कि किसी भी व्यक्ति को वंश, लिंग, जन्म, स्थान, राजनीतिक पद और धन के आधार पर कुछ लोगों को ऐसे विशेष अधिकार प्राप्त नहीं होंगे जिनसे दूसरे लोग वंचित हो। संक्षेप में, यह भेदभाव के तर्कशून्य आधार को समाप्त करने की मांग करता है परंतु योग्यता और परिश्रम के आधार पर भिन्न-भिन्न लोगों के लिए भिन्न-भिन्न पुरस्कार का विरोध नहीं करता।

(ख) समानता का दूसरा पहलू यह भी है कि सभी व्यक्तियों को आत्म विकास के समान अवसर सुलभ होने चाहिए। लास्की का भी कहना था कि लोगों की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी हो जानी चाहिए इसके अतिरिक्त सभी को शिक्षा की सुविधाएं मिलें और किसी भी व्यक्ति की प्रतिभा का नाश नहीं होना चाहिए।

(ग) समानता का सिद्धांत विशेष सुविधाओं का विरोध करता है परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि किसी व्यक्ति या वर्ग के लिए विशेष सुविधा ही ना जुटाई जाए। यदि सरकार दिव्यांगों के लिए कुछ खास तरह के स्कूल स्थापित करती है और उनकी शिक्षा पर जो खर्चा किया जाता है वह एक औसत बच्चे की शिक्षा पर किए जाने वाले खर्च से ज्यादा होता है। किंतु इसे हम अवसरों की असमानता नहीं कहेंगे क्योंकि सरकार द्वारा जो भेदभाव किया जा रहा है उसका उचित तर्कसंगत आधार है।

समानता के समर्थक अक्सर या सुझाव देते हैं की 'योग्यता के अनुसार आंबटन' (Distribution according to merit) से समाज में जो असंतुलन पैदा हो सकता है उसे संतुलित करने के लिए 'यथासंभव आवश्यकता के अनुसार आंबटन' (Distribution according to need) को भी अपनाना चाहिए। इससे समाज में संपत्ति, सम्मान और शक्ति का समतामूलक वितरण हो सकेगा जो समानता के सिद्धांत को विशेष रूप से

सार्थक करेगा। समतामूलक वितरण के संदर्भ में भी कुछ तथ्य सामने आते हैं जैसे, समाज के जो वर्ग शताब्दियों से दमन और शोषण का शिकार रहे हैं, वे मुक्त प्रतिस्पर्धा में अत्यंत उन्नत लोगों का मुकाबला करने में समर्थ नहीं होंगे। इन लोगों को समाज के दुर्लभ संसाधनों में से उचित हिस्सा दिलाने के लिए कुछ विशेष व्यवस्था करनी पड़ेगी। भारतीय समाज के बड़े हिस्से को कई शताब्दियों से केवल जन्म के आधार पर उच्च शिक्षा, उच्च व्यवसाय और सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के अवसरों से वंचित रखा गया था। इससे यह अनेक पिछड़ी जातियां और पिछड़े वर्ग अस्तित्व में आ गए। 19वीं शताब्दी के आरंभ और मध्य में, जब नई सामाजिक चेतना का उदय हुआ और अनेक समाज सुधारको ने इस व्यवस्था में निहित सामाजिक अन्याय के प्रति गहरी चिंता प्रकट की। जिसके उपरांत भारत की स्वाधीनता के पश्चात यह सामाजिक समरसता के लिए आवश्यक समझा गया कि सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के विकास के लिए कुछ विशेष व्यवस्था करनी होगी ताकि यह राष्ट्रीय जीवन में अपनी उपयुक्त भूमिका संभाल सके। इसका मतलब यह था कि इन वर्गों को अपनी-अपनी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधि संस्थाओं, सरकारी नौकरियों और शिक्षा के महत्वपूर्ण पाठ्यक्रमों में उपयुक्त प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए। आप सभी को यह ज्ञात होगा की सभी लडकियों को दिल्ली विश्वविद्यालय में दाखिले के दौरान एक प्रतिशत की छूट दी जाती है जिसका आधार सकारात्मक समानता है अर्थात तर्कसंगत आधार पर स्त्रियों को शिक्षा के क्षेत्र में उनकी सहभागिता बढ़ाने के लिए यह सकारात्मक कार्यवाही (Affirmative Action) या संरक्षणमूलक भेदभाव (Protective Discrimination) की नीति अपनाई जाती है।

सकारात्मक कार्यवाहीः सिद्धांत एवं व्यवहार

इस प्रकार सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के हितों के संरक्षण के लिए अन्य वर्गों के साथ जो तालमेल या सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की जाती है, उसे संरक्षणमूलक भेदभाव या सकारात्मक कार्यवाही कहा जाता है। भारत में सकारात्मक कार्यवाही का उद्देश्य है की समाज के विभिन्न समूहों के बीच संरचनात्मक असमानता को दूर किया जाए। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'सामाजिक न्याय' के विचार को ध्यान में रखते हुए इसे सकारात्मक कार्यवाही के माध्यम से पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। जिसमें केवल समान अवसर को देना या समतामूलक समाज का उद्देश्य ही शामिल नहीं है बल्कि समाज में उत्पन्न सामाजिक दरारों और खाइयों को समाप्त करना भी है जोकि सांझे समाज की जिम्मेदारी भी है। अमेरिकी राष्ट्रपति बी जॉनसन का मानना था कि सकारात्मक कार्यवाही या समतामूलक समाज के लिए समान अवसरों का दरवाजा खोल देना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि समान अवसर के तर्क को ज्यादा मजबूती से कायम करने की आवश्यकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में अश्वेत जातियों और स्त्रियों को विभिन्न नौकरियों और उच्च शिक्षा के

पाठ्यक्रमों में जैसे चिकित्सा और कानून के पाठ्यक्रमों में प्रवेश देते समय वरीयता दी जाती है। वहां वंचित वर्गों की पहचान करके उनके हित में जो विशेष कार्यवाही की जाती है उसे सकारात्मक कार्यवाही कहा जाता है। वास्तव में भारत में प्रचलित संरक्षणमूलक भेदभाव और अमेरिका में प्रचलित सकारात्मक कार्यवाही एक ही तर्क पर आधारित है। इन दोनों के अंतर्गत वंचित वर्गों को समुचित व उचित प्रतिनिधित्व देने के लिए सरकार द्वारा इनके लिए कुछ विशेष प्रयास किए जाते हैं और इस प्रयास को आलोचकों द्वारा 'विपरीत भेदभाव' (Reverse Discrimination) का मुद्दा कहा जाता है।

प्रोफेसर जेम्स जोंस, जूनियर ने सकारात्मक कार्यवाही को परिभाषित करते हुए कहा था कि यह एक निर्दिष्ट समूह या समूहों में उनकी सदस्यता के आधार पर व्यक्तियों को अवसर या अन्य लाभ प्रदान करता है। प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपन हाइमर के अनुसार सकारात्मक कार्यवाही के क्रियान्वयन में पांच तरीके शामिल होते हैं जैसे कोटा, प्राथमिकताएं, स्व-अध्ययन, आउटरीच और परामर्श और भेदभाव विरोधी। प्रोफ़ेसर बेंजामिन ओपनहाइमर द्वारा वर्गीकृत परिभाषा के माध्यम से सकारात्मक कार्यवाही को दो भागों में विभाजित करके देखा जाता है जैसे कठिन सकारात्मक कार्यवाही (Hard Affirmative Action) और नरम सकारात्मक कार्यवाही। (Soft Affirmative Action)। कठिन सकारात्मक कार्यवाही में कोटा और प्राथमिकताएं शामिल है और नरम सकारात्मक कार्यवाही में आउटरीच कार्यक्रम, स्व-आंकलन विवरण और श्रम बाजार का विकास शामिल है। यहां पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि सकारात्मक कार्यवाही के विचार की उत्पत्ति वितरणमूल्क न्याय के सिद्धांत से हुई है। राजनीतिक सिद्धांत में हमें विभिन्न दार्शनिकों के मध्य न्याय और समानता की अवधारणा को लेकर कई मतभेद दिखाई देते हैं वे सभी समाज को आकार देने के लिए किसी-न-किसी प्रकार न्याय के वितरणकारी तंत्र का सुझाव देते हैं। वास्तव में न्याय का वितरणात्मक सिद्धांत कोई नया नहीं है। स्वयं अरस्तु ने वितरणात्मक न्याय की बात की थी और उनका मानना था कि न्याय दो प्रकार का होता है – पूर्ण न्याय और विशेष न्याय। अरस्तु विशेष न्याय को वितरणात्मक और सुधारात्मक न्याय में विभाजित करते हैं। अरस्तु का मानना था कि न्याय का वितरणात्मक सिद्धांत मानकीय सिद्धांतों पर आधारित है जोकि विशेष रूप से आर्थिक गतिविधियों के लाभों और बोझों के आवंटन को निर्देशित करने के लिए एक रूपरेखा तैयार करता है।

भारत में सकारात्मक कार्यवाही के कार्यक्रम की सारणी को मोटे तौर पर तीन व्यापक श्रेणियों में विभाजित करके देखा जा सकता हैः सर्वप्रथम विभिन्न प्रकार के आरक्षण हमारे देश में प्रचलित है जो मूल्यवान पदों और संसाधनों तक वंचित वर्ग की पहुंच को सुविधाजनक बनाते हैं जैसे विधानसभा में आरक्षण, लोकसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण सहित सरकारी सेवाओं में आरक्षण और शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण। दूसरे प्रकार के सुरक्षात्मक उपायों में भूमि आवंटन, आवास और अन्य दुर्लभ संसाधनों जैसे छात्रवृत्ति, अनुदान, ऋण, स्वास्थ्य

देखभाल, इत्यादि में सुरक्षात्मक उपायों के माध्यम से सकारात्मक कार्यवाही का क्रियान्वयन किया जाता है। तीसरे प्रकार के क्रियान्वयन में कुछ खास उपायों जैसे अस्पृश्यता, बंधुआ मजदूरी, सार्वजनिक स्थलों तक सभी लोगों की समान पहुंच को सुनिश्चित करना, इत्यादि अनेक विषमताओं के व्यवहार को दूर करने की कोशिश की गई है। अशोक आचार्य भी इसे तीन आधारों पर परिभाषित करते हैं जैसे आरक्षण की नीति, विशेष सहयोग तथा सुरक्षा की नीति। आरक्षण की नीति का अभिप्राय राजनीतिक और सरकारी नौकरी तथा शिक्षण संस्थानों में वंचित समुदाय को प्रतिनिधित्व देना है। विशेष सहयोग के माध्यम से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और महिला जैसे समूहों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं जिसमें स्कॉलरशिप, जमीन, घर का आवंटन, स्वास्थ्य सेवा और कानूनी मदद, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, ग्रामीण विकास कार्यक्रम इत्यादि शामिल है। सुरक्षा की दृष्टि से बंधुआ मजदूरी आदि सामाजिक कुरीतियों पर भी रोक लगाई जानी आवश्यक है और व्यक्ति को शोषण से सुरक्षा भी प्रदान की जानी चाहिए। इन तीनों कारको में राज्य की नैतिक वचनबद्धता भी शामिल है।

प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपनहाइमर द्वारा प्रदान किए गए वर्गीकरण में, पहला प्रकार 'कठिन सकारात्मक कार्यवाही' का प्रतिनिधित्व करता है और दूसरा व तीसरा प्रकार 'नरम सकारात्मक कार्यवाही' के विशिष्ट मामलों को सम्मिलित करता है। भारतीय संविधान में राजनीतिक प्रतिनिधित्व के संदर्भ में सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से अनुच्छेद 330 में यह प्रावधान किया गया है कि विशेष राज्य में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात में सीटें लोकसभा में आरक्षित की गई हैं। वह राज्य जो मुख्य रूप से आदिवासी बहुल हैं उन्हें इस प्रावधान से बाहर रखा गया है। इससे पूर्व 1969 में संविधान के 23वें संशोधन की धारा 2 में नागालैंड के जनजातीय क्षेत्रों के संदर्भ में अनुच्छेद 330 के संचालन को बाहर रखा गया था, लेकिन अब 31वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा मेघालय, मिज़ोरम, अरूणाचल, प्रदेश राज्यों तक इसका विस्तार कर दिया गया है।

इसी प्रकार अनुच्छेद 332 के तहत राज्यों की विधानसभा में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में उस विशेष राज्य में उनकी आबादी के अनुपात में सीटें आरक्षित की गई है। यहां पर भी मेघालय, नागालैंड, मिज़ोरम और अरूणाचल प्रदेश राज्य को अनुच्छेद 332 के संचालन से बाहर रखा गया है, केवल इन राज्यों की प्रमुख जनजातीय आबादी के कारण। अनुच्छेद 331 और 333 एक ही तरीके से एंग्लो इंडियन समुदाय के सदस्यों के पक्ष में काम करते हैं। वर्ष 2021 में 104 संविधान संशोधन के माध्यम से लोकसभा में एंगलो इंडियन कम्युनिटी के प्रतिनिधित्व की जो व्यवस्था थी अब उसे समाप्त कर दिया गया है।

भारतीय संविधान में समानता के मौलिक अधिकार के संदर्भ में अनुच्छेद 15 (1)

और 15 (2) के अनुसार राज्य किसी भी नागरिक के साथ जन्म, स्थान, निवास, वंश, वर्ग, भाषा और लिंग के आधार पर भेदभाव की मनाही करता है। दूसरी ओर अनुच्छेद 15 (4) में कहा गया है कि राज्य को किसी भी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिए कोई विशेष प्रावधान करने से नहीं रोका जा सकता है। भारत में अब तक शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण प्रदान करने के लिए अनुच्छेद 15 (4) का उपयोग विशेष रूप से किया गया है। भारतीय संविधान में सुरक्षात्मक भेदभाव (संरक्षणमूल्क भेदभाव) के उपाय के रूप में अनुच्छेद 16 (1) किसी भी सरकारी रोजगार या नियुक्ति के मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसरों की समानता की बात कही गई है और अनुच्छेद 16 (2) प्रावधान करता है कि कोई भी नागरिक के साथ धर्म, जाति, वंश, लिंग, जन्म स्थान, निवास इनमें से किसी भी आधार पर राज्य के अधीन किसी रोजगार में उनके साथ भेदभाव नहीं किया जाएगा। सरकारी सेवाओं में आरक्षण को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 (4) के तहत शामिल किया गया है। यह विशेष प्रावधान समानता के अधिकार के तहत आता है। अनुच्छेद 14 के तहत समानता के सामान्य अधिकार को प्रभावी बनाने के लिए, सविधान सभी नागरिकों को धर्म, जाति, भाषा और लिंग के आधार पर भेदभाव का प्रतिशोध करता है।

प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपनहाइमर के मूल वर्गीकरण के आधार पर भारतीय संविधान के तहत सकारात्मक कार्यवाही कार्यक्रमों की पूरी श्रृंखला को 'कठोर' और 'नरम' कानून श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। संविधान की प्रस्तावना और चौथे भाग में सकारात्मक कार्यवाही का विवरण मिलता है। अनुच्छेद 330 से 334, 340 से 342 और 15 और 16 को कठिन कानून के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है क्योंकि यह कुछ कानूनी मापदंडों को निर्धारित करते हैं जिसके द्वारा विभिन्न ऐतिहासिक अन्याय और षोशण को दूर करने और क्षतिपूर्ति की मांग की गई है। इन वैधानिक प्रावधानों से स्पष्ट है कि भारतीय संविधान सकारात्मक कार्यवाही को सामाजिक राजनीतिक अधिकारों पर परिभाषित करता है। वहीं दूसरी ओर, नरम सकारात्मक कार्यवाही कार्यक्रमों की रूपरेखा को राज्य के नीति निर्देशक तत्व में देखा जा सकता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना ने अपने सभी नागरिकों सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को सुरक्षित करने के लिए भारत में संप्रभुता, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतान्त्रिक गणराज्य को रखा है। राज्य के नीति-निर्देशक तत्व के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक न्याय की स्थापना हेतु राज्यों को मौजूदा सामाजिक आर्थिक असमानता को दूर करने का निर्देश दिया गया है। इसी संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 46 को देखना भी महत्वपूर्ण होगा जोकि विशेष रूप से कमजोर वर्ग को और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के प्रति राज्य के दायित्व को सुनिश्चित करने का प्रयास करता है और राज्य से अपेक्षा करता है कि राज्य इनकी विशेष देखभाल के साथ शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देगा और सामाजिक अन्याय के सभी प्रकार के शोषण से इनकी रक्षा करेगा।

नीति निर्देशक तत्वों के माध्यम से विभिन्न भूमि पुनर्वितरण और आवंटन (Land Distribution and Allocation) कार्यक्रम शुरू किए गए। वास्तव में इस संबंध में सरकार इतनी ज्यादा उत्साहित थी कि भारतीय गणराज्य के पहले पांच वर्षों में ही कई बार भूमि सुधार कानून पारित किए गए। बहुत ज्यादा भूमि सुधार कानूनों में बदलाव के चलते देश के शीर्ष अदालतों में मुकदमों की बाढ़ सी आ गई हालांकि सरकार भूमि सुधारों को प्रभावित करने के लिए इतनी उत्सुक थी कि संपत्ति के अधिकार को अनुच्छेद 31 के तहत प्रदान किया गया और इसे मौलिक अधिकारों की श्रेणी से बाहर करते हुए केवल एक कानूनी अधिकार (अनुछेद 300।) का दर्जा दिया गया और मुकदमेबाजी से बचने के लिए इसे भारतीय संविधान के अनुसूची 9 में शामिल किया गया। आज सकारात्मक कार्यवाही के संदर्भ में अनुसूची 9 में शामिल विषयों की भी न्यायपालिका द्वारा न्यायिक समीक्षा की जा सकती है और यह नरम सकारात्मक कार्यवाही के विस्तार का एक तरीका कहा जा सकता है।

जब सरकारी नौकरियों, उच्च शिक्षा के अवसरों, आवासीय सुविधाओं, इत्यादि में विभिन्न पिछड़े वर्गों के लिए कुछ स्थान संरक्षित कर दिए जाते हैं और उन्हें आवश्यक योग्यताओं, आयु-सीमा इत्यादि में छूट दी जाती है तो इससे सामान्य श्रेणी के प्रतियोगियों को शिकायत हो सकती है, जैसे वे अधिक योग्य होते हुए भी ऐसे दुर्लभ अवसरों से वंचित हो जाते हैं जबकि आरक्षित श्रेणी में उनमें कम योग्यता पाने वाले लोगों का चयन हो जाता है। विपरीत भेदभाव व संरक्षणमूलक भेदभाव के विरोधी यह तर्क देते हैं कि यदि समानता का अर्थ 'भेदभाव का निराकरण' है तो समानता के नाम पर पुराने भेदभाव को उलटी दिशा में मोड़ कर कायम रखने का क्या औचित्य है? वंचित वर्गों के साथ अतीत में जो अतार्किक या अमानवीय भेदभाव बरता गया था, क्या उसकी क्षतिपूर्ति के लिए आज उसी तरह के अतार्किक आधार पर अन्य समूहों के साथ विपरीत भेदभाव किया जाना उचित होगा? यहां पर यह बात जानना आवश्यक है कि भारत में विपरीत भेदभाव का मुद्दा इतने ऊंचे स्वर में नहीं उठाया जाता जैसा कि अमेरिका में उठाया जाता है।

वंचित वर्गों के हित में 'संरक्षणमूलक भेदभाव' या 'सकारात्मक कार्यवाही' के पक्ष में अनेक दलीलें दी जाती हैं जैसेः–

(क) आज के वंचित वर्गों के साथ अतीत में जो अमानवीय और अतार्किक भेदभाव बरता गया, वहीं इनकी वर्तमान दुर्दशा के लिए उत्तरदायी है। इसलिए इनको मुख्यधारा और विकास से पुनः जोड़ने के लिए क्षतिपूरक न्याय की दृष्टि से उचित प्रबंध किए जाना चाहिए।

(ख) कुछ लोग यह तर्क देते हैं, कि यदि पिछड़े वर्गों को उन्नत वर्गों के साथ मुक्त प्रतिस्पर्धा का सामना करने को कहा जाएगा तो उच्च पदों पर इनके चयन की संभावना नगण्य रहेगी। इससे समाज के वर्ग-संरचना को समझने में कोई

उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हो पाएगा। इसके विपरीत, उनके साथ वरीयता का बर्ताव होने पर जब उच्च पदों पर उनका चयन होने लगेगा। तो धीरे-धीरे समाज का ढांचा बदलने लगेगा इससे ना केवल इन वर्गों का आत्मविश्वास बढ़ेगा बल्कि पूरा समाज, समानता की और बढ़ेगा।

(ग) कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि समाज में उन्नति के अवसर इतने दुर्लभ है कि इनका आवंटन करते समय योग्यता के साथ-साथ आवश्यकता को भी ध्यान में रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में योग्यता के अनुसार आवंटन (Distribution According to Merit) के साथ-साथ आवश्यकता के अनुसार आवंटन (Distribution According to Need) को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। वंचित वर्गों की आवश्यकता इतनी प्रबल है कि इस वर्ग के सदस्यों को आवश्यक योग्यता के आधार पर कुछ अंको की छूट दी जा सकती है। पिछड़े वर्ग के परिवार के एक सदस्य को उन्नति का अवसर मिलने पर वह पूरे परिवार को अच्छी शिक्षा, रहन-सहन का अच्छा स्तर और आत्मसम्मान प्रदान करने में सहायक होगा। इससे सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को बल मिलेगा।

वर्ष 1992 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय दिया कि अन्य पिछड़े वर्गों में आरक्षण का लाभ समाज के अपेक्षाकृत उन्नत स्तरों अर्थात मलाईदार परत (Creamy Layer) को प्राप्त नहीं होगा। यह शर्त अनुसूचित जाति (Schedule Caste) और अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribe) के उम्मीदवारों पर लागू नहीं होती। इसका मुख्य कारण यह है, कि इन वर्गों के साथ विशेषकर अनुसूचित जाति के साथ जो सामाजिक भेदभाव बरता गया या बरता जाता है तो वह समाज में जाति के आधार पर होता है ना कि आर्थिक आधार पर। भारत में वर्ष 2019 में भारत की सरकार ने संविधान (124वां संविधान संशोधन) विधायक 2019 को लागू किया, जिससे पूर्ववर्ती अनारक्षित वर्ग या सामान्य श्रेणी के वर्ग के लिए 10 प्रतिशत अतिरिक्त कोटा प्रदान किया गया है। भारत में आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (Economic Weaker Section) सामान्य वर्ग से संबंधित लोगों की उपश्रेणी है, जिनकी वार्षिक आय 8 लाख तक है और जो किसी भी आरक्षित वर्ग जैसे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग के केंद्रीय सूची से संबंधित नहीं है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (EWS) और आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग (Economic Backward Section) और गहन आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग (MEBC: Most Economic Backward Class) की परिभाषा अलग-अलग राज्यों के साथ-साथ संस्थाओं में भी भिन्न-भिन्न है।

सकारात्मक कार्यवाही से एक जुड़ा हुआ मुद्दा यह भी है कि इसको राजनीतिक लाभ का साधन बनाया जा रहा है वह संविधान निर्माताओं ने मूलतः 1950 में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के संरक्षण की विशेष व्यवस्था को 10 वर्ष के लिए तय किया था और उन्हें यह आशा थी कि इस अवधि में इन्हें इतना सशक्त बना दिया जाएगा

कि इसके बाद उन्हें विशेष संरक्षण की जरूरत नहीं रहेगी। संविधान में प्रत्येक 10 वर्ष के उपरांत पर इसकी समीक्षा की बात की गई है। परंतु आने वाली पीढ़ियों ने इनकी दिशा में आवश्यक सुधार लाने की उतनी चिंता नहीं की बल्कि राजनीतिक दलों द्वारा इन्हें वोट बैंक के रूप में आज भी इस्तेमाल किया जाता है और 10-10 वर्ष के लिए यह अवधि बढ़ाई जाती रही है।

हालांकि जातियों का राजनीतिकरण भारत में 80 के दशक से ही प्रारंभ हो गया था। दूसरी तरफ मंडल कमीशन ने सभी राज्यों, और केंद्र सरकार के अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में आरक्षण की सिफारिश की। मध्यप्रदेश का विरोध भी किया लेकिन जातिगत गोलबंदी अपने विस्तृत आकार की वजह से इस विरोध से ऊपर उठ चुकी थी और मेरा यह अलग मामला है कि इस प्रकार की पहल में जो राजनीतिक प्रतिनिधित्व निकल कर आया इसमें कई प्रकार के अंतर्विरोध भी शामिल है जिसे योगेंद्र यादव मिथ्या आभास की संकल्पना देते हैं। जहां का इस बात को स्वीकार करते हैं कि अन्य पिछड़ा वर्गो में यादव और कुर्मी यों का ही प्रतिनिधित्व पड़ रहा है, अन्य जातियों को आगे आने का पर्याप्त मौका नहीं मिल रहा है।

आरक्षण को लेकर द्वंद्व एक बार पुनः समानता के सिद्धांत तथा जाति और वर्ग के बीच की पारस्परिक क्रिया का पूरा विश्लेषण करने की आवश्यकता है। नीरा चंडोक ने अपने एक लेख *'थ्री मिथ्स अबआउट रिजर्वेशन'* में आरक्षण की बहस को पुनः विश्लेषण किया और इससे जुड़े तीन मिथक का जिक्र उन्होंने किया है। *पहला* मिथक, कि आरक्षण से समानता के सिद्धांत का उल्लंघन होता है। इसके पीछे तर्क यह दिया जाता है कि धर्म, जाति, वर्ग, और लिंग को दरकिनार करके सभी की निर्णय निर्माण प्रक्रिया में समान भूमिका होनी चाहिए। आरक्षण द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया गया। लेकिन स्थितिवश यह बहुत निम्न स्तर तक नहीं हो पाया। जैसे कि भूमिहीन दलित महिलाएं तीन प्रकार से वंचित हैं। ये सबी दलित महिलाएँ जाति, वर्ग, और लिंग तीन प्रकार के भेदभाव से एक-साथ ग्रसित हैं। *दूसरा* मिथक, भारत में समानता की बहस पर केंद्रित है जो संरक्षणात्मक-भेदभाव तथा सकारात्मक कार्यवाही में अंतर की उपेक्षा करता है। जैसे अमेरिका में सकारात्मक कार्यों में ना तो कोटा निर्धारित है ना ही योग्यता। भारत में आरक्षण को लेकर सिद्धांत और इसके अनुपालन में कुछ व्यावहारिक समस्याएं देखी जा सकती है। *तीसरा* मिथक, आरक्षण विविधता के प्रति सम्मान की भावना से नहीं किया गया है। किस आधार पर लोगों को एक दूसरे के प्रति असहिष्णु बना देता है।

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है कि समानता का अभिप्राय, एक जैसे लोगों के साथ एक जैसा व्यवहार करना होता है और यदि सरकार कोई भी ऐसी सार्वजनिक नीति का निर्माण करती है जिसमें कुछ वर्गों को संरक्षण प्रदान करते हुए विकास की मुख्यधारा

में बराबरी का अधिकार देने की कोशिश की जाती है और उसका यदि कोई तर्कसंगत आधार होता है तो इसे स्वीकार किया जा सकता है। जॉन रॉल्स ने अपने न्याय के सिद्धांत में इसे भेदमूलक न्याय (Difference Principal) की संज्ञा दी है जिसे हम सकारात्मक कार्यवाही, संरक्षणमूलक भेदभाव या भेदमूलक न्याय भी कह सकते हैं।

सन्दर्भ

1. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
2. अब्बास, होइयेदा, व कुमार, रंजन कुमार, पॉलिटिक्ल थ्योरी, नई दिल्लीः पीयरसन, 2009।
3. रॉल्स, जॉन, *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस,* हार्वर्ड : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1971।
4. विनोद, एम. जे और मीना देशपांडे, कंटमपरेरी पॉलिटिक्ल थ्योरी, नई दिल्लीः पी.एच. आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, 2013।

सन्दर्भ सूची

1. रितेश भारद्वाज, राजनीतिक सिद्धांत का परिचय, दी पोलिटिक और विराट बुक हाउस, 2021.
2. वही
3. Oppenheimer, David Benjamin, Distinguishing Five Models of Affirmative Action, Berkeley Journal of Gender, Law & Justice, Vol. 4, Issue 1, 1988- DOI: 10-15779/Z38Z00P.
4. वही
5. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
6. वही
7. V.N. Shukla, Constitutional of India, in M. P. Singh Ed, 13th ed., Eastern Book Company, 2017.
8. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
9. संपत्ति के अधिकार को मूल रूप से भारत में एक मौलिक अधिकार माना जाता था, लेकिन भारतीय संविधान के 44 वें संशोधन द्वारा, अनुच्छेद 300 (ए) के प्रावधान के तहत, इसे केवल एक संवैधानिक अधिकार तक कम कर दिया गया था।
10. Neera Chandhoke, Three Myths about Reservations, Economic and Political Weekly, January 2006, DOI:10.2307/4418313.

असंगठित क्षेत्र कोविड-19 का प्रभावः महिला घरेलू कामगारों के संदर्भ में

सुरेन्द्र कुमार

Ikjk'k *कोविड-19 महामारी ने जीवन और जीविका दोनों को प्रभावित किया। असंगठित क्षेत्र के कामगारों पर लॉकडाउन का विशेष प्रभाव पड़ा। इनमें लगभग तीस लाख महिला घरेलू कामगार हैं जिनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति लॉकडाउन के दौरान अत्यंत दयनीय हो गई। इनका काम छूट गया। घरों में कैद होने को वे मजबूर हो गईं। सरकार के अनुरोध के बावजूद इनके नियोक्ताओं ने इनका वेतन रोक दिया। काम से हटा दिया। महानगरों एवं बड़े शहरों में स्थिति और भी भयावह थी। प्रस्तुत लेख में महिला घरेलू कामगारों की महामारी के दौरान स्थिति का आकलन किया गया है।इनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के उपाय भी सुझाए गए हैं। सरकार के द्वारा अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम चलाए गए। किंतु सरकारी राहत इन तक पर्याप्त रूप से नहीं पहुँच पाई। प्रशासकीय बाधाएँ, पंजीकरण की जटिल प्रक्रियाएं तथा अप्रभावी क्रियान्वयन के कारण इन योजनाओं का लाभ लक्षित समूह को नहीं मिल पाया।*

प्रस्तावना

वैश्विक स्तर पर कोविड-19 के प्रसार को रोकने के लिए सरकारों ने कई बार लॉकडाउन लगाया। भारतीय प्रधानमंत्री ने भी 24 मार्च, 2020 को राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन की घोषणा की। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक दूरी कायम करना था ताकि वायरस के प्रसार को रोका जा सके। किंतु इन प्रतिबंधों के कारण देश की आर्थिक स्थिति चरमरा गयी। उद्योग धंधों पर ताले लग गए। रोजगार के अवसर समाप्त हो गए। संगठित क्षेत्र की तुलना में असंगठित क्षेत्र व्यापक रूप से प्रभावित हुआ।[1] इस क्षेत्र के कामगार रोज कमाने और खाने वाले लोग होते हैं, यथा– घरेलू कामगार, रेहड़ी लगाने वाले, कचरा चुनने वाले, निर्माण मजदूर इत्यादि। इनके रोजगार अचानक समाप्त हो गए। घरों के किराए देने को पैसे नहीं बचे। मकान मालिक किराए के लिए

परेशान करने लगे। फलतः, इन्हें मजबूर होकर अपने घरों एवं गांवों की ओर कूच करना पड़ा जिसकी स्मृति हम सबके जेहन में तरोताजा है। एक आकलन के अनुसार भारत में चार गैर-कृषि कामगारों में से तीन असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं।[2] कृषि कार्यों में रोजगार नहीं मिलने की स्थिति में ये बड़े नगरों एवं शहरों की ओर रुख करते हैं। ये वहां विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं। ये कामगार अशिक्षित, अप्रशिक्षित एवं गरीब होते हैं। पुरूष एवं महिला अलग-अलग कार्यों में संलग्न होते हैं। पुरूष सामान्यतः सुरक्षा गार्ड, निर्माण मजदूर या रेड़ी लगाने का कार्य करते हैं जबकि महिलाएं या तो पुरूषों के कार्यों में सहयोग करती हैं या अपार्टमेंट्स में घरेलू सहायक के रूप में कार्य करती हैं।

नियोक्ताओं की उदासीनता

एन. एस. एस. के 2011-12 के आंकड़ों के अनुसार भारत में लगभग चालीस लाख घरेलू कामगार हैं जिनमें करीब तीस लाख महिला घरेलू कामगार हैं।[3] लॉकडाउन के बाद इनका काम रातों रात बंद हो गया। ये बेरोजगार हो गए। इनके नियोक्ताओं के द्वारा भी आर्थिक मदद नहीं दी गई। भारत सरकार ने नियोक्ताओं से कई बार अपील की थी कि महामारी के दौरान वे अपने घरेलू कामगारों एवं कर्मचारियों को पूरा वेतन मानवीय आधार पर दें। किंतु अधिकतर घरेलू कामगारों को लॉकडाउन के दौरान पूरा वेतन नहीं मिला।[4] नियोक्ताओं ने इसके पीछे अपनी मजबूरी बताई। उनका कहना था कि उनके वेतन में भी कटौती हो गई है। उनका काम बंद हो गया है। साथ ही उन्हें ऋण के ब्याज का भुगतान भी करना पड़ता है। लॉकडाउन के उपरान्त अधिकतर लोग घर से कार्य करने लगे। ऐसी स्थिति में पूर्ण-कालिक महिला घरेलू कामगारों का भी काम बंद हो गया। ये कामगार छोटे बच्चों एवं बूढों की देखभाल करती थीं। साथ ही घर का सारा काम भी इनके जिम्मे था क्योंकि पति-पत्नी काम पर जाते थे। घर से काम करने तथा बीमारी से सुरक्षा का हवाला देते हुए इन्हें काम से निकाल दिया गया। इस प्रकार, घरेलू कामगारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई। भूखमरी के कगार पर ये आ गईं। सरकार के द्वारा प्रदत्त आर्थिक मदद एवं राशन भी अधिकांश को नहीं मिल पाई।

रेजिडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन की भूमिका

महानगरों एवं बड़े शहरों में रेजिडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन की भूमिका भी महिला घरेलू कामगारों के संघर्ष एवं दुःख-दर्द को बढ़ाने वाली रही।[5] अपार्टमेंट्स में उनके प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया गया। लॉकडाउन के हटने के बाद भी ये प्रतिबंध जारी रहे। इनका फोटो, निवास प्रमाण-पत्र, टेलीफोन नम्बर इत्यादि मांगा गया। साथ ही पुलिस सत्यापन की शर्त भी रखी गई। ये शर्तें अशिक्षित महिला कामगारों के लिए

अत्यंत कठिन थीं। इनमें से अधिकांश समाज के पिछड़े, दलित एवं अल्पसंख्यक वर्ग से ही आती हैं। इनके मानवाधिकारों का हनन किया गया। लिफ्ट के प्रयोग पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया । सीढ़ी के रास्ते ही इन्हें नियोक्ताओं के घरों में जाना पड़ता था। एसोसिएशन ने इनके लिए आरोग्य सेतु एप्प डाउनलोड करने की शर्त रख दी। यह एप्प स्मार्ट फोन में ही डाउनलोड किया जा सकता है। अधिकतर महिला कामगारों के पास स्मार्ट फोन नहीं थे। इनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को नजरंदाज करके इस प्रकार की शर्तें अस्वीकार्य, असहनीय एवं अमानवीय हैं। ये गरीब महामारी के दौरान अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहीं हैं। हद तो तब हो गयी जब इन घरेलू महिला कामगारों को वायरस का वाहक (वायरस कैरियर) माना गया।[6] अमीर एवं संभ्रांत परिवार के लोग सिरे से वायरस कैरियर की अपनी भूमिका नकारते रहे। यह सच्चाई है कि विदेशों से आए लोगों से ही वायरस का फैलाव हुआ न कि स्थानीय स्तर पर कार्य करने वाली इन महिला घरेलू कामगारों से। अगर ये कामगार वायरस से पीड़ित हुईं तो अपने नियोक्ताओं से हुईं। इसके बावजूद अपार्टमेंटस में इनके प्रवेश पर ही प्रतिबन्ध लगा। इनकी कार्य की प्रकृति ऐसी है कि ये घर से कार्य (वर्क फ्रॉम होम) नहीं कर सकते। काम छूटने के कारण परिवार चलाना एवं घर का किराया देना मुश्किल हो गया। इस प्रकार, लॉकडाउन के दौरान इन गरीब महिला घरेलू कामगारों पर ही सबसे अधिक मार पड़ी।

सामाजिक-आर्थिक संघर्ष

एक तरफ बहुराष्ट्रीय कंपनियों में कार्य करने वाले घरों से काम करते रहे। लगातार वेतन मिलता रहा तथा उनके बच्चों की शिक्षा ऑनलाइन माध्यम से चलती रही तो दूसरी ओर घरेलू कामगारों की नौकरी चली गयी तथा अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती रहीं। ये असमताएं लॉकडाउन के पूर्व भी थीं। किंतु लॉकडाउन के दौरान इसमें आशातीत वृद्धि हुई। इन कामगारों की नौकरी लिखित अनुबंध पर आधारित न होकर मौखिक शर्तों पर निर्भर होती है जिन्हें कभी भी अपनी सुविधा के अनुसार बदला जा सकता है।[7] कार्य असुरक्षा की भावना सर्वदा बनी रहती है। इनके लिए कल्याणकारी प्रावधान यथा– बीमा, संवैतानिक अवकाश, साप्ताहिक अवकाश, मातृत्व अवकाश इत्यादि का प्रावधान नहीं है। कार्यस्थल की परिस्थितियां अत्यंत कठिन हैं। अधिकांश महिला कामगारों का नियोक्ताओं के द्वारा विभिन्न प्रकार से शोषण होता है। अपना घर चलाने के लिए ये कम मजदूरी पर भी कार्य करने को तैयार हो जाती हैं। कई बार तो पति के निकम्मेपन के कारण पूरे घर का खर्च इन्हें ही चलना पड़ता है। ऐसी स्थिति में इनका संघर्ष और भी बढ़ जाता है। भारत सरकार ने लॉकडाउन के दौरान अनेक वित्तीय राहत पैकेज की घोषणा की ताकि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को राहत मिल सके। प्रधानमंत्री गरीब कल्याण योजना के तहत केंद्र सरकार ने अनेक

राहत कार्य शुरू किए। प्रधानमंत्री जन-धन योजना के तहत 500 की राशि तीन महीने तक गरीब महिला कामगारों के खातों में डालने की घोषणा की गई।[8] राज्य सरकारों के द्वारा मुफ्त राशन वितरण की व्यवस्था की गई। इसके लिए राशन कार्ड की अनिवार्यता नहीं रखी गई। केंद्र एवं राज्य सरकारों की इन सभी सरकारी घोषणाओं के बावजूद धरातल की स्थिति कुछ और ही थी। अधिकतर महिला कामगारों को इनका लाभ नहीं मिला। बैंक खाता निष्क्रिय होने के कारण नकदी राशि नहीं मिल पाई।[9] अधिकतर महिलाएं तो इन योजनाओं से अनभिज्ञ थीं जिसके कारण उन्हें कोई लाभ नहीं मिल पाया। राशन एवं फूड पैकेट के वितरण में भी अनियमितता पाई गई।

नियोक्त-कर्मचारी संबंध

नियोक्ता एवं कर्मचारियों के बीच संबंध को पुनःपरिभाषित करने की आवश्यकता है ताकि घरेलू कामगारों को भी संगठित क्षेत्र के कामगारों की तरह व्यवहार किया जा सके। नियोक्ताओं को इनके साथ सहानुभूति रखनी चाहिए क्योंकि दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं। एक अपने अस्तित्व के लिए तो दूसरा काम के साथ घर-परिवार संभालने के लिए। दोनों को यह समझना होगा कि वे एक दूसरे से लाभान्वित होते हैं। अतः, दोनों के बीच दीर्घ-कालिक संबंध होना चाहिए। अगर कामगार की कोई गलती पकड़ी जाती है और काम पर आने से मना किया जाता है तो ऐसी स्थिति में एक माह का नोटिस देना अनिवार्य होना चाहिए। महामारी के दौरान सरकार के द्वारा प्रदत्त राहत सामग्री के वितरण की जानकारी महिला घरेलू कामगारों को दी जानी चाहिए ताकि इनका लाभ उन्हें भी मिल सके। जानकारी के अभाव में अधिसंख्य महिला कामगार सरकारी कार्यक्रमों के लाभ से वंचित रह जाती हैं। अतः, इनका क्रियान्वयन इस तरह से किया जाना चाहिए कि अशिक्षित एवं अजागरूक महिला कामगारों को भी इनका लाभ मिल सके ।

सरकारी योजनाएँ एवं कार्यक्रम

महिला घरेलू कामगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण से संबंधित सरकार के द्वारा घोषित विभिन्न प्रकार की योजनाओं एवं कार्यक्रमों का प्रभावी क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। सरकार, नागरिक समाज तथा कामगार यूनियन को सम्मिलित रूप से यह कार्य करना होगा। नागरिक समाज संगठन के द्वारा इन योजनाओं के लाभ के बारे में महिला घरेलू कामगारों को अवगत कराया जाना चाहिए। राज्य एवं स्थानीय इकाइयाँ भी इसमें सहयोग करें। घरेलू कामगार संघ के द्वारा कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करके महिला कामगारों की क्षमता में वृद्धि करना चाहिए। यदि महिला कामगारों की कार्यक्षमता एवं कौशल में वृद्धि होती है तो ये नियोक्ताओं से अधिक वेतन के लिए सौदेबाजी कर सकती हैं। महिला घरेलू कामगारों के कष्ट एवं

संघर्ष को कम करने के लिए इनका पंजीकरण भी किया जाना चाहिए। एक निश्चित अवधि की कार्य सुरक्षा इनके लिए प्रदान करनी चाहिए। आंगनवाडी कार्यकर्ताओं की मदद से महिला कामगारों की पहचान एवं इनका पंजीकरण कराया जाना चाहिए। सभी पंजीकृत महिला कामगारों को पहचान-पत्र दिया जाना चाहिए जिसका उपयोग ये अपार्टमेंटस में काम पाने में कर सकती हैं। साथ ही अन्य सरकारी एवं गैर-सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों से लाभ उठा सकती हैं। केंद्र सरकार के द्वारा घरेलू कामगारों के लिए असंगठित कामगार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 एवं कार्यस्थल पर योन शोषण अधिनियम, 2013 लागू किया गया है। घरेलू कामगारों के लिए विकलांगता एवं मातृत्व सुरक्षा तथा वृद्धावस्था पेंशन की भी व्यवस्था सरकार के द्वारा की गई है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के तहत पंजीकृत घरेलू कामगारों के लिए 3000 का बीमा सुरक्षा प्रदान किया गया है।[10] इस प्रकार, घरेलू कामगारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम चलाए गए हैं। किंतु इनका लाभ घरेलू कामगारों तक पूरी तरह नहीं पहुँच पाता है। प्रशासकीय बाधाएँ, पंजीकरण की जटिल प्रक्रियाएं तथा अप्रभावी क्रियान्वयन के कारण इन योजनाओं का लाभ लक्षित समूह को नहीं मिल पाता है। महिला घरेलू कामगार इससे अधिक प्रभावित होती हैं।

नागरिक समाज की भूमिका

महिला घरेलू कामगारों के कार्य की प्रकृति के कारण इन्हें निकृष्ट समझा जाता है। लॉकडाउन के दौरान इन्हें 'वायरस कैरियर' भी कहा गया। सरकार एवं नागरिक समाज की साझेदारी के द्वारा ही इनके कष्ट एवं संघर्ष को कम किया जा सकता है। एक मंच बनाया जाना चाहिए जिसके सदस्य सरकार एवं नागरिक समाज दोनों से हों। यह मंच महिला कामगारों की ओर से उनकी समस्याओं को उठाएगा तथा सौहार्दपूर्ण समाधान की कोशिश करेगा। यह मंच महिला घरेलू कामगारों एवं उनके नियोक्ताओं के बीच सम्मानजनक सेवा-शर्तें निर्धारित करेगा ताकि कामगारों का शोषण न होने पाए तथा उनके संघर्ष एवं कष्ट को न्यूनतम किया जा सके। महिला घरेलू कामगारों से संबंधित मुद्दों एवं समस्याओं को सहानुभूति पूर्वक विचार करने के लिए रेजिडेंटस वेलफेयर एसोसिएशन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ये एसोसिएशन केवल कामगारों से कागजात ही न मांगें बल्कि इन कागजातों को बनवाने में मदद भी करें। अधिकतर महिला कामगार अशिक्षित होती हैं। ऐसी स्थिति में उनको बताया जाना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के कागजात यथा निवास प्रमाण-पत्र, राशन कार्ड इत्यादि कहाँ एवं कैसे बनाया जाए। ऐसा करने से रेजीडेंट्स वेलफेयर एसोसिएशन एवं महिला कामगारों दोनों को लाभ होगा। महिला घरेलू कामगारों के प्रति किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। अतः, इनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार

लाने की दिशा में सिविल समाज की महती भूमिका हो सकती है। उदाहरण स्वरूप, बेंगलुरु अपार्टमेंटस फेडरेशन ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया है।[11] इस फेडरेशन ने एक योजना शुरू की है जिसके अन्तर्गत अपार्टमेंट्स में कार्य करने वाले कामगारों के लिए चिकित्सकीय सुविधा प्रदान करने का प्रावधान है। इसने घरेलू कामगारों यथा बाई, ड्राइवर, बावर्ची, प्लंबर, इलेक्ट्रीशियन इत्यादि के लिए सामूहिक बीमा की योजना शुरू की है जो इनके स्वास्थ्य से संबंधित व्यय वहन करेगा। यह अत्यंत ही सराहनीय कदम है तथा इस तरह की योजना पूरे भारत में शुरू की जानी चाहिए ताकि घरेलू कामगारों को कुछ सुरक्षा कवच मिल सके।

निष्कर्ष

इस प्रकार, अल्प-कालिक एवं दीर्घ-कालिक उपायों के द्वारा महिला घरेलू कामगारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है। अल्पकालिक उपाय के रूपमें राशन एवं नकदी भुगतान की व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए। घर का किराया तथा अन्य प्रकार के बिल भुगतान के लिए लम्बा समय दिया जाना चाहिए। गैर-सरकारी संगठन, स्थानीय निकाय एवम अन्य सरकारी एजेंसियों के द्वारा इन सबकी निगरानी होनी चाहिए। असंगठित कामगार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 एवम राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना के तहत महिला घरेलू कामगारों को लाभ प्रदान करने के लिए मिशन मोड में कार्य किया जाना चाहिए। दीर्घ-कालिक उपाय के रूप में महिला कामगारों की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित की जानी चाहिए। इनके लिए संवैतानिक अवकाश, स्वास्थ्य बीमा, साप्ताहिक अवकाश, मातृत्व अवकाश इत्यादि की व्यवस्था होनी चाहिए। असंगठित क्षेत्र में महिला कामगारों की संख्या को ध्यान में रखते हुए बजट का प्रावधान लिंग आधारित होना चाहिए। पहले से चल रही सरकारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन और प्रभावी बनाया जाना चाहिए। नेशनल पॉलिसी फॉर डोमेस्टिक वर्कर्स को यथाशीघ्र लागू किया जाना चाहिए। शोषण एवं हिंसा के विरूद्ध कड़ी कानूनी कार्रवाई होनी चाहिए। इस प्रकार, विभिन्न हितधारकों यथा केंद्रीय, राज्य तथा स्थानीय एजेंसियां, स्वयंसेवी संस्थाएँ, गैर-सरकारी संगठन, श्रम कल्याण कार्यकर्ता, कामगार यूनियन, *रेजिडेंटस वेलफेयर एसोसिएशन* एवं आम नागरिक के सम्मिलित प्रयास एवं कार्य से ही महिला घरेलू कामगारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सकता है।

सन्दर्भ

1. https://www.wiego.org/informa-economy/occupational-groups
2. UN India, COVID–19: Immediate socio-economic response plan for india, 2020
3. NSSO, India– Employment and Unemployment: NSS 68th Round : July

2011– June 2012, Government of India

4. https://www.thehindu.com/news/cities/bangalore/91-of-domestic-workers-not-paid-during-lockdown-survey/article31835257.ece
5. https://thediplomat.com/2020/05/covid-19-lockdown
6. https://www.thenewsminute.com/article/they-think-we-carry-virus-scores-domestic-workers-bengaluru-lose-jobs-125390
7. https://www.thehindu.com/news/national/80-in-informal-employment-have-no-written-contract/article11219058.ece
8. https://www.hindustantimes.com/india-news/coronavirus-update-women-to-get-rs-500-per-month-from-today-under-pm-jan-dhan-yojana/story-KxAb-6jZRrPqUUvA2uNSwxl.html
9. https://www.downtoearth.org.in/news/governance/covid-19-relief-didn-t-reach-jan-dhan-a-cs-of-many-women-survey-72113
10. https://bengaluru.citizenmatters.in/bangalore-apartments-federation-baf-group-health-insurance-domestic-workers-bamboos-38860
11. https://www.newsindianexpress.com/opinions/editorials/2020/may/23/need-laws-to-protect-domestic-workers-2146885-html

प्रशासकीय न्यायाधिकरण की अवधारणा

स्निग्धा त्रिपाठी

lkjk'k % *प्रस्तुत शोध पत्र में ''प्रशासकीय न्यायाधिकरण की अवधारणा'' का विशद् विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि भारत में भी अन्य देशों की भाँति विभिन्न प्रकार के प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की अतिशय वृद्धि परिलक्षित हो रही है। हालांकि इस न्यायाधिकरण देश ने वास्तविक संवैधानिक तंत्र के एक स्थायी अंग का स्वरूप ग्रहण कर लिया है। इन्हें अधिनिर्णय (Adjudication) की प्रणाली के रूप में मान्यता प्राप्त हो गयी है जिनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि दृष्टिगत हो रही है। फ्रेडरिक एफ. ब्लैकली और मिरियम ई. ऑटमैन (Frederich F. Blackly and Miriam E. Oatman) का प्रशासकीय न्यायाधिकरणों को 'प्रशासकीय न्यायालय' के रूप में अभिव्यक्त करते हुए कथन है कि, ''न्यायिक प्रणाली के वाह्यतर स्थित ऐसी सत्ता प्रशासकीय न्यायालय कहलाते हैं, जो तत्कालीन समय की विधियों की व्याख्या प्रस्तुत करते हों, उन्हें लागू करते हों जब भी लोक प्रशासन के कार्यों पर औपचारिक मुकदमों अथवा अन्य स्थापित रीतियों द्वारा अतिक्रमण किया जाता है''।*[1]

प्रस्तावना

वस्तुतः सरकारी कार्यों में अप्रत्याशित अभिवृद्धि होने के कारण कार्यपालिका के हाथों में शक्तियों का अतिशय केन्द्रीकरण परिलक्षित हो रहा हे। डब्ल्यू. ए. राब्सन (W.A. Robson) की दृष्टि में, ''ब्रिटिश संविधान पिछली अर्द्धशताब्दी के समय जिस विस्मयपूर्ण रूप में विकसित हुआ है उनमें से एक यह है कि राज्य के बड़े विभागों तथा न्यायालयों के बहिर्गत अन्य अनेक निकायों और शक्तियों ने न्यायिक शक्ति प्राप्त कर ली है''।[2] उक्त कथन भारत पर भी पूर्णतः लागू होता है। यद्यपि कल्याणकारी राज्य में बहुत से विषयों के अन्तर्गत विधि-निर्माण करना अत्यन्त अपरिहार्य हो जाता है। फलतः कानूनों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि होना अवश्यम्भावी हो जाता है।

हालांकि एक सामान्य नागरिक के जीवन में कल्याणकारी राज्यान्तर्गत सत्ता का हस्तक्षेप अपेक्षाकृत अधिक होता है। सत्ता एवं व्यक्तियों के बीच विवादों की अधिकता से संविधि अथवा न्यायाधिकरणों के माध्यम से ही इन विवादों का निर्णय करना सम्भव

हो पाता है। अधुनातन समय में व्यक्ति के अधिकार तथा स्वतंत्रता को प्रायः चुनौती दिया जाना एक अत्यन्त भयावह समस्या है। वैयक्तिक अधिकारों एवं जनहित की इच्छाओं के अनुकूल समन्वय में किसी भी प्रकार का प्रयत्न करना शेष नहीं रखना चाहिए। इस तरह के वांछित समझौते को सम्पन्न कराना ही प्रशासकीय न्यायाधिकरणों का प्रमुख उद्देश्य होता है, निःसन्देह ऐसा होना भी चाहिए। प्रशासकीय सत्ता से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सामान्य नागरिकों के निकाय को यह विश्वास दिलाने का प्रयत्न करे कि लोकहित, जिस हेतु वह कृतसंकल्पित है तथा वैधानिक हित जिसमें वह अवरोध उत्पन्न करता है, इनके मध्य समन्वय एवं संतुलन को यथोचित सम्मान स्थापित करने हेतु सतत् प्रयत्नशील हो।[3] 1957 में इण्डियन लॉ इन्स्टीट्यूट में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के भाषण का सार रूप यही था जिसमें उनका कथन था कि, ''जहाँ तक व्यक्ति को स्वतंत्रता पर प्रतिबंधों का प्रश्न है, हमें इस तथ्य पर एकदम अलग तरह से विचार करना चाहिए। जहाँ एक तरफ हमारी यह अनुभूति होती है कि व्यक्ति को अधिकतम् स्वतंत्रता की प्राप्ति होनी चाहिए तो वहीं दूसरी तरफ हमें यह भी मानने की आवश्यकता है कि एक कल्याणकारी राज्य में स्वयं एवं दूसरों के साथ व्यवहार करने में व्यक्ति की स्वतंत्रता पर अधिक से अधिक नियंत्रण स्थापित होता है। एक उत्तम शासन को ऐसे श्रेष्ठ साधन के अन्वेषण की आवश्यकता है जिससे वह इन दोनों के मध्य समन्वय एवं संतुलन स्थापित कर सके, इस हेतु मध्य मार्ग श्रेयष्कर होता है जिसको ढूँढने की अपरिहार्यता होती है''।[4]

यद्यपि कुछ ऐसी शक्तियाँ होती हैं जो प्रशासकीय प्राधिकारों में निहित तो होती हैं किन्तु उनका स्वरूप अपने प्रयोग के ढंग में एक सीमा तक न्यायिक होता है तथा उसी के नियन्त्रणाधीन होता है। हालांकि कोई भी कार्य न्यायिक कार्य तब कहलाता है जब वह कार्य न्यायालय द्वारा सम्पन्न किया जाता है, किन्तु कार्य जब प्रशासकीय न्यायाधिकरण द्वारा सम्पादित किया जाता है, तब वह अर्द्ध-न्यायिक कहा जाता है। किसी भी अर्द्ध-न्यायिक कार्य को किसी न किसी प्रशासकीय निकाय द्वारा ही सम्पन्न किया जाता है, जो न्यायिक रीतियों का अनुपालन करने तथा तथ्यों के सम्बन्ध में कानून को लागू करने हेतु बाध्य है। न्यायिक एवं अर्द्ध-न्यायिक कार्य में समरूपता इस रूप में परिलक्षित होती है कि किसी भी तथ्य अथवा तथ्यों के समूह के प्रति कानून लागू किया जा सकता है। ''न्यायिक अधिकारियों का जहाँ तक सम्बन्ध है उनके आदेश या तो न्यायिक हो सकते है अथवा प्रशासकीय। वे अर्द्ध-न्यायिक नहीं हो सकते, क्योंकि अन्य अधिकारी न्यायिक नहीं होते, चाहे उनके आदेश भले ही न्यायिक हो, किन्तु वे मात्र अर्द्ध-न्यायिक ही हो सकते है''।[5]

वस्तुतः प्रशासकीय न्यायाधिकरण व्यक्ति तथा सार्वजनिक सत्ता के मध्य यथोचित सम्बन्ध कायम करने की दृष्टि से गतिशील होते है। उनके द्वारा नागरिकों की स्वतंत्रता तथा न्याय और अधुनातन सरकार की जरूरतों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने का निरन्तर प्रयत्न किया जाता है। निःसन्देह साधारण विधि के सन्दर्भ में विधि न्यायालयों

के कार्य प्रशंसनीय रहे हैं किन्तु अधुनातन सामाजिक सेवा वाले राज्यों हेतु जो दिन-प्रतिदिन अधिकतम् महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं। हालांकि यह समय की माँग है कि एक नूतन किस्म का न्याय जिसमें समाज-कल्याण की भावना निहित हो, अत्यन्त अपरिहार्य है। प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के उद्भव तथा विकास से ही लोकहित की भावना से युक्त न्याय सम्भव हो सकता है।

यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी में सरकार के कार्यों का प्रसार एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्रों में होने, समुदाय के सामान्य कल्याण, सुरक्षा एवं स्वास्थ्य के हित में व्यक्ति के अधिकार उत्तरोत्तर सीमित होने, सेवायोजन की शर्तों पर सामूहिक नियन्त्रण का विकास होने एवं रहने के ढंग और लोगों की प्रारम्भिक आवश्यकताओं के विकास के फलस्वरूप अधिनिर्णयन की एक ऐसी तकनीक की जरूरत उत्पन्न हो जाती है जो कानूनी न्यायालयों की जटिल और महँगी मुकदमेबाजी की तुलना में सामाजिक अपरिहार्यताओं के अधिक अनुकूल हो। डीन रोस्को पाउण्ड (Dean Roscoc Pound) की दृष्टि में, ''जब किसी व्यक्ति द्वारा अपने बात की अभिव्यक्ति की जाती है तो तत्कालीन समय में वह अहस्तक्षेप की पद्धति से मिलती-जुलती कम प्रतीत होती है तथा सामाजिक उद्देश्यों हेतु विद्यमान सामाजिक संस्था से अधिक मिलती-जुलती है। प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के अस्तित्व अपरिहार्य हो अथवा न हो, किन्तु निःसन्देह प्रशासकीय कानून के पुनर्जीवन के कई कारण है। यथा– समाज के विरूद्ध नवीन प्रकार के अपराधों का उद्भव, सामाजिक अधिकारों की एक नूतन अवधारणा का विकास, सामान्य कल्याण की तीव्रतर इच्छा एवं उन्नीसवीं शताब्दी के अतिव्यक्तिवादी अधिकारों की दिव्यता में पूर्ण विश्वास का अभाव इत्यादि''।[6]

अतएव सभी देशों में प्रशासकीय न्यायाधिकरण का शीघ्र ही विकास स्वाभाविक होना सुनिश्चित हुआ है। यह किसी भी विशेष संवैधानिक स्थिति से सम्बद्ध नहीं है। इनका मुख्य कारण सरकार के क्रियाकलापों तथा उत्तरदायित्वों का प्रसार ही है। भारत में विधायी अधिनिर्णय, जो अर्द्धन्यायिक सत्ताओं की रचना करते है, वे अधिसंख्य रूप में परिलक्षित हो रहे है। हालांकि प्रशासकीय न्यायाधिकरण केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा पारित कानूनों के अधीन कार्यरत है। अधुनातन समय में देश की वृहद् स्वरूप एवं जनसंख्या की अधिकता तीव्रतर रूप में विकसित हो रही अर्थव्यवस्था और कल्याणकारी राज्य में निरन्तर बढ़ते हुए प्रशासकीय भूमिका को दृष्टिगत करते हुए न्यायाधिकरणों की संख्या में अभिवृद्धि होने की प्रबलतम् सम्भाव्यता है। प्रशासकीय अधिनिर्णय तीव्रता से न्यायिक क्षेत्र के एक अपरिहार्य अंग का स्वरूप धारण करता जा रहा है। यद्यपि लोक प्रशासन के कुछ विशिष्ट एवं सीमित क्षेत्रों में ही प्रशासकीय न्यायाधिकरण की स्थापना की गयी है। यथा– आयकर (आयकर पुनर्विचार न्यायाधिकरण), रेलवे दर (रेलवे दर न्यायाधिकरण), औद्योगिक श्रम सम्बन्ध (श्रम न्यायालय, औद्योगिक न्यायाधिकरण), राष्ट्रीय न्यायाधिकरण और भृति परिषद् (Wage Boards) तथा चुनाव

विवाद सम्बन्धी आयोग स्थापित किए गए हैं। इनके साथ ही वे तदर्थ (adhoc) उद्देश्यों की प्रतिपूर्ति हेतु भी स्थापित किए गए हैं (यथा– जीवन बीमा निगम तथा के.जी.एफ.के. सम्बन्ध में क्षतिपूर्ति न्यायाधिकरण)। श्रम तथा निर्वाचन न्यायालयों के समक्ष जो विवाद निर्णय हेतु आते है, उनमें लोक सत्ता सन्निहित नहीं होती है। वे प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की ही श्रेणी में आते हैं, क्योंकि उनका सृजन विधायी अधिनियम के अन्तर्गत ही की जाती है और कार्यपालिका उनका प्रयोग लोकहित सम्बन्धी विवादों के निर्णय करने हेतु करती है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अभिकरण भी है, यथा– केन्द्रीय राजस्व मण्डल तथा सीमा शुल्क और आबकारी शुल्क के कलेक्टर जिनके द्वारा न्यायिक कार्य भी सम्पादित किया जाता है। वे इन निकायों में स्थायी लोक सेवा का कार्य करते है और प्रशासन तंत्र के एक महत्वपूर्ण अंग होते हैं।

यद्यपि प्रशासकीय न्यायाधिकरण ने प्रत्येक देश के संवैधानिक क्षेत्र में एक स्थायित्व कायम कर लिया है। फ्रैंक समिति की दृष्टि में, ''सामाजिक कल्याण के लिए सरकार के क्रियाकलाप एवं उत्तरदायित्व के सतत् प्रसार के कारण ऐसे बहुत से अवसरों की सम्भावना उत्पन्न हो गयी है जिनके फलस्वरूप अधिकारों को लेकर किसी व्यक्ति का संघर्ष प्रशासन, अन्य व्यक्ति अथवा निकाय के साथ शुरू हो जाता है। अतएव युद्धोत्तरकालीन वर्षों में न्यायाधिकरणों के क्रियाकलापों एवं उनके महत्व में अप्रत्याशित अभिवृद्धि परिलक्षित हुई। कतिपय मामलों में नूतन नीतियों अथवा विनियामक विधान (Regulatory Legislation) के परिणामस्वरूप न्यायाधिकरणों का गठन किया गया है।

अब न्यायाधिकरण अन्य मामलों में ऐसे कार्य सम्पादित करते है जिन्हें पूर्व में अदालतें क्रियान्वित किया करती थीं। हालांकि गत् दशाब्दियों के सामान्य सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों पर दृष्टिपात करने पर हमारा विश्वास पूर्णतः दृढ़ हुआ है कि न्यायाधिकरण अधिनिर्णय की एक पद्धति के रूप में कायम हो गये है। फलतः विधायी योजनाओं से उत्पन्न होने वाले मामलों से विशिष्ट न्यायाधिकरणों को निर्दिष्ट करने की प्रवृत्ति घटने की अपेक्षा अभिवृद्धि की ओर उन्मुख होगी''।[7]

वस्तुतः प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की अभिवृद्धि उनकी सामान्य लोकप्रियता का ही प्रमाणीकरण है। अतएव उन सामान्य तत्वों का विश्लेषण करना यथोचित होगा जो इस दिशा में विकास हेतु उत्तरदायी हैं। वे तत्व निम्नवत् हैः–

1. सामान्यतः जिन तत्वों के द्वारा प्रदत्त विधि-निर्माण को जन्म दिया गया है, वास्तव में वे ही तत्व है जो प्रशासकीय न्यायाधिकरण को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किए अर्थात् क्रियाकलापों का प्रसार एवं नागरिकों के जीवन में शासन का अधिकतम् प्रभाव और हस्तक्षेप का होना।
2. अधुनातन प्रशासन का सम्बन्ध तकनीकी एवं जटिल मामलों से भी होता है। इसका मुख्य कारण समाज का जटिल एवं विविधतापूर्ण स्वरूप का होना है। सामान्यतः अदालतों में ऐसे विशेषज्ञों का अभाव पाया जाता है जो इन मामलों

से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का निर्धारण कर सके। अतएव यह उचित है कि ऐसे मामले विशेष न्यायाधिकरणों को सौंप दिए जाए, जिनमें ऐसे विषय-विशेषज्ञ होते हैं।

3. प्रशासकीय न्यायाधिकरणों को प्राथमिकता प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण कारण वैयक्तिक अधिकारों को लोकहित के अधीन करने की प्रवृत्ति भी है। सामाजिक न्याय तथा कल्याणकारी राज्य के अन्तर्गत विशुद्ध कानूनी मार्ग से बचने की आकांक्षा स्पष्टतः परिलक्षित होती है, क्योंकि यह मार्ग अथवा उपागम (Approach) सामान्यतः समकालीन आवश्यकताओं एवं महत्वाकांक्षाओं में बेमेल होता है।
4. सामान्यतः ऐसे मामलों में न्यायाधिकरणों की दृष्टि सामान्य विधि की व्यक्तिवादी परम्परावादी दृष्टि से परिलक्षित होती है। जो स्वतत्रंता की उस अवधारणा के प्रतिकूल होते हुए भी अधुनातन कल्याणकारी राज्य में मान्य है। आर.एम. जैक्सन (R.M. Jackson) की दृष्टि में, ''सामाजिक विधान के प्रभाव को दो व्यक्तियों के मध्य का मामला नहीं समझा जा सकता है, किन्तु परम्परागत विधि प्रणाली का केन्द्रस्थ स्वरूप ही एकाकी मामला है''।[8]
5. प्रायः प्रशासकीय न्यायाधिकरणों को शीघ्रतम् कार्यवाही की आवश्यकता वाले स्थान पर प्रधानता दी जाती है। बेरोजगारी, कोयले की खानों, रक्षा के साधन आदि ऐसे मामले है जिनमें शीघ्रता से कार्य सम्पादित करना अपरिहार्य होता है। अतः इन मामलों में विधि न्यायालयों की अपेक्षा प्रशासकीय न्यायाधिकरणों द्वारा अधिक श्रेष्ठतम् रूप से निर्णय किए जा सकते हैं।
6. प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की अभिवृद्धि में न्याय प्राप्त करने में कम व्यय, त्वरित न्याय प्राप्ति एवं प्रक्रिया और साक्ष्य सम्बन्धी जटिलताओं से मुक्ति आदि ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। कम साधन सम्पन्न मनुष्य साधारण विधि न्यायालयों की खर्चीली एवं विलम्बनकारी प्रक्रियाओं का असहनीय भार सहन करने में सक्षम नहीं हो पाता हैं।
7. प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की शीघ्रतापूर्वक कार्यवाही करने से सामान्य विधि न्यायालयों के कार्यभार में कमी हुई है।

यद्यपि प्रशासकीय न्यायाधिकरणों से ऐसे अनेक लाभ होते है जो साधारण विधि न्यायालयों से प्राप्त होना सम्भव नहीं है। फ्रेंक्स समिति के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए बर्नार्ड श्वाट्र्ज (Bernard Schwartz) का कथन है कि, ''कुछ लोगों द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि जिन कारणों से न्यायालयों की अपेक्षा विविध प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के हाथों में अधिनिर्णय के प्राधिकार सुपुर्द किए गए थे, वे कारण अधुनातन समय में विद्यमान नहीं हैं तो अब यही श्रेयष्कर है कि अब तक कायम रहे इन न्यायाधिकरणों को समाप्त कर देना चाहिए और उनके अधिकार क्षेत्र पुनः

उपयुक्त न्यायालयों को हस्तान्तरित कर देना चाहिए, किन्तु यह समाधान भ्रमवश सरल भले ही प्रतीत हो रहा हो, लेकिन राजनीतिक अथवा व्यवहारिक रूप से पूर्णतः व्यावहारिक नहीं है। यदि किसी भी प्रकार से ऐसा किया जाना सम्भव भी हुआ तो यह कदापि वांछनीय नहीं होगा कि घड़ी की सूई पुनः उस स्थिति तक पीछे लौटा दी जाय, जहाँ आधुनिक प्रशासकीय न्यायाधिकरण उद्‌भव से पूर्व थी। यह मार्ग इस तथ्य के अवेहलना करता हुआ प्रतीत होगा कि प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के विकास से आंग्ल-अमेरिकी विधि प्रणाली को निःसन्देह लाभ-हानि हुई है। अतएव अधुनातन समय में मुख्य समस्या यह है कि इनके दोषों का पूर्णतः परित्याग करते हुए इनके लाभों को बनाए रखा जाए। प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की विधिवत् पूर्णतः समाप्ति से इन दोनों पक्षों का ही अन्त होना सुनिश्चित होगा''।[9] हालांकि प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के मुख्य गुण सस्तापन, गम्यता, तकनीक से मुक्ति, शीघ्रता एवं विशेष विषयों का विशिष्ट ज्ञान है। डब्ल्यू.ए. राब्सन (W.A. Robson) की दृष्टि में, ''प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के लाभ है– कम व्यय तथा उनके कार्य की गतिजता, तकनीकी ज्ञान तथा अनुभव जिसे वे विशिष्ट क्षेत्रों के न्यायिक कार्यों के संचालन में उपलब्ध करते है। लोकप्रशासन के कुशल संचालन में उनके द्वारा प्रदत्त सहायता तथा नूतन स्तर निर्धारित करने तथा सामाजिक सुधार की किसी नीति के उद्‌भव सम्बन्धी योग्यता''।[10]

वस्तुतः इन लाभों के होते हुए भी प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की तीव्र आलोचना भी की जाती है। लार्ड हेवार्ट ने तो इन प्रशासकीय न्यायाधिकरणों को 'संगठित अराजकता' तक कह डाला है। ''दि टाइम्स ऑफ इण्डिया'' ने अपने सम्पादकीय लेख में लिखा था कि, ''हमारे विचार कुछ भी हो, प्रशासकीय विधि, अपने ऊपर आश्रित प्रशासकीय न्यायाधिकरणों के साथ फौजी कानून (Martial Law) की भाँति प्रतीत होता है जो वास्तव में कानून से मनाही ही है।''[11] के.एम. मुंशी का कथन है कि, ''किसी अधुनातन कल्याणकारी राज्य में प्रशासकीय अधिकरणों के अनिवार्य हो जाने पर भी यह समस्या परिलक्षित हो रही है कि एक प्रजातांत्रिक राज्य में 'न्यायाधिकरणों द्वारा दिए गए न्याय का किस प्रकार निष्पक्षता, निश्चितता तथा दृढ़ता के साथ सम्पादन किया जाए''।[12]

इस प्रकार प्रशासकीय न्यायाधिकरणों पर अनेक कटाक्ष किए गए है। निःसन्देह इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्रशासकीय न्यायाधिकरण पूर्णतः दोषमुक्त है। तथापि प्रदत्त विधि निर्माण की भाँति यह अधुनातन जटिल समाज हेतु अपरिहार्य हे। इसे समाप्त करने की अपेक्षा इसमें सुधार की ओर दृष्टि डालनी चाहिए। इसका आश्रय भी कभी-कभी ही लिया जाना चाहिए। यह भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि प्रशासकीय न्यायाधिकरणों को न्याय के आवश्यक तत्वों से दूर न हटते हुए इसे निष्पक्ष, निश्चित एवं वाच्य अथवा प्रतिपाद्य (Predicatable) बनाया जाए। भारत में प्रशासकीय न्यायाधिकरणों की स्थापना का आशय यह कदापि नहीं है कि यहाँ विधि के शासन का परित्याग है। वस्तुतः भारतीय संविधान का अनुच्छेद 32 एवं 226 विधि के रक्षा-स्तम्भ के रूप में विद्यमान है। इतना होने के बावजूद भी प्रायः प्रशासकीय

न्यायाधिकरण संशय की दृष्टि से देखे जाते है। इनकी व्यापक सफलता के विरूद्ध दो तर्क प्रचलित है। प्रथम, प्रायः उनमें ऐसे व्यक्ति नहीं होते है, जिन्हें प्रशासकीय कार्यवाही की उचित समीक्षा के लिए आवश्यक न्यायिक प्रशिक्षण तथा अनुभव प्राप्त हुआ हो, और द्वितीय, न्यायाधिकरण के अधिकारों का दृष्टिकोण न्यायिक पदाधिकारियों जैसे निष्पक्ष एवं अलगाव युक्त नहीं होता है। अतएव इनमें अपेक्षाकृत न्यायिक तत्वों को शामिल करने की स्पष्ट आवश्यकता है। भूतपूर्व न्यायाधीश एस.आर. दास का कथन है कि, ''हमें न्यायाधिकरणों का विचार घृणास्पद प्रतीत होता है क्योंकि हम सार्वजनिक कानूनों की आंग्ल-सेक्शन परम्परा में पुष्पित एवं पल्लवित हुए है और विधि के शासन की बुनियाद पर हमारा पोषण हुआ है। किन्तु हमें अधुनातन समय की आवश्यकताओं के साथ अनुकूलता बनाकर साथ-साथ चलता है''। हालांकि अधुनातन समय में प्रशासकीय न्यायाधिकरण ने अनिवार्य स्वरूप धारण कर लिया है। अतः जैसा कि बर्नार्ड श्वार्ट्ज (Bernord Schortartz) का कथन है कि, ''उनको स्वतंत्र रखना चाहिए और उनकी प्रक्रियाओं पर न्यायिक अभिरक्षणों (Judicial Safeguards) का नियंत्रण होना चाहिए, जिससे वे अन्ततः सच्चे न्यायिक न्यायाधिकरणों का रूप धारण कर सकें''। न्यायाधिकरणों में न्याय का पुट पंखुरित होना परमावश्यक है।

संदर्भ

1. Frederich F. Blachly and Miriam E. Qatman : Their Joient contribution in the Encyclopedia of Social Science, Vol. III, New Yark, Macmillan, 1954, p.529.
2. W.A. Robson : Justice and Administrative Law, London, Stevens & Sons, 1951, p.11
3. Sir Oliver Franks (Chairman) : Report of the Committee on Administative Tribunals and Enquiries, H.M.S.O., London, 1957, p.5.
4. The President's Inauguaral Speech at the Indian Law Institute, The Hindustan Times, December, 13, 1957, p.12
5. Basan Singh Vs. Janak Singh, A.I.R. 1954, All, 477-78
6. W.A. Robson : op cit, pp.33-34
7. Report of the Committee on Administrative Tribunals and Enquiries, p.8
8. R.M. Jackson : The Machinary of Justice in England, Cambridge, Cambridge University Press, 1953, p.235
9. Miniutes of Evidence, Taken before the Committee on Adminisatative Tribunals and Enquiries, London, H.M.S.O., 1956, p.1029.
10. W.A. Robson : op cit, p.573
11. The Times of India, Bombay, Dec. 20, 1957
12. The Hindustan Times, Dec. 15, 1957, p.12

महिला सशक्तिकरण और कुटीर उद्योगः विकास का नवीन उपागम

ओमप्रकाश लाल श्रीवास्तव

lkjk'k *भारत की लगभग आधी आबादी महिलाओं की है। लगभग 68.84 प्रतिशत आबादी (सन् 2011 की जनगणना के अनुसार) गांवों में निवास करती है, तथा गांव के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। कृषि का संबंध अनेक कुटीर उद्योगों से है, इसलिए बिना कुटीर उद्योगों का विकास किए गांवों का विकास नहीं हो सकता तथा कृषि व कुटीर उद्योगों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं की भागीदारी पुरुषों से कम नहीं होती, इस प्रकार जब कृषि तथा कुटीर उद्योगों का विकास होगा तो महिलाएं सशक्त होंगी तथा उनकी आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक स्थिति भी सुदृढ़ होगी। गांधी जी के अनुसार, ''भारत का मोक्ष उसके कुटीर उद्योग धंधों में निहित है''। जब महिलाएं कुटीर उद्योगों द्वारा आय अर्जित करती हैं तो वे स्वयं तो आत्मनिर्भर होती ही हैं, साथ ही उससे परिवार तथा समाज भी लाभान्वित होते हैं। महिलाएं जब आत्मनिर्भर होती हैं तो उनमें आत्मविश्वास पनपता है तथा उनमें स्वयं निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है। उन्हें किसी दूसरे के सहारे की जरूरत नहीं होती, अपितु वे दूसरे को सहारा प्रदान करती हैं। लघु तथा कुटीर उद्योगों में लगभग 11 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है तथा सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी. पी) में इनका योगदान लगभग 29 प्रतिशत है।*

प्रस्तावना

भारत गांवों का देश है और यहां की बहुसंख्य आबादी गांव में निवास करती है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या लगभग 121.08 करोड़ थी जिसमें पुरूष लगभग 62.31 करोड़ यानी कुल जनसंख्या का 51.47 प्रतिशत तथा महिला की आबादी लगभग 58.74 करोड़ यानी कुल आबादी का 48.53 प्रतिशत थी कुल जनसंख्या का 31.16 प्रतिशत शहर में तथा 68.84 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है तथा गांव के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। कृषि का संबंध कुटीर उद्योगों

से है। बिना कुटीर उद्योगों का विकास किए गांवों का विकास नहीं किया जा सकता तथा कृषि में आधे से अधिक कार्यों मे सहभागिता महिलाओं की होने के कारण महिलाओं का सशक्तिकरण होना अत्यंत आवश्यक है बिना महिलाओं के सशक्तीकरण के ना तो कृषि का विकास होगा और ना ही कुटीर उद्योग धंधों का।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कुटीर एवं लघु उद्योगों का योगदान प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण रहा है। एक जमाना था जब भारतीय ग्रामोद्योग उत्पाद का निर्यात विश्व के अनेक देशों में किया जाता था भारतीय वस्तुओं का बाजार चरमोत्कर्ष पर था, किंतु औपनिवेशिक शासन में ग्राम उद्योगों का पतन हो गया। फलतः हमारे गांव एवं ग्रामवासी गरीबी के दलदल में फंस गए थे। ऐसे गांवों के विकास में ग्राम उद्योग का अपना महत्व है। गांव के विकास के अभाव में भारत की समृद्धि, संपन्नता व आत्मनिर्भरता अर्थहीन है। गांवों के विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों की भूमिका को स्पष्ट करते हुए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था, ''जब तक हम ग्राम में जीवन को पुरातन हस्तशिल्प के संबंध में पुनः जागृत नहीं करते, हम गांवों का विकास एवं पुनर्निर्माण नहीं कर सकेंगे। किसान तभी पुनः जागृत हो सकते हैं, जब वे अपनी जरूरतों के लिए गांवों पर ही निर्भर रहें ना कि शहरों पर, जैसा कि आज''। उन्होंने यह भी कहा था कि बिना लघु एवं कुटीर उद्योगों के ग्रामीण किसान मृत हैं, वे केवल भूमि की उपज से स्वयं को नहीं पाल सकते। उन्हें सहायक उद्योग चाहिए। ''गांधीजी के अनुसार भारत का मोक्ष उसके कुटीर धंधों में निहित है'' मोरारजी देसाई के अनुसार, ''ऐसे उद्योगों से ग्रामीण लोगों को जो अधिकांश समय बेरोजगार रहते हैं, पूर्ण अथवा अंशकालिक रोजगार प्राप्त होता है''। लघु तथा कुटीर उद्योग देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। सन् 2019 के आंकड़ों के मुताबिक देश में 6 करोड़ 34 लाख छोटे व लघु उद्योग हैं, जिनमें 11 करोड़ से भी ज्यादा लोगों को रोजगार मिला हुआ है। भारत के जी.डी.पी.में इनका लगभग 29 प्रतिशत योगदान है और निर्यात में इनका हिस्सा लगभग 49 प्रतिशत है। इनमें कुल 8000 से ज्यादा उत्पाद तैयार होते हैं। आत्मनिर्भर भारत में इनकी भूमिका सबसे ज्यादा है क्योंकि ये क्षेत्रीय स्तर पर रोजगार तो देते ही हैं साथ ही स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी सहारा देते हैं। पी.एम. मोदी का आत्मनिर्भर भारत और ''लोकल से वोकल'' तक का अभियान इसी की एक कड़ी है। बेरोजगारी और गांव से पलायन रोकने के लिए देश के लघु एवं कुटीर उद्योगों को बड़े पैमाने पर सहायता देकर विकसित करने की जरूरत है। कुटीर उद्योगों के विकास हेतु आर्थिक, तकनीकी सहायता के साथ-साथ इन्हें सक्षम बनाना जरूरी है। जब हर गांव कुटीर उद्योगों से परिपूर्ण होगा तभी भारत आत्मनिर्भर बनेगा और महिलाओं की स्थिति में विशेष सुधार होगा।

कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योग वे हैं, जो पूर्ण रूप से या मुख्य रूप से परिवार के सदस्यों की सहायता से या तो पूर्णकालिक व्यवसाय के रूप में या अंशकालिक व्यवसाय के रूप

में चलााए जाते हैं, जिनमें परंपरागत विधियो या स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग होता है, जिसमें प्रायः स्थानीय बाजारों में बिक्री के लिए माल तैयार रहता है।

कुटीर उद्योगों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता हैः–

1. ग्रामीण कुटीर उद्योग
2. शहरी कुटीर उद्योग

ग्रामीण कुटीर उद्योग

ये उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं। ग्रामीण कुटीर उद्योग भी दो श्रेणियों में उपविभाजित किए जा सकते हैं। वे उद्योग जो कृषकों द्वारा सहायक धंधे के रूप में चलाए जाते हैं, जैसे– मुर्गी पालन, गाय-भैंस पालना, सुअर, व भेड़ बकरी पालना, कघों पर बुनाई, टोकरियाँ बनाना, रेशम के कीड़े पालना, मधुमक्खियां पालना, मछली पालना आदि।

दूसरे वे हैं जो ग्रामीण कौशल से संबंधित होते हैं, जैसे मिट्टी के बर्तन बनाना, चमड़े के जूते बनाना, तिलहन से तेल निकालना आदि।

शहरी कुटीर उद्योग

शहरी कुटीर उद्योग वे है जो शहरी क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं, इसके अंतर्गत खिलौना बनाना, कपड़ों पर कढ़ाई करना, लकड़ी के फर्नीचर बनाना, साबुन बनाना, हथकरघा पर कपड़े बुनना, अगरबत्ती बनाना आदि।

कुटीर तथा लघु उद्योगों में अंतर

कुटीर उद्योग सामूहिक रूप से उन उद्योगों को कहते हैं जिनमें उत्पाद एवं सेवाओं का सृजन अपने घर में ही किया जाता है ना कि किसी कारखाने में। कुटीर उद्योगों में हस्त क्रियाओं की प्रधानता रहती है, प्रायः परंपरागत विधियों से परंपरागत वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है और प्रायः स्थानीय बाजार की मांग की पूर्ति की जाती है। कुटीर उद्योगों में पूंजी का विनियोग नाम मात्र का होता है। इन उद्योगों में स्थानीय कच्चे माल एवं कुशलता का प्रयोग होता है।

लघु उद्योग वे उद्योग होते हैं जो मध्यम स्तर के विनियोग की सहायता से उत्पादन प्रारंभ करते हैं। इन इकाइयों में श्रम शक्ति की मात्रा बड़े उद्योगों से कम होती है और सापेक्षिक रूप से वस्तुओं और सेवाओं का कम मात्रा में उत्पादन होता है। लघु उद्योगों में यांत्रिक मशीनों का प्रयोग किया जाता है तथा वेतन व मजदूरी पर पर्याप्त व्यक्ति काम पर लगाए जाते हैं।

महिला सशक्तिकरण और कुटीर उद्योग

महिला सशक्तिकरण में महिलाएं शक्तिशाली बनती हैं जिससे वे अपने जीवन से

जुड़े सभी फैसले स्वयं ले सकती हैं और परिवार और समाज में अच्छे से रह सकती हैं। समाज में उनके वास्तविक अधिकार को प्राप्त करने के लिए उन्हें सक्षम बनाना महिला सशक्तिकरण है। महिला सशक्तिकरण का मतलब होता है महिलाओं का पारिवारिक बंधनों से मुक्त होकर अपने और अपने देश के विषय में सोचने की क्षमता का विकास। अर्थात महिलाएं अपने निर्णयों के लिए किसी अन्य पर निर्भर ना हों और वे अपने जीवन के विशय में खुद निर्णय ले सकें।

''महिला सशक्तिकरण तभी संभव है जब आत्मनिर्भरता और आर्थिक आत्मनिर्भरता भी हो। महिलाओं को जरूरत है अपने अस्तित्व को पहचानने की और इसको बनाए रखने की और एक कदम बढ़ाने की''। देश बदल रहा है महिलाओं की दशा में सुधार आ रहा है, समय के साथ-साथ नारी और सशक्त होती जा रही हैं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है यह सत्य है किंतु परिवर्तन का क्या परिणाम हुआ और क्या होगा और उस परिवर्तन को आने वाली पीढ़ी किस प्रकार स्वीकार करती है और इससे क्या सीख लेती है यह बात अधिक महत्व रखती है। हर युग में महिलाएं प्रतिभाशाली रही हैं और हर युग में उन्होंने अपनी प्रतिभा से समाज में उदाहरण प्रस्तुत किया है जैसे– सीता, सावित्री, द्रोपदी, गार्गी आदि पौराणिक देवियों से लेकर रानी दुर्गावती, रानी लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई होल्कर, रानी चेनम्मा, रानी पद्मिनी से लेकर इंदिरा गांधी, किरण बेदी, सानिया मिर्जा आदि आधुनिक भारत की महिलाओं ने भारत को विश्व भर में गौरवान्वित किया और महिलाओं ने धरती पर ही नहीं अपितु अंतरिक्ष में भी अपना परचम लहराया है इसमें सुनीता विलियम्स और कल्पना चावला प्रमुख हैं।

हर युग में महिलाओं ने अपनी योग्यता का परचम लहराया है लेकिन फिर भी यह देखने को मिलता है कि हर युग में उन्हें भेदभाव और उपेक्षा का भी सामना करना पड़ा है। महिलाओं के प्रति भेदभाव और उपेक्षा को केवल साक्षरता और जागरूकता पैदा कर ही खत्म किया जा सकता है। महिलाओं का विकास देश का विकास है। महिलाओं की साक्षरता, उनकी जागरूकता और उनकी उन्नति ना केवल उनकी गृहस्थी के विकास में सहायक साबित होती है बल्कि उनकी जागरूकता एवं साक्षरता देश के विकास में भी अहम भूमिका निभाती है। इसीलिए सरकार द्वारा आज के युग में महिलाओं की शिक्षा और उनके विकास पर बल दिया जा रहा है। गांव और शहर में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के व्यापक प्रयास किए जा रहे हैं। महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करना और अन्याय के प्रति आवाज उठाने की हिम्मत प्रदान करना ही असल में महिला सशक्तिकरण है।

विगत् कुछ वर्षों में महिलाओं के खिलाफ हो रहे अपराधों में वृद्धि हुई है जो बहुत ही चिंतनीय है। शहर भी महिलाओं के लिए और असुरक्षित हो चले हैं। कुछ असामाजिक तत्व के कारण महिलाओं को परदे में रखने की सोच का जन्म होता है किंतु सबसे बड़ा सवाल यह है कि क्या वे पर्दे में सुरक्षित रहेंगी? घर से बाहर ही नहीं

बल्कि घर में भी महिलाओं के साथ आपराधिक घटनाओं के साथ ही घरेलू हिंसा और यौन अपराधों में वृद्धि हो रही है। पर्दे में या दरवाजों के भीतर महिलाओं को बंदिनी बना कर रखना इन सब का हल नहीं है। जरूरत है उन बंद दरवाजों को खोलने की, रोशनी को अंदर आने देने की, उस प्रकाश में अपना प्रतिबिंब देखने की, उसे निहारने की, निखारने की। इस कड़ी में एक और अहम दरवाजा आत्मनिर्भरता और आर्थिक आत्मनिर्भरता का भी है। जरूरत है हमें अपने अस्तित्व को पहचानने की और इसको बनाए रखने की और एक कदम आगे बढ़ाने की।

लड़कियों को बचपन से ही सिखाया जाता है कि पाककला और गृह कार्य में निपुणता ही एक नारी के लिए परिपूर्णता है। बहुत कम लोगों ने इस बात पर जोर दिया है कि उनका पढ़ना लिखना भी उतना ही जरूरी है। महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और सक्षम बनाना भी आज के समय में उतना ही आवश्यक है। आर्थिक रूप से सक्षम होना केवल परिवार के लिए ही नहीं अपितु अपने लिए भी आवश्यक है। शिक्षा का महत्व तब पता चलता है जब परिवार आर्थिक संकट से गुजर रहा हो या किसी भी लड़की के वैवाहिक जीवन में अचानक परेशानी आ जाए। तब शिक्षा और आत्मनिर्भरता से ही एक लड़की को ना तो अपने माता-पिता पर और ना ही अपने पति पर निर्भर रहना पड़ता है। पैसे से खुशियां नहीं खरीदी जा सकती लेकिन एक सम्मानजनक जीवन जीने के लिए धन की आवश्यकता होती है।

एक सुखी जीवनयापन के लिए किताबी ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान भी अति आवश्यक है जो हमारे कौशल में निखार लाता है और हमारे व्यावहारिक ज्ञान और अनुभव में वृद्धि करता है। व्यावहारिकता अनुभव और कौशल विपरीत से विपरीत स्थिति में भी जीवन यापन में सहायता करते हैं। ऐसा नहीं है कि अशिक्षित महिलाओं में कौशल एवं हुनर कम है। कृषि, कुटीर उद्योग, पारंपरिक व्यवसाय, पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय जैसे कार्यों से महिलाओं को अपने इस हुनर को बाहर लाना है और देश की अर्थव्यवस्था का हिस्सा बनना है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहां शिक्षा के अभाव और आर्थिक पिछड़ेपन के और विकृत मानसिकता के कारण विभिन्न आडंबर एवं अंधविश्वासों के चलते महिलाओं का शोषण किया जाता है। ऐसे स्थानों पर महिलाओं को शिक्षा के प्रति जागरूक किया जाना चाहिए एवं आत्मरक्षा के तरीके भी सिखाए जाने चाहिए। पुरुषों की भांति महिलाएं भी देश की समान नागरिक हैं और उन्हें भी स्वावलंबी होना चाहिए ताकि समय आने पर वे व्यवसाय कर सकें और अपने परिवार को चलाने में मदद कर सकें। यह जागरूकता ही तो उनके उनके, परिवार के व देश के विकास को गति प्रदान करेगी एवं एक नई दिशा देगी।

राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति ¼2001½

भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, मौलिक कर्तव्य तथा दिशा निर्देशक सिद्धान्तों में लैंगिक समानता के सिद्धान्त का उल्लेख किया गया है। संविधान

न केवल महिलाओं की समानता को सुनिश्चित करता है, बल्कि राज्यों को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव का निर्देश देता है।

लोकतांत्रिक राजनीति के ढाँचे में हमारे कानून, विकास नीतियाँ, योजनाएं तथा कार्यक्रम को विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के उत्थान की ओर उन्मुख रखा गया है। महिला सशक्तिकरण को महिला की दशा का एक केन्द्रीय मुद्दा माना गया। राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना सन् 1990 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई है, जिसके तहत महिला के अधिकारों तथा कानूनी अधिकारों को सुरक्षा प्रदान की गयी है। संविधान का 73वें तथा 74वें संशोधन में पंचायत तथा नगर निकाय के चुनावों में महिला को आरक्षण प्रदान करने का प्रावधान किया गया है, जिससे स्थानीय स्तरों पर उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो सके।

उत्तर प्रदेश महिला सामर्थ्य योजना 2021

महिलाओं के कल्याण एवं सशक्तिकरण के लिये सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की योजनाएं संचालित की जाती हैं। उत्तर प्रदेश सरकार भी इस प्रकार की योजनाओं को संचालित करती है। ऐसी ही एक योजना यू.पी. महिला सामर्थ्य योजना है, जिसे उत्तर प्रदेश सरकार संचालित कर रही है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को रोजगार के प्रति प्रेरित करना तथा उनके जीवन स्तर को बेहतर बनाने का प्रयास करना है। स्थानीय संसाधनों के आधार पर होम एंड कॉटेज उद्योगों के माध्यम से उनके जीवन स्तर में सुधार लाने का प्रयास करना है। इस योजना के अन्तर्गत महिलाओं को अपनी उपज को बेचने के लिये सरकार द्वारा बाजार भी उपलब्ध कराया जायेगा। यू. पी. महिला सामर्थ्य योजना 2021 को सरकार ने यू.पी. बजट 2021-22 की घोषणा करते हुए 22 फरवरी 2021 को आरम्भ किया है। वित्तीय वर्ष 2021-22 से महिला सामर्थ्य योजना शुरू की गयी है इस योजना के लिये सरकार द्वारा 200 करोड़ रुपये का बजट निर्धारित किया गया है। यह योजना महिला सशक्तिकरण तथा कल्याण के लिये एक महत्वाकांक्षी योजना साबित होगी, ऐसा विश्वास किया जा रहा है। प्रदेश में लगभग 90 लाख सूक्ष्म, लघु और मध्यम स्तरीय उद्योग हैं। इनमें से 80 लाख से अधिक सूक्ष्म इकाइयों के रूप में स्थापित है। जो होम एंड कॉटेज उद्योगों के अन्तर्गत संचालित किये जाते हैं। इन उद्योगों में महिलाओं द्वारा संचालित किए जाने वाले उद्यमों की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य महिलाओं का कल्याण तथा सशक्तिकरण करना है। इस योजना के माध्यम से महिलाओं को रोजगार के प्रति प्रेरित करना तथा उनके द्वारा संचालित किये जाने वाले उद्योगों का विकास करना है। इस योजना के अन्तर्गत महिलाओं के विभिन्न प्रकार के लिए विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी है जिससे वे अपने उद्यमों को बेहतर बना सके तथा अपने जीवन में सुधार ला सके। इस योजना के माध्यम से प्रदेश की महिलाएँ आत्मनिर्भर बनेंगी तथा औद्योगिक क्षेत्र का भी विकास होगा।

लक्ष्य तथा उद्देश्य

इस नीति का लक्ष्य महिलाओं की उन्नति, विकास तथा सशक्तिकरण मूर्तरूप देना है। इस नीति का व्यापक प्रसार किया जायेगा ताकि इसके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सभी साझेदारों को सक्रिय भागीदारी करने के लिए प्रेरित किया जा सके। इसके नीति के प्रमुख उद्देश्यों में निम्न शामिल हैं

1. महिलाओं के पूर्ण विकास हेतु सकारात्मक आर्थिक तथा सामाजिक नीतियों के जरिए एक माहौल का निर्माण करना ताकि वे अपनी क्षमताओं को समझ सके।
2. राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा नागरिक क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा सभी मानवाधिकारों तथा मौलिक आजादियों का पुरुषों के समान कानूनी तथा व्यावहारिक उपयोग करना।
3. सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन में महिलाओं द्वारा भागीदारी और निर्णय करने का समान अवसर।
4. स्वास्थ्य देखभाल, सभी स्तर की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कैरियर तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान वेतन पेशेवर स्वास्थ्य तथा, सामाजिक सुरक्षा तथा सरकारी ऑफिस इत्यादि में समान अवसर की उपलब्धता।
5. कानूनी सिस्टम को सुदृढ़ करना, जिसका उद्देश्य महिलाओं के खिलाफ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन है।
6. पुरुष तथा महिला दोनों की सक्रिय भागीदारी द्वारा सामाजिक धारणाओं और सामुदायिक व्यवहारों में परिवर्तन लाना।
7. विकास प्रक्रिया में एक लैंगिक दृष्टिकोण को लागू करना।
8. महिलाओं तथा बालिकाओं के खिलाफ होने वाले किसी भी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन।
9. सिविल सोसाइटी के साथ खास कर महिला संगठनों के साथ साझेदारी का निर्माण तथा उसका सशक्तिकरण।

निष्कर्ष एवं सुझाव

दुनिया का ऐसा कोई भी देश नहीं है, जहां महिलाओं को हाशिये पर रखकर आर्थिक विकास संभव हुआ हो। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जुड़े बिना किसी समाज, राज्य व देश के आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। भारत की कुल आबादी की आधी आबादी को सशक्त बनाए बिना सुदृढ़ भारत का सपना पूरा नहीं किया जा सकता, विशेषकर ''ग्रामीण महिला'' को सशक्त किए बिना। महिलाएं शिक्षित तथा स्वावलंबी होकर तथा कुटीर उद्योगों

को अपनाकर आर्थिक दृष्टि से तो आत्मनिर्भर हो ही रही है, साथ ही गरीबी, बेरोजगारी तथा निरक्षरता के चक्रव्यूह से निकलकर सशक्तिकरण की दिशा में कदम बढ़ा रही हैं और न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक और राजनैतिक आयामों पर भी सशक्तिकरण की ओर अग्रसर हैं। महिला सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं को शक्तिशाली बनाना, महिलाओं के हाथ में अधिकार देना तथा उन्हें स्वावलंबी बनाना। महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य पुरुषों की बराबरी करना ना होकर आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की सशक्त भागीदारी से है। महिला सशक्तिकरण से महिलाओं में परिवार के साथ-साथ समुदाय के स्तर पर भी नेतृत्व की क्षमता विकसित होती है। ग्रामीण महिलाओं को स्वावलंबी व आत्मनिर्भर बनाने में कुटीर उद्योग धंधे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। जब महिलाएं सशक्त तथा स्वावलंबी होंगी तो उनके साथ घरेलू हिंसा, शोषण तथा दोयम दर्जे जैसी घटनाएं घटित नहीं हो पाएंगी। कुटीर उद्योगों का विकास महिला सशक्तिकरण की दिशा में वरदान साबित हो सकता है। जागरूक महिलाओं को इस दिशा में आगे आना होगा तथा घर-घर में विकसित कुटीर उद्योग धंधे महिलाओं को स्वावलंबन के साथ सशक्तिकरण तो प्रदान करेंगे ही साथ ही साथ देश के आर्थिक विकास के ढांचे को भी मजबूत व विकसित करने में योगदान प्रदान करेंगे।

संदर्भ

1. डॉ.बी.सी. सिन्हा– भारतीय आर्थिक समस्याएं पृ. 220, 221
2. कुरुक्षेत्र– वर्ष 56 अंक–7 जून 2010
3. कुरुक्षेत्र– वर्ष 64 अंक –3 जनवरी 2018,
4. प्रो. एस. एन. लाल– भारतीय अर्थव्यवस्था (सर्वेक्षण तथा विश्लेषण)– जून 2021 पृ. 18:14
5. https//pmmodiyojanaye.in>up.ma
6. सामान्य ज्ञान– किरण पृ. 439, 445

मनरेगा : ग्रामीण विकास की कुंजी

मो. ताहिर अंसारी

Ikjk'k *भारत में पंचायत का स्वरूप प्राचीन काल से ही विद्यमान रहा है। नब्बे के दशक के आरम्भ में इसने अपना कानूनी रूतबा भी हासिल कर लिया। ग्रामीण जनसमुदाय को राजनीतिक क्षेत्र में सहभागिता का संवैधानिक अधिकार मिल गया। यद्यपि ग्रास-रूट डेमोक्रेसी का सपना साकार तो हो गया लेकिन सच्चा लोकतंत्र तभी आ सकता था जब आर्थिक क्षेत्र में सुधार हो। इसी के निमित्त वर्ष 2005 में नरेगा की शुरूआत हुई और बाद में यही मनरेगा में तब्दील हो गई। प्रस्तुत शोध पत्र में दुनिया की सबसे बड़ी रोजगार गारन्टी योजना (MGNREGA) का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए उत्तर प्रदेश के सुदूरपूर्व में अवस्थित कुशीनगर जनपद के मनरेगा से सम्बन्धित द्वितीय प्रदात्तों के आधार पर मनरेगा की वस्तु स्थिति को समझाने का प्रयास किया गया है।*

प्रस्तावना

ग्रामीण विकास पदबन्ध में दो शब्दों ग्रामीण और विकास सम्मिलित है। गाँव किसी भी राष्ट्र का सबसे निचला सोपान है। राजनीति विज्ञान के जनक अरस्तू ने राज्य के विकास के क्रम में परिवार को प्राथमिक इकाई माना। परिवार से समुदाय एवं समाज बना और समाज से गाँव का निर्माण हुआ तथा गाँव से नगर एवं नगरों से राज्य का विकास हुआ।[1] इसे निम्नांकित रेखाचित्र से स्पष्ट किया जा सकता है–

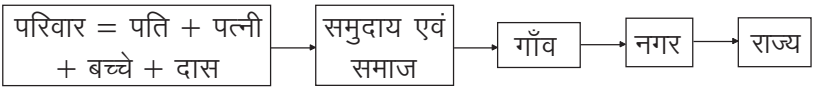

इसलिए गाँवों के उत्सव पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। बिना गाँवों के विकास के कोई भी राष्ट्र समोन्नति नहीं कर सकता है।

ग्रामीण विकास सम्प्रत्य का विश्लेषण करने पर यह बहुआयामी अवधारणा के रूप में उभर कर आती है, जिसका विश्लेषण संकुचित एवं व्यापक अर्थों में किया जा सकता है। संकुचित अर्थों में ग्रामीण विकास कृषि, पशुपालन, हस्तकला और लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास है। किन्तु व्यापक अर्थ में ग्रामीण विकास ग्रामीणों के सामाजिक,

आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में गुणात्मक प्रगति और संरचनात्मक परिवर्तनों को समाहित किया हुआ है। संक्षेप में ग्रामीण विकास से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे निर्धन लोगों के जीवन स्तर में सुधार कर गाँवों में आर्थिक विकास की धारा प्रवाहित करना है, जिसके लिए इनकी जरूरतों को पूरा करने के साथ-साथ उन्हें पर्याप्त मात्रा में सामाजिक सुविधाएँ उपलब्ध कराना हैं।[2]

ग्रामीण भारत के विकास के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर कई विकास परक और रोजगार परक योजनाएं चलायी गईं। इन योजनाओं का मूल उद्देश्य विकास के साथ-साथ सामाजिक न्याय सुनिशिचित करना है। इसमें मनरेगा भी महत्वपूर्ण योजना रही है।

ग्रामीण भारत को श्रम की गरिमा से परिचित कराने वाला मनरेगा रोजगार की कानूनी स्तर पर गारन्टी देने वाला विश्व का सबसे बड़ा सामाजिक कल्याणकारी कार्यक्रम है। मनरेगा पूर्व में लागू रोजगार कार्यक्रमों का ही एक समेकित रूप है। 15 अगस्त 1983 को ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (RLEGP) तथा पूर्ववर्ती राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (NREP) को संशोधित कर बनाया गया जिसे पुनः संशोधित कर 28 अप्रैल 1989 को जवाहर रोजगार योजना बनाई गयी। तत्पश्चात् 2 अक्टूबर 1993 रोजगार आश्वासन योजना (EAS) तथा 1 अप्रैल 1999 से जवाहर ग्राम समृद्ध योजना (JGSY) चलाई गई और दोनों को संशोधित कर 25 दिसम्बर 2001 में सम्पूर्ण ग्रमीण रोजगार योजना चलाई गई। बाद में इसमें काम के बदले अनाज योजना (NFWP) और सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना को संशोधित कर राष्ट्रीय स्तर पर पहली बार 'काम के अधिकार' को कानूनी रूप देकर मनरेगा की नींव पड़ी।[3]

ग्रामीण अकुशल श्रमिकों के लिए रोजगार सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय रोजगार गारण्टी अधिनियम (नरेगा) 2005 पारित किया गया। आन्ध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले से 2 फरवरी 2006 को इस योजना की शुरूआत की गई। 2 अक्टूबर 2009 को महात्मा गांधी की 140वीं जयन्ती के अवसर प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने नरेगा को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम (मनरेगा) का नाम दिया। इस योजना को 1 अप्रैल 2008 से सम्पूर्ण देश में लागू कर दिया गया वर्तमान समय में भारत के 684 जिलों में 6863 विकासखण्डों के 262389 गाँवों में यह योजना संचालित है।[4]

मनरेगा के तहत ग्रामीण परिवार के किसी भी व्यस्क सदस्य (महिला/पुरुष) जो अकुशल श्रम करने को तैयार हो तो एक वित्त वर्ष में उस परिवार को कम से कम 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराया जायेगा। यदि कोई क्षेत्र सूखा प्रभावित है तो वहाँ 150 दिन एक वित्तीय वर्ष में प्रदान किया जायेगा। मनरेगा के तहत वर्तमान में 202 रूपये प्रतिदिन मजदूरी दर से मजदूर के खाते में उपलब्ध कराया जाता है। मनरेगा कार्यक्रम के प्रमुख स्तम्भों में सामाजिक समावेश, लिंग समानता, सामाजिक सुरक्षा और समानता पर आधारित विकास शामिल है।[5] मनरेगा से जहाँ ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार मिला है, वही पैसा हाथ में आने से लोगों की क्रय शक्ति भी बढ़ी है, जिससे

ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न उत्पादों की खपत में वृद्धि हुई है। मनरेगा ने रोजगार के लिए शहरों की तरफ पलायन को रोक दिया है। इसने महिलाओं को रोजगार उपलब्ध कराकर उनके आत्म सम्मान में वृद्धि की है। मनरेगा के तहत गाँवों में ऐसी योजनाएं चलायी जा रही हैं, जिससे ग्रामीणों को घर के पास ही रोजगार मिलने के साथ-साथ गांवों का विकास भी हो रहा है। मनरेगा में गाँवों में साफ-सफाई के स्तर में वृद्धि हुई है। कोरोना काल में मनरेगा एक वरदान के रूप में उभरी जिसने सबसे ज्यादा ग्रामीणों को रोजगार उपलब्ध कराया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम का उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में मूलभूत रोजगार गारण्टी सुनिश्चित करना है। मनरेगा के तहत सरकार ने कुल 262 कार्यों को मंजूरी दी हुई है जिसमें से 164 कृषि से सम्बन्धित हैं तथा बाकि अधिकतर कार्य प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन है, जिससे व्यापक सामाजिक-आर्थिक प्रभाव देखने को मिलते हैं।[6] इस अधिनियम के अनुसूची-1 के अनुसार मनरेगा के तहत निम्नांकित कार्य किए जायेंगे[7] –

1. जल संरक्षण एवं जल संचय करना।
2. सूखे से बचाव के लिए वृक्षारोपण और वन संरक्षण करना।
3. सिंचाई के लिए सूक्ष्म एवं लघु सिंचाई परियोजनाओं सहित नहरों का निर्माण करना।
4. अनुसूचित जाति/जनजाति परिवारों या भूमि सुधारों के लाभान्वितों या आवास योजनाओं के लाभान्वितों की भूमि तक सिंचाई की सुविधाएं पहुँचाना।
5. परम्परागत जल स्रोतों के पुनर्नवीकरण हेतु जलाशयों तालाबों, पोखरों से कचरा एवं सिल्ट निकालना।
6. बाढ़ नियंत्रण एवं जल भराव से ग्रस्त इलाकों से पानी की निकासी करना।
7. गाँवों में सड़कों का व्यापक जाल बिछाना ताकि सभी गांवों तक बारहों महीने सहज आवाजाही हो सके। तथा गाँवों में सड़कों के साथ-साथ पुलिया, नाले-नालियों का निर्माण करना।
8. राज्य सरकार के साथ परामर्श के आधार पर केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित कोई भी अन्य कार्य।

मनरेगा ने कोरोना संकट के दौरान रोजगार और परिसम्पत्तियों के सृजन में अहम भूमिका तय की है। वर्ष 2020-21 में प्रवासी श्रमिकों की समस्या के कारण अतिरिक्त धनराशि आत्मनिर्भर भारत पैकेज के तहत मिलीं। वर्ष 2020-21 में मनरेगा बजट अनुमान 61.500 करोड़ रूपये था लेकिन सरकार ने इसे बढ़ाकर 1,11,500 करोड़ रूपये के रिकॉड स्तर पर पहुँचाया। 13 फरवरी 2021 तक मनरेगा से 333.66 करोड़ लोगों के लिए श्रम दिवस रोजगार सृजन हुआ। सबसे अधिक 7.13 करोड़ परिवारों को काम मिला और सबसे अधिक जॉब कार्ड भी बने।[8]

कोरोना संकट के दौरान ग्रामीण भारत की सबसे बड़ी चिंता यह थी कि गांवों में पलायन करके जा रहे भारी संख्या में मजदूरों के परिवारों का पालन-पोषण कैसे होगा! लेकिन कोरोना की दोनों लहर के दौरान मनरेगा ने न सिर्फ ग्रामीण अर्थ व्यवस्था को गति दी बल्कि उनकी आजीविका का प्रमुख साधन भी बना। कोरोना की दूसरी लहर के दौरान अप्रैल और मई 2021 में जितना काम मनरेगा के तहत मांगा और दिया गया, वह पिछले 15 वर्षों का एक अलग रिकॉड है। इस काल में 300 दिवस का रोजगार उपलब्ध कराया गया। कोरोना संकट के पहले चरण में जिला स्तर पर श्रमिकों एवं कामगारों की पात्रता सूची में मजदूरों को शामिल करने के लिए विशेष अभियान चलाया गया। साथ ही, पंचायतों ने भी स्थायी परिसम्पत्तियों के सृजन के लिए उसी हिसाब से योजनाएँ तैयार कीं।

जनपद कुशीनगर में मनरेगा के अन्तर्गत ग्रामीण अकुशल श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। जनपद में मनरेगा से सम्बन्धित कार्यों के लिए पंजीकृत एवं वर्गवार जारी किए गए जॉब कार्ड के अन्तर्गत वित्तीय वर्ष 2013-14 में पंजीकृत जॉब कार्ड की संख्या 382075 थी, जबकि जारी किए गए जॉब कार्ड (वर्गवार) संख्या 379428 लाख थी। वित्तीय वर्ष 2021-21 के अन्तर्गत पंजीकृत संख्या 450261 लाख है, जबकि जारी जॉब कार्ड की संख्या 419418 लाख है। इस प्रकार वित्तीय वर्ष 2013-14 के मुकाबले वित्तीय वर्ष 2020-21 के दौरान 68186 हजार नए जॉब कार्ड पंजीकृत हुए तथा 39990 नए जॉब कार्ड जारी किए गए है। इसे तालिका संख्या 01 द्वारा वित्तीय वर्षों के दौरान वृद्धि स्तर को स्पष्ट किया गया है–

rkfydk l-&01

tuin d'khuxj e eujxk d vUrxr i thd'r ,o tkjh tkc dkM l[;k

Ø-l-	foÙkh; o"k	i thd'r l[;k	tkjh tkc dkM l[;k ¼oxokj½			
			vu- tkfr	vu-t-tkfr	vU;	dy ;kx
1.	2	3	4	5	6	7
1.	2013–14	382075	122682	725	256021	79428
2.	2014–15	382375	129843	723	248022	378588
3.	2015–16	394484	129728	732	258105	388565
4.	2016–17	372852	119718	660	243515	363893
5.	2017–18	357037	111356	644	233295	345295
6.	2018–19	371136	112429	669	245658	358756
7.	2019–20	385899	114694	698	259637	375029
8.	2020–21	450261	118417	780	300221	419418

स्रोत– जिला ग्राम्य विकास विभाग, कुशीनगर https://jobcardlist.in

मनरेगा कार्यक्रम के अन्तर्गत जनपद कुशीनगर में पूरे वर्ष भर कार्य उपलब्ध कराया जाता है। जनपद में जिला ग्राम्य विकास विभाग द्वारा एक वित्तीय वर्ष के दौरान कार्य मांग का प्रतिरूप तैयार किया जाता है तथा इसे एक वित्तीय वर्ष के दौरान अप्रैल माह से मार्च माह तक के कार्य मांग का प्रतिरूप अभिलिखित किया जाता है। जनपद कुशीनगर में वित्तीय वर्ष 2013–14 से वित्तीय वर्ष 2020–21 के दौरान कार्य की मांग का प्रतिरूप को तालिका सं0 02 द्वारा स्पष्ट किया गया है–

rkfydk l-&02

tuin d'khuxj e eujxk d vUrxr dk;l ekx dk ifr:i

Ø-l-	foÙkh; o"k	viy	eb	tu	tykb	vxLr	flrcj	vDVcj	uocj	fnlcj	tuojh	Qjojh	ekp	;kx
1.	2013-14	8330	41662	45021	18078	14340	13218	17789	25694	29638	25732	28220	24904	292626
2.	2014-15	19238	46582	20259	20259	6649	5175	7361	19570	36489	28632	19349	16943	239531
3.	2015-16	2892	39071	52801	18329	9298	11240	6844	6167	4084	24890	38781	31144	245541
4.	2016-17	12304	65554	84507	14086	3161	3244	1085	467	3738	7992	5105	7369	208767
5.	2017-18	10414	51773	55549	9803	6092	3147	7166	24707	35930	38356	32814	32787	308538
6.	2018-19	30973	69751	68812	16567	6534	5926	11601	33881	47522	38962	23524	32546	383602
7.	2019-20	32671	44185	69756	20908	14339	14914	21387	55975	60004	42411	29982	25405	431937
8.	2020-21	23007	89943	140819	60570	48786	41292	89106	70672	68429	56429	48770	36559	774382

स्रोत : जिला ग्राम्य विकास विभाग, कुशीनगर, www.nrega.nic.in

जनपद कुशीनगर में मनरेगा के तहत ग्रामीण श्रमिकों (महिला/पुरुष) रोजगार उपलब्ध कराने से इनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है। कुशीनगर में वित्तीय वर्ष 2013-14 से वित्तीय वर्ष 2020-21 मनरेगा श्रमिकों को उपलब्ध कराए गए रोजगार की स्थिति को तालिका सं0–03 से स्पष्ट किया गया है –

rkfydk l-&03

tuin d'khuxj jkstxkj miyC/krk

Ø-l-	foÙkh; o"k	jkstxkj miyC/krk ¼fnol e½
1.	2	3
1.	2013–14	374513
2.	2014–15	3448367
3.	2015–16	3550219
4.	2016–17	3330193
5.	2017–18	4149052
6.	2018–19	5376552
7.	2019–20	5594987
8.	2020–21	6912585

स्रोत : जिला ग्राम्य विकास विभाग, कुशीनगर

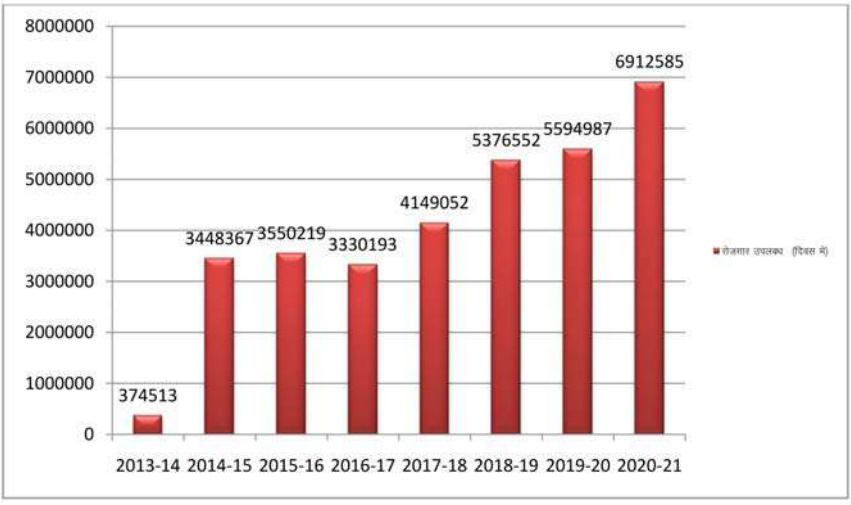

आरेख सं०–03

ग्रामीण भारत के विकास के लिए भारत सरकार एवं राज्य सरकार की कई योजनाएँ जनपद कुशीनगर में चल रही है लेकिन इसमें सबसे महत्वपूर्ण महात्मा गांधी रोजगार गारण्टी योजना हैं। मौजूदा कोरोना संकट काल में भी ग्रामीण क्षेत्रों के लिए जो योजना वरदान बनी है वह मनरेगा ही है। यह योजना जनपद कुशीनगर में लागू होने के बाद से ही बेहतर कार्य कर रही है। तालिका संख्या-01 से स्पष्ट है कि वर्ष 2013-14 में 379428 लाख लोगों को मनरेगा जाबकार्ड जारी किए गए थे। वर्ष 2020-21 में 419418 लाख जॉबकार्ड जारी किये गए जिसमें 118417 लाख अनुसूचित जाति के तथा 780 अनुसूचित जनजातियों को जाबकार्ड प्रदान किए गए हैं। तालिका संख्या-02 से स्पष्ट है कि जनपद कुशीनगर में मनरेगा के अन्तर्गत कार्य मांग का प्रतिरूप लगातार बढ़ रहा है। वर्ष 2020-21 के दौरान मांग प्रतिरूप 7743382 हो गया है। तालिका संख्या-03 से स्पष्ट है कि मनरेगा योजना के अन्तर्गत वर्ष 2020-21 में जनपद कुशीनगर में 6912585 लाख व्यक्तिगत दिवस के रूप में रोजगार उपलब्ध कराया गया है।

मनरेगा योजना ने जनपद कुशीनगर के ग्रामीण गरीब जनता को रोजगार उपलब्ध कराकर उनकी आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत बनाया है। योजना के द्वारा साल के बारहों महिने रोजगार प्रदान किया जा रहा है जिससे गांवों में रह रहे लाखों मजदूरों को जीवन यापन की नई राह दिखाई है, और साथ ही साथ गांवों की कायाकल्प भी बदला है।

मनरेगा ने ग्रामीण सड़कों, तालाबों की साफ-सफाई के स्तर को उन्नत बनाया है जिससे गांवों में टिकाऊ परिसम्पत्तियों का सष्जन भी हुआ है। अनुसूचित जातियों,

पिछड़े दलितों एवं महिलाओं को रोजगार उपलब्ध करा कर मनरेगा ने समाज के कमजोर वर्गों के जीवन स्तर को समृद्धि प्रदान की है। इसने ग्रामीण मजदूरों का रोजगार हेतु शहरों की तरफ पलायन को रोक दिया है। अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि मनरेगा जनपद कुशीनगर के ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है।

संदर्भ सूची

1. मेहता, जीवन, पाश्चात्य राजनीतिक चिंतक का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2001, पृ. 36
2. पन्त, डॉ. डी.सी., भारत में ग्रामीण विकास, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2011, पृ. 12
3. कुरूक्षेत्र, वर्ष 52, अंक-12, अक्टूबर 2006, पृ. 75
4. शाही, डॉ. धर्मेन्द्र प्रताप, ग्रामीण विकास एवं मनरेगा, भारत बुक सेण्टर, लखनऊ, 2012, पृ. 352
5. भारत 2019 वार्षिक संदर्भ-ग्रंथ प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 457
6. कुरूक्षेत्र, वर्ष 67, अंक-9, जुलाई 2021, पृ. 31
7. https://www.nrega.nic.in
8. कुरूक्षेत्र, वर्ष 67, अंक-9, जुलाई 2021, पृ. 32

प्रशासन में पर्यवेक्षण की भूमिका

महेश कुमार सिंह

lkjk'k *प्रस्तुत शोध पत्र में ''प्रशासन में पर्यवेक्षण की भूमिका'' का विशद् विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। संगठनात्मक अधुनातन सिद्धान्तों में पर्यवेक्षण को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। संगठनात्मक समन्वय की स्थापना हेतु समन्वयकर्ता बहुतायत तरीकों को आत्मसात् करता है; यथा– नियन्त्रण (Control), पर्यवेक्षण (Supervision), सम्प्रेषण (Communication) तथा नेतृत्व (Leadership)। जब उच्चाधिकारियों द्वारा निम्न अधिकारियों को निर्णय सम्प्रेषित किया जाता है, तब इस सन्दर्भ में उच्चाधिकारियों द्वारा यह दृष्टिगत करना होता है कि समुचित ढंग से उन निर्णयों को क्रियान्वित किया जाए। इस सम्बन्ध में उच्चाधिकारियों को आश्वस्त होना पड़ता है कि संगठनात्मक कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न हो रहा है तथा सुनिश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निरन्तर प्रयासरत् है। प्रशासकीय संगठन की अपरिहार्यता की दृष्टि से ''देख-रेख अथवा पर्यवेक्षण और नियंत्रण'' को महत्वपूर्ण माना गया है। पर्यवेक्षण की प्रक्रिया सतत् प्रवाहमान् रहती है और प्रशासकीय कार्यों की सम्पन्नता को सुनिश्चित करती है। प्रत्येक संगठन चाहे वह निजी हो अथवा सार्वजनिक, उसके लिए पर्यवेक्षण की व्यवस्था करना अपरिहार्य होता है[1]। पद सोपानिक (Hierarchy) वाले संगठन में पर्यवेक्षण स्वाभाविक ही होता है, क्योंकि उसका प्रत्येक स्तर ही स्वयं से नीचे के स्तर का पर्यवेक्षण करता है और अपने से ऊपर के स्तर द्वारा पर्यवेक्षित किया जाता है[2]।*

प्रस्तावना

वस्तुतः पर्यवेक्षण दो शब्दों परि (Super) + अवेक्षण (Vision) के संघात से सृजित हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ 'देखने की श्रेष्ठ या उच्च शक्ति अर्थात् अधिदर्शन अथवा दूसरों के कार्य का अधीक्षण या पर्यवेक्षण करना। लोक प्रशासन के क्षेत्र में पर्यवेक्षण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए रेनिंग का कथन है कि 'पर्यवेक्षण दूसरों के कार्यों के लिए सत्ता द्वारा किए गए निर्देशन के रूप में दृष्टिगत किया जा सकता है[3]। सामान्यतः पर्यवेक्षण उच्चाधिकारियों द्वारा अधीनस्थ अधिकारियों का मार्गदर्शन करना, उनकी

गतिविधियों पर निगरानी रखना और उनके कार्यों के परिणामों का अधीक्षण करना होता है। मारग्रेट विलियमसन (Margaret Williamson) की दृष्टि में, ''पर्यवेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों को उनकी आवश्यकतानुसार सीखने, अपने ज्ञान एवं कौशल का सर्वोत्तम प्रयोग करने तथा योग्यताओं का सुधार करने में किसी पदाधिकारी का सहयोग प्राप्त होता है जिससे वे अपने कार्य को अत्यन्त प्रभावपूर्ण तरीके से पूर्ण कर सकें तथा इससे स्वयं और अभिकरण को अधिक से अधिक संतोषप्रद स्थिति प्राप्त हो सके''।[4]

टेरी एवं फ्रैंकलिन (G.R. Terry and B . Franklin) के अनुसार, ''कर्मचारियों के प्रयासों और अन्य संसाधनों का मार्गदर्शन और निर्देशन करना पर्यवेक्षण कहलाता है जिससे वांछित कार्य एवं परिणाम की प्राप्ति की जा सके''।[5] अतएव पर्यवेक्षण का अभिप्राय ''परिणामों का अवलोकन'' है, जो किसी भी संगठन को शक्तिशाली बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

यद्यपि पर्यवेक्षण, निरीक्षण एवं खोजबीन से कहीं अधिक होता है। हालांकि निरीक्षण एवं खोजबीन तो पर्यवेक्षणात्मक प्रक्रिया के केवल अंग मात्र है। वस्तुतः पर्यवेक्षण किसी भी प्रशासकीय कृत्य के रूप में अधीक्षण से कहीं अधिक है। इसका एक स्वरूप शिक्षाप्रद रूप में भी परिलक्षित होता है। पर्यवेक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को कार्य करने का सर्वोत्तम ढंग सिखाए। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों अपने पर्यवेक्षक से परामर्श अथवा मार्गदर्शन हेतु भी आशान्वित होता है। अतएव पर्यवेक्षक का महत्वपूर्ण कार्य परामर्शदाता का भी है। एक नेतृत्वकर्ता के रूप में भी पर्यवेक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। संक्षिप्तः पर्यवेक्षण के विविध तत्व परिलक्षित होते है; यथा ''प्रत्येक कार्य हेतु उपयुक्त व्यक्ति का चयन, प्रत्येक व्यक्ति में उसके कार्य के प्रति रूचि उत्पन्न करना तथा उसे उस कार्य को उचित ढंग से करने की शिक्षा प्रदान करना; कार्य सम्पन्न किए जाने की गतिजता एवं कार्यक्षमता का मापन करना, जिससे यह सुनिश्चित हो जाए कि शिक्षण कार्य पूर्णतया प्रभावशाली रहा है; जहाँ भी त्रुटि सुधार की आवश्यकता प्रतीत हो, वहाँ पर त्रुटि सुधार करना तथा जहाँ भी इसका प्रभाव परिलक्षित न हो उन्हें किसी अन्य अत्यन्त उपयुक्त कार्य में सम्मिलित कर लेना अथवा उसे उस स्थान से हटा देना। जब प्रशंसा करने की आवश्यकता हो तो प्रशंसा करना तथा श्रेष्ठ कार्य हेतु पुरस्कृत करना और अन्ततः कार्यरत समूह में प्रत्येक व्यक्ति को सही तरीके से नियत कर देना। इन समस्त कार्यों को धैर्यपूर्वक और कौशलयुक्त तरीके से किया जाना चाहिए। जिससे हर एक व्यक्ति अपने कार्य को चातुर्यतापूर्ण और यथोचित तरीके से बुद्धिमत्ता तथा उत्साह के साथ पूर्ण करने में सक्षम हो सके''।[6]

यद्यपि सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य 'कार्य-सम्पादन' के रूप में परिलक्षित होता है। अतएव पर्यवेक्षण को संगठन में ऐसे वातावरण का सृजन करना चाहिए जिससे समस्त

सम्बन्धित व्यक्ति यथासम्भव अधिकतम् सहयोग से अभिप्रेरित होकर कार्य करते हुए कार्य-सम्पादन की ओर उन्मुख हो सके। अस्तु, पर्यवेक्षण मात्र निरीक्षण एवं जाँच ही नहीं करता, वरन् सहयोगात्मक कार्य (Team work) हेतु सबको अभिप्रेरित और प्रोत्साहित भी करता है।[7] हेमेन ने पर्यवेक्षण के तीन प्रमुख कार्यों का उल्लेख किया है जो निम्न है– 1. मौलिक अथवा तकनीकी कार्य (Substantive or Technical work) 2. संस्थापन कार्य (Institutional Work), 3. व्यक्तिगत कार्य (Person work)।

हालाँकि जे.डी. मिलेट (J.D. Millett) ने मौलिक पर्यवेक्षण (Substantive Supervision) और प्राविधिक पर्यवेक्षण (Technical Supervision) में अन्तर स्पष्ट करते हुए बताया है कि जहाँ प्रथम का सम्बन्ध किसी अभिकरण द्वारा किए गए वास्तविक कार्यों से होता है, वहीं द्वितीय का सम्बन्ध उन तरीकों से होता है जिनके द्वारा कार्य पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार पर्यवेक्षक के कार्यों की प्रकृति विविधतापूर्ण और बहुमुखी आयाम को समाहित करती है। तथापि जे.डी. मिलेट (J.D. Millett) द्वारा पर्यवेक्षण की छः रीतियों को बताया गया है, जो निम्नवत् हैः–

1- **ifj;kstukvksa ij iwoZ Lohdfr (Prior Approval of Individual Projects)** % किसी भी संगठनात्मक कार्य को क्रियान्वित करने से पूर्व पर्यवेक्षण को 'पूर्व स्वीकृति' प्राप्त होनी चाहिए। पूर्वानुमोदन की अवस्था के अन्तर्गत प्रथमतः तो सूक्ष्म नियन्त्रण सुनिश्चित हो जाता है, तो वहीं दूसरी तरफ कार्य योजना में भी लोचशीलता परिलक्षित होने लगती है जिससे त्रुटियों के सुधार की सम्भावना यथोचित रूप में होती है किन्तु इससे लालफीताशाही में अभिवृद्धि होती है जो कार्यपूर्ति में विलम्ब का कारण बनता है। पूर्वानुमोदन की व्यवस्था कर्मचारियों में संदेह एवं उदासीनता की भावना को उत्पन्न करती है। यदि कर्मचारियों एवं उच्चाधिकारियों के मध्य परस्पर मतभेद उत्पन्न हो जाय तो यह व्यवस्था संगठनात्मक स्वास्थ हेतु घातक सिद्ध हो सकती है।

2- **lsok-Lrj ekun.M dh ?kks"k.kk (The Promulgation of Service Standard)** % पर्यवेक्षण का दूसरा तरीका यह है कि शीर्षस्थ अधिकारी द्वारा जिस लक्ष्य अथवा स्तर को निर्धारित कर दिया जाता है, उसे एक प्रवर्तन की इकाइयों को प्राप्त करना होता है। इससे मार्गदर्शन के साथ ही उनके कार्य का परीक्षण भी हो जाता है। इस प्रकार का सेवा-स्तर ही प्रशासकीय कार्य का मानदण्ड निर्धारित करता है। उदाहरण स्वरूप, किसी विद्यालय के सेवा-स्तर में विद्यार्थियों में सामान्य अनुशासन, अध्यापकों में सामान्य नैतिक स्तर, खेल तथा अन्य कार्यकलापों में प्रवीणता और शिक्षा के घण्टों की संख्या– इनमें से कोई एक अथवा कुछ अथवा समस्त का समावेश हो जाता है। इस प्रकार के मापदण्डों को सुनिश्चित करना एक सामान्य प्रक्रिया नहीं होती है तथापि पर्यवेक्षण का यह एक वैज्ञानिक ढंग है। इससे कार्यकुशलता में अभिवृद्धि होती है।

3- dk;ksZ dh 0;kidrk ij ctV lEcU/kh lhek,¡ (Budgetarty Limitations upon the Magnitude of Operations)% यद्यपि बजट केवल 'अंकों का संकलन' ही नहीं होता, अपितु कार्य की एक योजना का प्रशासन पर नियंत्रण का एक शक्तिशाली उपकरण भी है। पर्यवेक्षण का एक तरीका यह है कि पर्यवेक्षक कार्य सम्बन्धी बजट का अवलोकन करता रहे जिससे कार्य करने वाले अधिकारी बजट द्वारा निर्धारित धनराशि के भीतर ही कार्य सम्पन्न करें अर्थात् धन सम्बन्धी व्यय में उन पर निर्धारित बजट का नियंत्रण सदैव बना रहता है। पर्यवेक्षक द्वारा यह भी दृष्टिगत किया जाता है कि बजट द्वारा निर्धारित व्यवस्थाओं का समुचित अनुपालन हुआ है अथवा नहीं।

4- e[; v/khuLFk deZpkjh oxZ dk vuqeknu (Approval of Key Subordinate Personnel)% सरकार का कोई भी अभिकरण अपने कर्मचारियों की भर्ती में पूर्णतया स्वतंत्र नहीं होता है। उच्चतर कर्मचारी वर्ग की नियुक्ति सदैव मुख्य कार्यपालिका द्वारा ही किया जाता है। अधीनस्थ कर्मचारी वर्ग के सन्दर्भ में भी शीर्षस्थ अधिकारी कुछ कम महत्व के स्थानों को छोड़कर, अन्य सभी पदों को पुर्वानुमोदन पर विशेष बल देते हैं। प्रायः ऐसी व्यवस्था सर्वत्र परिलक्षित होती है कि यह कार्य सम्बन्धित अभिकरण के केन्द्रीय सेवी-वर्ग विभाग को सुपुर्द कर दिया जाता है।

5- dk;Z izxfr lEcU/kh izfrosnu i.kkyh (A Reporting System of Work Progress)% यद्यपि प्रतिवेदन प्रणाली पर्यवेक्षकों को इस योग्य बनाती है कि वे अपने अधीनस्थों के कार्यों का समुचित मूल्यांकन करने में सक्षम हो सके, उनके समक्ष आने वाली परिस्थिति को समझ सकें और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि संगठन के अन्तर्गत कार्य-संचालन को नियंत्रित कर सकने में सक्षम हो सकें। अतएव प्रायः सर्वत्र प्रशासन का यह तरीका परिलक्षित होता है कि कार्यरत इकाइयाँ अपने कार्यकलापों का लेखा-जोखा अथवा प्रतिवेदन केन्द्रीय कार्यालय को प्रस्तुत करती हैं। यह प्रतिवेदन साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, षड्मासिक अथवा वार्षिक भी हो सकता है। ये प्रतिवेदन विशिष्ट अथवा तदर्थ भी हो सकते है। अर्थात् उनका सम्बन्ध किसी विशेष विषय से भी हो सकता है। सेक्लर-हडसन (Seckler-Hudson) की दृष्टि में, ''इसकी पहुँच मात्र किसी संगठन के अन्दर, ऊपर, नीचे, बाहर तथा चतुर्दिक् नहीं होती है, वरन् इसे समान कार्य करने वाले अन्य अभिकरणों में भी और सरकार के विस्तृत अभिकरणों तथा राष्ट्रपति कार्यालय तक शीर्षस्थ स्तर तक पहुँचना चाहिए''।[8] हालांकि इस प्रतिवेदन प्रणाली का सम्बन्ध मात्र आन्तरिक प्रबन्धन से है। जे.डी. मिलेट (J.D. Millett) ''इन प्रतिवेदनों को वर्णनात्मक अथवा आँकड़े सम्बन्धी मानते है। वे सभी क्रियाओं

के विस्तृत क्षेत्र को अपनी परिधि में समेट सकते है अथवा कुछ अत्यावश्यक विषयों तक ही सीमित रहते है और वे क्रियान्वयन की अच्छाइयों अथवा कमियों पर बल दे सकते है।[9] यद्यपि प्रतिवेदन की प्रणाली यदि अच्छी होगी तो उसके अनेक लाभ प्रतीत होते है।

6- ifj.kkeksa dk fujh{k.k (Inspection of Results): वस्तुतः चिर-काल से ही प्रशासन के एक अभिन्न अंग के रूप में निरीक्षण का प्रादुर्भाव हुआ है। इस प्रक्रिया में यह दृष्टिगत किया जाता है कि विद्यमान नियमों और प्रक्रियाओं का वास्तविक रूप में अनुपालन हो रहा है अथवा नहीं। इसके साथ ही कार्यों का संचालन समुचित ढंग से हो रहा है या नहीं। कार्यकुशलता हेतु कौन से सुधार की अपरिहार्यता है, इत्यादि। निरीक्षण के महत्व और उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए जे.डी. मिलेट (J.D. Millett) ने लिखा है कि, ''निरीक्षण का उद्देश्य अथवा प्रयोजन सूचना की प्राप्ति है। यह प्रबन्ध के प्रयोजनों और अभिप्रायों को स्पष्ट करने में सहयोग प्रदान करता है तथा प्रबन्धन में निरन्तर कर्मचारियों की कार्य संचालन से सम्बन्धित समस्याओं के बारे में उच्चतर अधिकारियों को अवगत कराता है। निरीक्षण बौद्धिक परिचय और विश्वास को व्यक्तिगत सम्बन्धों के रूप में परिवर्तित कर सकता है''।[10] जे.डी. मिलेट (J.D. Millett) ने निरीक्षण को पर्यवेक्षण प्रक्रिया का ही अंग माना है। संगठनात्मक सोपान के प्रत्येक वरिष्ठतम अधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि उसके द्वारा अपने अधीनस्थों के कार्यों का निरीक्षण किया जाएगा। यह निरीक्षण की अन्तर्रचित प्रणाली कहलाती है। निरीक्षण की दूसरी प्रणाली यह है कि प्रशासकीय अभिकरण के वरिष्ठतम् स्तर अपने से अधीनस्थ कार्यालयों के कार्यों का निरीक्षण करें। निरीक्षण की तीसरी प्रणाली यह है कि जिसमें सरकारी तौर पर एक स्वतंत्र और पृथक् अभिकरण की रचना की जाती है जिसे मात्र निरीक्षण सम्बन्धी कार्यों को ही सुपुर्द किया जाता है। ऐसे अभिकरण का एक श्रेष्ठ उदाहरण उत्तर प्रदेश में 'कार्यालयों का निरीक्षणालय'' (Inspectorate of offices) है।

वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति में एक अच्छे पर्यवेक्षक के गुण का होना सम्भव नहीं है। एक पर्यवेक्षक के लिए विशिष्ट गुणों एवं योग्यताओं का होना अपरिहार्य है। जॉन मैक डोनाल्ड पिफनर (John McDonald Pfiffner) ने एक पर्यवेक्षक हेतु आठ विशिष्ट गुणों की अनिवार्यता को उल्लिखित किया है''।[11]

1. कार्य की विषय-वस्तु का ज्ञान अर्थात् पर्यवेक्षक को किए जाने वाले कार्य का विशिष्ट ज्ञान होना चाहिए।
2. वैयक्तिक योग्यता अर्थात् पर्यवेक्षक में दृढ़ चरित्र का होना अनिवार्य है।
3. शिक्षण योग्यता अर्थात् अपने अधीनस्थ कर्मचारियों तक अपने विचार पहुँचाने तथा उन्हें प्रबन्ध का दृष्टिकोण समझाने की विशिष्ट योग्यता होनी चाहिए।

4. सामान्य दृष्टिकोण अर्थात् पर्यवेक्षक को अपने कार्य के प्रति प्रेम होना चाहिए, उसे उसमें तन्मय होकर अधीनस्थ कर्मचारियों को प्रेरणा प्रदान करनी चाहिए।
5. साहस और सहनशीलता अर्थात् पर्यवेक्षक में निर्णय और उत्तरदायित्व की योग्यता होना चाहिए।
6. नैतिकता तथा आचार सम्बन्धी बातों का ध्यान अर्थात् पर्यवेक्षक को ऐसी बुराइयों से दूर रहना चाहिए समाज जिसे निन्दनीय मानता है।
7. प्रशासकीय तकनीकी अर्थात् पर्यवेक्षक को प्रबन्धकीय योग्यता का विशिष्ट ज्ञान होना चाहिए।
8. जिज्ञासा और बौद्धिक योग्यता अर्थात् पर्यवेक्षक को बौद्धिक सतर्कता और नवीन विचारों को ग्रहण करने की विशिष्ट क्षमता होना चाहिए।

इसी तरह जी.डी. हाल्से (G.D. Halsey) की दृष्टि में, पर्यवेक्षण में निम्नलिखित छः गुणों को यथोचित ढंग एवं सन्तुलित रूप में विकसित होना अपरिहार्य है[12], जो निम्नवत् हैः –

1. *परिपूर्णता (Thoroughness)*: पर्यवेक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह मामले से सम्बन्धित समस्त सूचनाएँ एकत्र कर प्रत्येक अपरिहार्य विवरणों पर समुचित दृष्टि रखे।
2. *औचित्य (Fairness)*: पर्यवेक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह कर्मचारियों के प्रति न्याय, सहानुभूति तथा सत्यता की भावना से अभिप्रेरित होकर कार्य सम्पादित करे।
3. *पहल (Initiative)*: पर्यवेक्षक से यह आशा की जाती है कि वह साहस, आत्मविश्वास एवं निर्णयात्मकता के गुणों का यथोचित पहल करे।
4. *चातुर्य (Tact)* : पर्यवेक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह बातों और कार्यों के द्वारा अन्य लोगों की निष्ठा और समर्थन को प्राप्त कर उनके इस विश्वास को सशक्त तथा सुदृढ़ करें कि जिस कार्य को सम्पन्न किया जा रहा है उसमें उनकी महत्वपूर्ण भूमिका निहित है।
5. *उत्साह (Enthusiasm)* : पर्यवेक्षक में यह गुण होना चाहिए कि वह किसी कर्त्तव्य, उद्देश्य अथवा आदर्श के प्रति भक्ति के साथ उसमें तीव्र एवं उत्साहयुक्त रूचि हो। इसमें रूचि, ज्ञान एवं सफलता भी शामिल होना चाहिए।
6. *भावनात्मक नियन्त्रण (Emotional Control)* : पर्यवेक्षक का यह गुण होना चाहिए कि वह भावनाओं को समाप्त न कर, वरन् उन्हें नियन्त्रण में करके ठीक तरह से समझना है।

हालांकि सबसे अधिक अपरिहार्य गुण मानवीय सम्बन्ध के रूप में परिलक्षित होता है। पर्यवेक्षण की सफलता का अधिष्ठान बहुत अधिक उसके कर्मचारियों से होने वाले व्यक्तिगत सम्बन्धों पर भी अवलम्बित होता है अर्थात् उन्हें मात्र कर्मचारी न समझकर मानव भी समझा जाना आवश्यक है। अतएव जे.एम. पिफ्नर द्वारा यह ठीक ही कहा गया है कि ''पर्यवेक्षक के दायित्वों हेतु जिस प्रकार का नेतृत्व अपरिहार्य है वह सहयोग, परामर्श, सहयोगात्मक कार्य करने एवं कर्मचारियों के अहम् के संतोष पर बल देने पर निर्भर करता है। इसके चाहे शक्तिशाली नेता को आत्मप्रदर्शन एवं आत्मअभिव्यक्ति की अपनी स्वाभाविक इच्छा को ही क्यों न दबाना पड़ जाए''।[13]

यद्यपि हावर्ड समूह (एल्टन मेयो) के पश्चिमी विद्युत (Western Electric) अनुसंधानों तथा मिशीगन (रेनेसिस लेकाण्ट) के अध्ययनों ने यह सिद्ध कर दिया कि ''कर्मचारियों को जनता का ध्यान रखने वाले और प्रजातांत्रिक नेतृत्व अनुकूल संस्थागत पर्यावरण द्वारा सबसे अधिक प्रभावशाली ढंग से अभिप्रेरित किया जा सकता है''।[14] अतएव मिशीगन विश्वविद्यालय की सामाजिक अनुसंधान संस्था द्वारा किए गए अध्ययनों के अधिष्ठान पर जो निष्कर्ष निकाले गए, वो निम्न रूप से प्रस्तावित किए गए हैं:–

इस प्रकार यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि पर्यवेक्षण की सामीप्यता और कर्मचारियों के उत्पादन क्षमता के मध्य विशिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। उत्पादन के तल का पर्यवेक्षण की सामीप्यता के साथ विलोमानुपाती (Inverse Ratio) सम्बन्ध विकसित होता है। अर्थात् सहज पर्यवेक्षण में कर्मचारियों द्वारा अपेक्षानुकूल उत्पादन किया जाता है, जबकि सशक्त अथवा चाबुक से फटकारना इतना प्रभावपूर्ण साधन सिद्ध नहीं होता जितना उसे समझा जाता है। यद्यपि पर्यवेक्षक अपने अधीनस्थों के साथ वैसा ही व्यवहार सम्पादित करता है जैसा व्यवहार उसके उच्चाधिकारी उसके साथ करते है। जहाँ पर्यवेक्षक का कार्य 'कर्मचारी केन्द्रित' होते हैं, वहाँ कर्मचारी द्वारा किया गया कार्य उस स्थान की अपेक्षा अधिकतम् श्रेष्ठतम् होता है। अधिक उत्पादन वाले समूहों के पर्यवेक्षक कम उत्पादन वाले समूहों की अपेक्षा पर्यवेक्षकीय कार्य में अपना समय और ध्यान अधिक लगाते है किन्तु वे उत्पादन कार्य के संचालन हेतु अपना समय और ध्यान कम लगाते हैं। अर्थात् एक सफल प्रबन्धक अपना अधिकतम् ध्यान और समय अपने उत्तरदायित्वपूर्ण कार्यों में लगाता है, न कि कार्य विशिष्टता के सन्दर्भ में। ऐसे पर्यवेक्षक जो सहगामी प्रबन्ध (Participative Management) की प्रवृत्ति के पोषक होते हैं, वो सामान्य कार्यों में भी सामूहिक कार्य और सहयोग को प्रोत्साहन प्रदान करते है एवं ऐसे दोषी कर्मचारियों के प्रति कठोरतम् रुख अपनाने की अपेक्षा सहानुभूति और सहायता का रुख अपनाते हैं, जो उच्च उत्पादन की श्रेणी का द्योतक होता है। सफल पर्यवेक्षक प्रायः अपने कर्मचारियों को कार्य की प्रगति की दिशा में प्रशिक्षित करते रहते है, चाहे उन्हें इस कार्य हेतु अपनी सेवा से वंचित होने की समस्या का सामना ही क्यों न करना पड़े।[15]

संदर्भ सूची

1. डॉ. प्रभुदत्त शर्मा एवं डॉ. हरिश्चन्द्र शर्मा, लोक प्रशासनः सिद्धान्त एवं व्यवहार, कालेज बुक डिपो, जयपुर, 2003, पृ. 266
2. अवस्थी एवं माहेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1998, पृ. 275
3. डॉ. प्रभुदत्त शर्मा एवं डॉ. हरिश्चन्द्र शर्मा, लोक प्रशासनः सिद्धान्त एवं व्यवहार, कालेज बुक डिपो, जयपुर, 2003, पृ. 266
4. M. Williamson : Supervison– Principles and Methods, New York, Women's Press, P.7
5. एम. लक्ष्मीकान्तः लोक प्रशासन, टाटा मैकग्रा-हिल, नई दिल्ली, 2012, पृ. 217
6. G.D. Halsey : Supervising People, New York, Horper and Bros. 1953, p.6
7. J.M. Pfeffner; The supervision of Personnel : Human Relations in the Mangement of Men, New Yark Prentice Hall, 1958, p.215
8. C. Seckler – Hudson : Organigation and Management : Theory and Practice, American University Press, Washington, 1956, p. 237
9. J.D. Millett : Management in the Public Service, McGraw-Hill Company, New Yark, 1954, p. 606-07
10. Ibid, p. 108
11. John McDonald Pfiffner : The supervision of Personnel : Human Relations in the Management of Men, New Yark Prentice Hall, 1958, p.4
12. G.D. Halsey : Supervising People, New Yark, Horper and Bros, 1953, p.11-23
13. J.M. Pfiffner : The Supervison of Personnel : Human Relations in the Management of men, New Yark Prentice Hall, 1958, p.4
14. Ibid, p. 160
15. J.D. Millett : Op cit, p.120

स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में नैतिक मुद्दे: समस्या और समाधान

श्याम सुन्दर प्रसाद

lkjk'k *इसमें कोई दो राय नहीं हो सकता कि "नैतिकता सभी समस्याओं की जड़ और समाधान का मुख्य कारक हैं"। किसी भी क्षेत्र में नैतिकता की मौजूदगी समस्या के समाधान की ओर तथा नैतिकता का पतन या गिरावट समस्याओं की ओर ले जाता हैं। यह कथन स्वास्थ्य व्यवस्था पर भी अक्षरशः लागू होता हैं। भारत के वर्तमान स्थिति में, जहाँ स्वास्थ्य जैसी बुनियादी विषय को लाभकारी पेशे के रूप में लिया जाता हो और इससे जुड़े अधिकांश व्यक्ति चाहे अधिकारी -कर्मचारी या सभ्य समाज -बुद्धिजीवी या सरकार -जनता हो, सभी अपने स्तर पर अपनी जिम्मेवारियों और कर्तव्यों को सुरक्षित करने में माहिर हो चुके हों। वहाँ पर स्वास्थ्य के क्षेत्र में लाख प्रयास करने के बावजूद स्थिति में सुधार होना नाकाफी ही साबित होगा। इसलिए व्यक्ति में 'आंतरिक नैतिकता' को बढ़ावा देने की दिशा में एक सार्थक कदम उठाने पड़ेंगे, जो स्वयं व्यक्ति के अंतःकरण को जागृत कर स्वार्थरहित और सर्वोंमुखी कर सके।*

प्रस्तावना

स्वास्थ्य के लिए स्वास्थ्य देखभाल होना आवश्यक है जो लोगों के स्वास्थ्य की रक्षा और सुधार करने के कार्य से जुड़ी है। स्वास्थ्य संबंधित सभी पहलुओं में एक महत्वपूर्ण चिकित्सकीय नैतिकता भी है। चिकित्सकीय नैतिकता का अभिप्राय चिकित्सा के क्षेत्र या संबंधित कार्यों में व्यक्ति या समूह समाज या संस्था का विशेष नैतिक सिद्धांत या आचरण के नियम या मानक से है जो सार्वभौमिक, व्यावहारिक, वस्तुनिष्ठ, तार्किक, न्यायपूर्ण, प्रासंगिक और व्यावहारिक हों। नैतिकता के गुणों की उपस्थिति या कमी जैसे– व्यक्ति के चरित्र, कर्तव्यनिष्ठा, प्रतिबद्धता, सहानुभूति, साहस, धैर्य, ईमानदारी, स्वास्थ्य व्यवहार, अच्छे व्यवहार या आदतों सहित विभिन्न विशेषताएँ नैतिकता को व्यक्त कर सकती हैं। भारत सरकार या राज्य सरकारों द्वारा स्वास्थ्य के क्षेत्र में विभिन्न स्तर पर नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार और 'स्वस्थ और खुशहाल'

समाज के निर्माण हेतु अनवरत प्रयास जैसे– स्वास्थ्य बजट में वृद्धि, मिशन मोड में स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों की शुरुआत, स्वास्थ्य बीमा योजना की सुविधा, हेल्थ कार्ड मुहैया करना, मेडिकल कॉलेज निर्माण तथा भर्तियों की संख्या बढ़ाना, जन संचार के माध्यम जैसे– प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक तथा सोशल मीडिया द्वारा सेहत जागरूकता कार्यक्रम आयोजन और कुपोषण से आजादी के लिए फ्री खाद्यान्न उपलब्ध कराना आदि समय-समय पर किए जाते रहे हैं। भारत में कमजोर सार्वजनिक स्वास्थ्य का कारण सार्वजनिक स्वास्थ्य पर कम खर्च, वैधानिक ढांचे का अभाव, सहकारी संघवाद के ढांचे के भीतर स्वास्थ्य सुविधाओं को अमल में नहीं लाना आदि हैं। इन सबके बावजूद सबसे महत्वपूर्ण कारण व्यक्ति के नैतिक जिम्मेवारियों और कर्तव्यों का दिन प्रति-दिन क्षरण होना है। व्यक्तियों द्वारा भ्रष्टाचार, मिलावट और महंगाई आदि के कार्यों को बिना रोक-टोक के बड़ी संख्या और मात्रा में अंजाम देना, नैतिकता के गिरावट का उदाहरण है ।

अनैतिक कार्य और स्वास्थ्य देखभाल पर प्रभाव

यह कहना निःसंदेह उचित होगा कि यह नैतिक गिरावट प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से स्वास्थ्य की समस्याओं को प्रभावित करता है। क्योंकि स्वास्थ्य अपने आप में एक अंतर्विषयक, अन्तर्गुफित और अंतर्संबंधित विषय है। इसलिए यह दूसरे विषयों को प्रभावित करता है और उससे प्रभावित भी होता है। इसको संसार में आए कोविड-19 विपदा के संदर्भ में बहुत हद तक समझ और देख सकते है। कैसे लोग अपने चारित्रिक और नैतिक जिम्मेवारियों व कर्तव्यों से विमुख होकर आपदा को गलत ढंग से अवसर में बदला है और बदलने में लगे हुए हैं। नीचे कुछ महत्वपूर्ण अनैतिक कार्य और उनके स्वास्थ्य पर पड़ते प्रभाव को देखा जा सकता है।

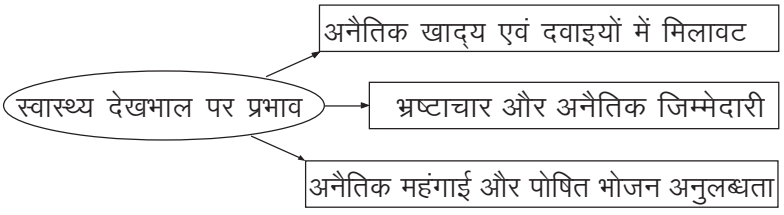

vuSfrd [kk| ,oa nokb;ksa esa feykoV% कुछ लोगों में अनैतिकता की प्रकाष्ठा इतनी बढ़ गई हैं कि उन्हें स्वयं के फायदे के आलावा कोई और किसी प्रकार का या रूप में फर्क नहीं पड़ता। इसलिए सभी खाद्य पदार्थ सब-स्टैंडर्ड पाया जाता है। अन्य विकल्प नहीं होने के कारण आम जनता इसे अपने खानपान में लेने के लिए मजबूर है। जिससे विभिन्न स्वास्थ्य संबंधित रोगों का शरीर में स्थान मिलना शुरू हो जाता है। अगर बात करते है बाजार में उपलब्ध दवाइयों की गुणवत्ता का जो विभिन्न दवा कम्पनियों द्वारा रोगों के निवारण के लिए बनाए गए है तो अधिकांश दवाइयों के

इस्तेमाल करने के बाद प्राप्त परिणाम कम गुणवत्ता और प्रभावशीलता वाले होते है जो उनमें मिलावट के प्रतिशत को बताते है। दूसरी तरफ, इन दवाइयों के मूल्य निर्धारण का आकलन किया जाए तो एक ही दवा का मूल्य और छूट (कभी-कभी 50 प्रतिशत का अंतर) अलग-अलग मेडिकल स्टोर पर आपको अलग-अलग मिल जाते है। यह चली आ रही बुरी व्यवस्था लोगों को मनोवैज्ञानिक रोगी बनाकर स्वास्थ्य पर बुरा असर डालता है। जो निरोगी को रोगी और रोगी को और रोगी करता जाता है। खाद्य पदार्थों में मिलावट के साथ दवा में मिलावट को भी भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता के धारा 272 से 276 में एक गैर जमानती अपराध माना गया है। फिर भी मिलावट करने वाले मामले में मिलावटखोरों पर सरकार, चिकित्सा विभाग तथा अन्य के कदम न के बराबर है। कभी-कभार त्यौहारी सीजन में चिकित्सा विभाग और अन्य एजेंसियों द्वारा मिलावट की रोकथाम के लिए अभियान चलाए जाते हैं ।

vufrd egxkbZ vkj ikf"kr Hkkstu vuiyC/krk% खाद्य पदार्थों के प्रतिदिन मूल्य वृद्धि और मेडिकल खर्चों में बेतहाशा वृद्धि ने आम आदमी को संतुलित भोजन और मेडिकल सुविधा से दूर कर दिया है। लेकिन दुःख की बात यह है कि यह मूल्य वृद्धि वस्तुओं के आवक और गुणवत्ता पर निर्भर नहीं है बल्कि फर्जीवाड़ा, लूट-खसोट और कालाबाजारी आदि पर है। इसका परिणाम यह हुआ है कि एक तरफ, समाज का एक वर्ग या तबका बेलगाम अमीर होता दिख रहा है। और दूसरी तरफ, भारत की अधिकांश आबादी आज भी कुपोषण का शिकार है। अधिकांश लोगों की मृत्यु का कारण अन्न और बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाओं की अनुपलब्धता है। हाल के वर्षों में, भारत के अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता और स्थिर आर्थिक विकास की स्थिति के बावजूद, देश में गरीबी, खाद्य असुरक्षा और कुपोषण का कोई उन्मूलन नहीं हो पाया है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में लगातार समस्याएं देखी गई हैं जैसे– राशन कार्डधारी गरीबों को कम आपूर्ति, खुले बाजार में वस्तुओं को बेचना, उचित मूल्य की दुकानों द्वारा अनुमत मात्रा में खाद्यान्न की आपूर्ति नहीं करना, अच्छी गुणवत्ता वाले खाद्यान्नों को सस्ते में बदलना, अनियमितता और देरी आदि। साथ ही इस व्यवस्था में अन्न के स्टोरेज में खर्च, स्टोर किए खाद्यान्न की बर्बादी, परिवहन व्यय तथा अनुचित प्रबंधन ने सभी के लिए खाद्य सुरक्षा नीति को असफल कर रहा है ।

Hk"Vkpkj vkj vufrd ftEesokjh% स्वास्थ्य क्षेत्र में भ्रष्टाचार (किसी भी रूप में अनैतिक निजी लाभ) इतना घातक है कि यह जीवन और मृत्यु के बीच अंतर कर सकता है। इसमें क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार न केवल स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच, गुणवत्ता, समानता, दक्षता और प्रभावकारिता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है बल्कि इसके परिणामस्वरूप 'सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज' प्राप्त करने के दीर्घकालिक लक्ष्य के लिए एक बाधा बन सकता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च होने वाले बजट का अधिकांश हिस्सा किसी रूप में बिना लक्ष्य पूर्ति के खर्च हो जाते है। अपर्याप्त

नियामक निरीक्षण, और शासन में पारदर्शिता की कमी भ्रष्टाचार को जन्म देता है और स्वास्थ्य देखभाल की गुणवत्ता को कम देता है। भ्रष्टाचार सबसे आवश्यक संसाधनों को डायवर्ट करता है। यह स्वास्थ्य प्रणालियों को कमजोर करता है, असमानताओं को बढ़ाता है और लोगों की जान लेता है। बिना लगाम के बेरोकटोक ढ़ंग से मनमानीपूर्ण डॉक्टरो की परामर्श फीस, दवाओं और चिकित्सा उपकरणों और जाँच सुविधाओं की कीमत आदि उतरोत्तर बढ़ रहे है। बेतहाशा कीमतें इसलिए नहीं बढ़ रहे है कि आवश्यक है बल्कि अनैतिकतापूर्ण भ्रष्ट आचरण और नियमों और मानवता को ताख पर रख कर असंवेदनशीलता से अपना जेब भरने के लिए हो रहे है ।

उच्च नैतिकता निर्माणः स्वास्थ्य समाधान की ओर एक पहल

सभी स्वास्थ्य सुधारात्मक पहलों क्रियान्वयन के शत-प्रतिशत परिणाम सुनिश्चित करना है तो सबसे महत्वपूर्ण बात लोगों में नैतिक जिम्मेदारियों और कर्तव्यों के प्रति नैतिकता का विकास करना है। इसके लिए विभिन्न स्तरों पर बदलाव करने की जरूरत है।

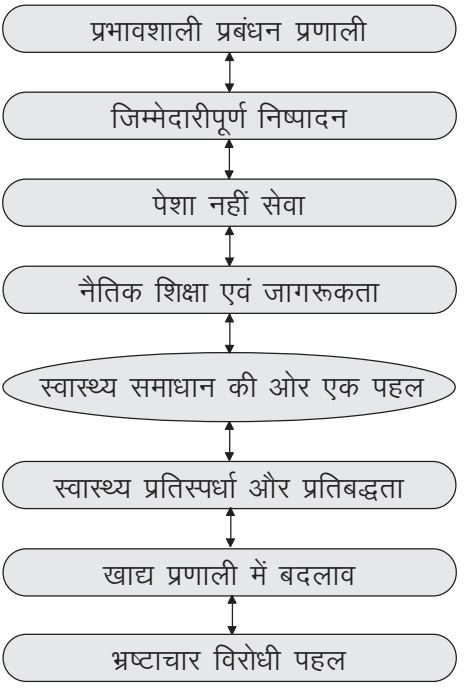

ufrd f'k{kk ,o tkx:drk मेडिकल कॉलेजों में छात्रों के एडमिशन से लेकर कोर्स पूर्ण करने तक "सेवार्थ आइए, परमार्थ जाइए'' पर हमेशा अमल हो। स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं को ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचाना जरूरी है, इसलिए इन विषयों को यूनिवर्सिटी एजुकेशन का कोर्स बनाने पर जोर देने की जरूरत है। मेडिकल

स्टाफ की भर्ती से लेकर ड्यूटी तक नैतिक मूल्यों के विकास और नैतिक शिक्षा पर बल देने वाले प्रावधानों को शामिल किया जाए। स्वास्थ्य क्षेत्र में काम कर रहे नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठन को चिकित्सा लाइन में ही एक अलग विशेषीकृत व्यवस्था या स्वास्थ्य सेवाओं (जैसे– चिकित्सा, एम्बुलेंस, उपकरण, रक्त, भोजन, अपशिष्ट, जागरूकता और परामर्श) को लागू करने और योगदान करने की दिशा में काम करना चाहिए। स्वास्थ्य सेवा संस्थान या ट्रस्ट एक नैतिकता के साधन हो सकते हैं इसलिए अमीर और परोपकारी व्यक्तियों या समाज द्वारा ''ट्रस्ट आधारित अस्पतालों एवं डिस्पेन्सरियों'' को जिला, क्षेत्र या पंचायतवार खोलने का प्रयास हो ताकि गरीब मरीजों को उनकी सुविधाएं कम कीमत पर मिल सकें। यह भी सुनिश्चित किया जाए कि अस्पताल लाभोन्मुख न हो और इन अस्पतालों में सेवा देने वाले डॉक्टर अपने मरीजों को निजी क्लीनिक तक पहुंचने का साधन न बनाएं।

i'kk ugh lsok% यह बात सभी को समझनी होगी कि पेशा कोई भी हो हमें सिर्फ निःस्वार्थ भाव से मानवता की सेवा करनी चाहिए। चूंकि डॉक्टर इंसानियत के पुजारी और भगवान के दूसरे रूप होते हैं, इसलिए निजी डॉक्टरों को अपने मरीजों को देखने के लिए सर्वसम्मति से यथोचित फीस तय करनी चाहिए। अगर कोई डॉक्टर मनमानी फीस वसूल रहा है तो डॉक्टर एसोसिएशन के निर्देश पर प्रत्येक डॉक्टर को 15 दिन में कम से कम एक बार 50 से 100 मरीजों को निःशुल्क देखने का दायित्व निभाना चाहिए। अक्सर देखा गया है कि विपत्ति के समय चिकित्सा उपकरणों और दवाओं की कालाबाजारी से उनके मूल्य वृद्धि होती है तथा अधिकांश डॉक्टर अपने कमीशन हेतु बेमतलब के महँगी दवाइयाँ और जाँच की सलाह देते है। इसलिए डॉक्टर को रोगियों को कम मूल्य की प्रभावशाली दवाइयों को लेने एवं जाँचों को करवाने की सलाह देना अपना कर्तव्य समझना चाहिए।

ftEesnkjh.k fu"iknu% स्वास्थ्य देखभाल के लिए मुख्य इकाई अस्पताल/डिस्पेंसरी/केंद्र का प्रबंधन और उसमें कार्य करने वाले कर्मचारियों के निष्पादन जिम्मेदारी को सुढृण करना होगा। इसके लिए अस्पताल के मेन गेट, ओपीडी और आईसीयू में सीसीटीवी लगाकर सीएमओ के रूम और कंट्रोल रूम में प्रसारण किया जा सकता है ताकि कर्मचारी के लापरवाही का पता लग सकें और वे अपने कर्तव्यों को बेहतर ढंग से निभा सके। अस्पताल में काम करने वाले कर्मचारियों के पास ड्रेस कोड के साथ पदनाम के साथ उनकी नेम प्लेट होनी चाहिए और सीएमओ के कार्यालय में एक शिकायत पुस्तिका या रजिस्टर होना चाहिए। किसी भी तरह और रूप में भ्रष्टाचार में संलिप्त लोग या कर्मचारी की सारी चल-अचल सम्पत्ति जब्त किया जाए। उन प्राप्त धन का गरीबों के कल्यार्थ पर लागने के लिए एक कोष को निर्माण हो। किसी भी कार्य के बेहतर सम्पन्नता का आश्वासन या जिम्मेदारी उच्च अधिकारी ले। इनके द्वारा कार्य के भलीभांति देख-रेख के लिए 'शपथ-पत्र फॉर्म' भरवाया जाए। कम से कम दो अनियमितता सिद्ध हो जाने पर उनके खिलाफ करवाई हो। बड़े

अस्पतालों के स्तर पर एक 'स्वतंत्र नियंत्रण एवं संचालन प्रकोष्ठ' हो जिसमें सीएमओ, डीएम, मुख्य न्यायाधीश, सांसद, विधायक, प्राचार्य और अन्य सम्मानित व्यक्ति के प्रतिनिधि शामिल हों जो अस्पताल का 24x7 सतत निगरानी काम कर सकें। अस्पतालीय अनियमितता पर मरीज शिकायत दर्ज कराए और सेल तुरंत उनकी मदद करें ।

çHkko'kkyh çc/ku ç.kkyh% स्वास्थ्य क्षेत्र में सफलता और प्रभावशीलता के साथ स्वास्थ्य संकटों से निपटने के लिए एक प्रभावशाली प्रबंधन प्रणाली तैयार करने की जरुरत है जो 'स्वास्थ्य सेवा तंत्र' व 'स्वास्थ्य सूचना तंत्र' को मजबूत करें। सरकारी और निजी अस्पतालों में चिकित्सा सहायता और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जिला स्तर पर एक 'चिकित्सा सहायता या उपकरण आपूर्ति प्रकोष्ठ' बनाया जाना चाहिए। प्रत्येक अस्पताल चिकित्सा सहायता सामग्री का 3 दिनों के लिए पर्याप्त उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए, आपूर्ति प्रकोष्ठ को प्रतिदिन निर्धारित प्रारूप में इसकी आपूर्ति की सूचना दे। मांग के अनुसार चिकित्सा सहायता सामग्री उपलब्ध कराना प्रकोष्ठ की जिम्मेदारी हो। राज्य सरकार को चिकित्सा उपकरणों और दवाओं की कालाबाजारी को रोकने के लिए उत्पादन और आपूर्ति को तुरंत अपने नियंत्रण में लेकर ड्रग कंट्रोल टीम को सक्रियता से काम करने के निर्देश देना चाहिए। सभी स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को सम्मलित एवं सहभागितापूर्ण ढ़ंग से स्वास्थ्य देखभाल का कार्य तथा स्वास्थ्य संबंधित अन्य गतिविधियों का संचालन करने के लिए एकीकृत योजना पर कार्य हो। जिला स्तर पर सभी अस्पतालों (सरकारी और निजी), डॉक्टरों (एलोपैथिक, होम्योपैथिक, आयुर्वेद, दंत चिकित्सा, यूनानी और अन्य) का क्लस्टर और उनसे जुड़े सभी कर्मचारियों की विभिन्न आवश्यक जानकारी के साथ एक डेटाबेस तैयार किया जाना चाहिए। यह डेटाबेस संबंधित स्वास्थ्य विभाग के पास होना चाहिए ताकि इसका जल्द से जल्द और आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया जा सके और उन सभी को समय-समय पर आवश्यक दिशा-निर्देश भी दिए जा सकें।

LoLFk çfrLi/kkZ vkj çfrc) rk% पिछले दो दशकों में मेडिकल प्रदाताओं एवं दवाओं की बढ़ती संख्या तथा मेडिकल इन्फ्रास्ट्रक्चर के आधुनिकरण एवं बढ़ोतरी के बावजूद आम लोग स्वास्थ्य सुविधा को लेकर अधिक तनाव और असुरक्षा महसूस कर रहे हैं। स्वास्थ्य संबंधी असमानताओं के जन्मने का मुख्य कारण विभिन्न क्षेत्रों में अनैतिक प्रतिस्पर्धा है। इसलिए स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े विभिन्न कम्पनियों/संस्थायों/व्यक्तियों को अपने बीच प्रतिस्पर्धा जरुरतमंदों को अच्छी, बेहतरीन स्वास्थ्य देखभाल और सस्ती सेवा देने की प्रतिबद्धता में हो। अतः स्वास्थ्य असमानताओं का विकास एवं इसके मापन और समाधान के प्रासंगिक विषयों के लिए विधियों और नीतियों के साथ नैतिकता निर्माण पर विचार करने की आवश्यकता है ।

[kk| ç.kkyh e cnyko% मौजूदा खाद्य प्रणाली को बदलने के लिए सभी हितधारकों को शामिल करके नीतिगत पहल की तत्काल आवश्यकता है। गरीबों को

खाद्यन्न उपलब्ध करवाने के बदले उन्हें प्रत्यक्ष नगद स्थानान्तरण स्कीम से जोड़ा जाए। ऐसा करने से खाद्यान्न प्रबंधन खर्चो और पीडीएस की समस्याओं से निजात मिलेगा। साथ ही गरीब लोग नगद पैसों से मनचाही और आवश्यकतानुसार खाद्यान्न किसानों या बाजार से खरीद सकेंगे। इससे बाजार में तरलता बनी रहेंगी और छोटे किसानों को भी फायदा होंगा ।

Hk"Vkpkj fojks/kh igy% सेवा वितरण एवं नियामक और संस्थागत भ्रष्टाचार दोनों पर ध्यान केंद्रित करते हुए त्वरित और क्रियात्मक आधारित कार्य के साथ सामाजिक जवाबदेही तथा भ्रष्टाचार विरोधी, पारदर्शिता और जवाबदेही के प्रयास करना महत्वपूर्ण हैं। सरकार द्वारा अनैतिक कार्यों पर रोक लगाने के लिए जगह जगह पर होल्डिंग लगाकर एक नंबर जारी किए जाए जिस पर आम नागरिक मिलावट खोरों/भ्रष्ट व गैर-जिम्मेदार कर्मचारियों/दलालों/कालाबाजारियों/टैक्सचोरों/कमीशनखोरों आदि की शिकायत कर सके। शिकायत की पुख्ता जाँच के बाद सही पाए जाने पर शिकायतकर्ता को अवार्ड/प्रशस्तिपत्र/नगद राशि/नौकरी आदि का प्रावधान हो । इस तरह के उठाए गए कदम से राष्ट्र के विकास के साथ सक्रिय नागरिक निर्माण और बेरोजगारों के लिए एक वैकल्पिक रोजगार के अवसर प्राप्त हो सकते है। सरकारी डॉक्टरों के साथ-साथ निजी डॉक्टरों को सालाना 'वेल्थ असेसमेंट फॉर्म' भरना अनिवार्य हो ताकि उनकी संपत्ति के ब्योरे के साथ आयकर भी सुनिश्चित किया जा सके। उनके द्वारा भरे गए फॉर्म का औचक जाँच भी हो।

अंततः जनता के 'अच्छा स्वास्थ्य अधिकार' को मौलिक बनाने और इसे कानूनी और पारदर्शिता के साथ मानवाधिकार सिद्धांतों के ढांचे के भीतर लागू करने की आवश्यकता है। तभी भारत जैसे देश स्वास्थ्य संकट के कम और उच्च जोखिम की चुनौतियों का सामना करने में समर्थ हो सकता है। सहकारी संघवाद के ढांचे के भीतर स्वास्थ्य के अधिकार को लागू करने से उन क्षमताओं का निर्माण होगा, जहां जमीनी स्तर पर उनकी सबसे ज्यादा जरूरत है। तभी स्वास्थ्य नीति पूर्णरूपेण सफल हो पाएगी।

राजस्थान के ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका (बाड़मेर जिले के विशेष संदर्भ में)

मांगी लाल

lkjk'k % *भारत गांवों का देश है, क्योंकि यहां की अधिकतर जनसंख्या गांवों में निवास करती है। पंचायतें प्राचीन काल से ही भारतीय ग्रामीण समाज का अभिन्न अंग रही हैं। ग्रामीण भारत के सामाजिक -आर्थिक परिवेश की उन्नति एवं प्रगति में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। गांवों के सर्वांगीण विकास हेतु सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की विकास एवं जनकल्याणकारी योजनाएं चलाई जा रही हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य मुख्यतः गांवों का आर्थिक, सामाजिक व ढांचागत विकास करना होता है ताकि गांवों में रहने वाले लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो। राजस्थान में ग्रामीण विकास की अनेक योजनाओं के उपरांत भी अधिकांश गांवों में कुछ आधारभूत सुविधाओं का अभाव हैं। जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वच्छता, शुद्ध पेयजल, बिजली, सड़कों, स्वास्थ्य सेवाओं, रोजगार आदि मूलभूत सुविधाओं की मांग निरंतर बढ़ रही है। गांवों में पर्याप्त सुविधाएं न मिलने के कारण ग्रामीण क्षेत्र की आबादी का पलायन शहरों की ओर होने लगा हैं। ग्रामीण विकास की वर्तमान अवधारणा पर पुनर्विचार कर गांवों के समग्र विकास की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है ताकि वहां के लोगों को सामाजिक आर्थिक आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध हो सके एवं उनके जीवन स्तर में सुधार हो सके। वर्तमान कोविड -19 महामारी के दौरान राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका में बड़ा बदलाव आया है। अतः समय एवं परिस्थितियों के अनुसार ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं के महत्व को देखते हुए इस पर निरंतर अध्ययन करना आवश्यक है। प्रस्तुत शोध पत्र राजस्थान के बाड़मेर जिले में ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका पर विश्लेषण किया गया हैं।*

मूल शब्दः पंचायतीराज संस्थाएँ, ग्राम स्वराज, ग्रामीण विकास, शिक्षा, शुद्ध पेयजल, स्वच्छता, बिजली आपूर्ति, निर्धनता उन्मूलन और कोविड-19 महामारी।

प्रस्तावना

भारत का सर्वांगीण विकास ग्रामीण विकास से ही संभव हैं, क्योंकि भारत गांवों का देश हैं। यहां की तीन-चौथाई आबादी गांवों में निवास करती हैं। इसलिए गांवों का विकास किए बिना देश के विकास की कल्पना करना निरर्थक हैं। गांवों के विकास एवं समृद्धि पर भारत का विकास निर्भर हैं। व्यापक जनचेतना व सक्रिय जनसहभागिता ही ग्रामीण विकास योजनाओं की सफलता का आधार बन सकती हैं। ग्रामीण परिवेश का समग्र अध्ययन करके ही देश का वास्तविक विकास कर सकते हैं। स्वतंत्रता के बाद से लगातार अनुभव किया गया कि पंचायती राज संस्थाएं ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में जनसहभागिता को सुनिश्चित करने का सफल संस्थागत माध्यम सिद्ध हो सकती हैं और सरकार द्वारा गठित विभिन्न समितियों द्वारा किए गए आंकलनों ने यह स्पष्ट कर दिया कि पंचायती राज संस्थाएं ग्रामीण विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं फिर भी वे अपने पूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति में वास्तविक सीमा तक सफल नहीं हो सकी है। इसलिए पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिकता का आधार देने के लिए 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम से ग्रामीण विकास के संदर्भ में एक नए युग का सूत्रपात हुआ और विकास योजनाओं में जनसहभागिता के नए स्वरूप देखने को मिलें। भारत में ग्रामीण विकास के प्रशासनिक तंत्र में पंचायती राज संस्थाओं को ही लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की संस्थाओं के रूप में स्वीकार किया गया हैं।

भारत में प्राचीन काल से ही सुदृढ़ ग्रामीण प्रशासनिक व्यवस्था रही हैं। जिसके प्रमाण हमें आदिम सिक्कों, अभिलेखों और प्राचीन साहित्यों से प्राप्त होते हैं। विभिन्न ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत में प्राचीन काल से ही पंचायतें स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के रूप में कार्यरत् थी जो पूरे गांव का शासन चलाती थी। यहां के गांव प्राचीन काल से ही सशक्त रहे हैं। गांवों को स्वायत्तता प्रारंभ से ही मिली है यहां के ग्रामीण विकास का प्रमुख आधार स्तंभ पंचायती राज संस्थाएं हैं। पंचायती राज में लोकतंत्र की आत्मा निहित हैं। इसलिए स्वतंत्रता के बाद इस संदर्भ में व्यापक स्तर पर प्रयास किए गए जिसमें सामुदायिक विकास कार्यक्रम 1952 से लेकर 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 तक इस क्षेत्र में प्रयास जारी रहे और अंततः पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक आधार प्राप्त हुआ। आज पंचायती राज संस्थाएं भारतीय संविधान के भाग 9 अनुच्छेद 243 से अनुच्छेद 243ण में एक संवैधानिक निकाय के रूप में क्रियान्वित हैं। 73 वां संविधान संशोधन अधिनियम बन जाने से राज्यों के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि वें ग्राम स्तर पर *प्रत्यक्ष लोकतंत्र* की स्थापना करें ताकि सभी मतदाताओं को ग्रामीण समुदाय के विकास में भाग लेने के योग्य बनाया जा सके।

राजस्थान में ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज

स्वतंत्रता के पश्चात 2 अक्टूबर 1959 को महात्मा गांधीजी की जयंती के अवसर पर प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान के नागौर जिले के बगदरी गांव में पंचायती राज का मंगल दीप प्रज्वलित कर शुभारंभ किया गया अतः राजस्थान को देश में सर्वप्रथम पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना करने का गौरव प्राप्त है। पंचायती राज व्यवस्था लोकतंत्र पद्धति का मूल आधार है। गांधीजी के अनुसार ''लोकतांत्रिक व्यवस्था का संचालन केंद्र में बैठे 20 व्यक्तियों से नहीं वरन् प्रत्येक गांव में निवास कर रहे ग्रामीणजन द्वारा होगा। पंचायती राज में पंचायत के कानून ही माने जायेंगे, जो उन्ही के द्वारा बनाए गए होंगे।'' स्वतंत्र भारत की संघात्मक संरचना में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण करने का मूल उद्देश्य पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से स्थानीय स्तर पर जनता की व्यापक भागीदारी हो। इनके बिना विकास की योजनाएं सफल नहीं हो सकती और ना ही सार्थक हो सकती है। ग्रामीण विकास में जन सहभागिता के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण विकास क्रियान्विति का महत्वपूर्ण साधन माना हैं।

''आज दुनिया के सामने जो बहुत -सी समस्याएं हैं, छोटे पैमाने पर एक गांव में भी हुआ करती हैं। जैसे– उत्पादन बढ़ाना, शिक्षा की योजना, आरोग्य का प्रबंध, पड़ोसी गांव से संबंध, शांति की रक्षा यह सब काम गांव में भी उपस्थित हैं। इसलिए एक और समस्या निदान के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी संस्था आवश्यक हैं, तो दूसरी ओर ग्राम स्वराज संस्था आवश्यक है। ग्राम स्वराज विश्व -समस्या को हल करने का एक प्रयोग हैं''।

– विनोबा भावे

ग्रामीण विकास एक व्यापक अवधारणा हैं। जो सम्पूर्ण ग्रामीण समाज का समग्र विकास सुनिश्चित करने से संबंधित है। जिसके अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र में कृषि, पशुपालन, आवास, शिक्षा, चिकित्सा, सिंचाई पेयजल, सड़क निर्माण, ग्रामोद्योग के क्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं का बड़े पैमाने पर विस्तार और आधुनिकीकरण करना हैं। ताकि ग्रामीण लोगों के सामाजिक व आर्थिक ढांचे में विकास को प्राथमिकता मिलें। ग्रामीण विकास में ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के रहन-सहन के स्तर में सुधार लाने के सभी पहलू शामिल हैं। इस संदर्भ में महात्मा गांधी जी ने सही कहा है कि हमारा भारतवर्ष गांवों में बसता है, गांव हमारी संस्कृति के केंद्र बिंदु हैं। जब तक भारत के गांव उन्नत, स्वावलम्बी और समृद्धशाली नहीं होंगे तब तक स्वतंत्रता एवं स्वराज का भारत के लिए कोई मूल्य नहीं हैं। इसलिए देश के विकास के लिए पहले ग्रामीण क्षेत्रों का विकास होना अत्यंत आवश्यक हैं। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विकास को गति प्रदान करने के लिए राजस्थान सरकार ने ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग नाम से एक अलग विभाग स्थापित किया हैं। जिसका मुख्य कार्य राजस्थान में ग्रामीण विकास हेतु विभिन्न विकास योजनाएं संचालित करना हैं।

ग्रामीण विकास एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से सामूहिक प्रयासों के द्वारा नगर क्षेत्र से बाहर निवास करने वाले ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर को सुधारना और उन्हें स्वावलंबी बनाना हैं। ग्रामीण विकास योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण जन में जीवन की गुणवत्ता में बढ़ोतरी के लिए क्षेत्र के स्रोतों को अच्छे उपयोग और संरचनात्मक सुविधाओं के निर्माण के आधार पर उनका सामाजिक-आर्थिक विकास किया जाता है एवं उनके आय के अवसर को उन्नत करने के प्रयास किए जाते हैं। ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों के जीवन के उन सभी पहलुओं से संबंधित कार्यक्रम है जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, कुटीर उद्योग, आर्थिक व सामाजिक कल्याण के माध्यम से ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना और प्रत्येक ग्रामवासी को आत्मनिर्भर बनाना हैं।

पंचायती राज संस्थाओं की मूल भावना ग्राम पंचायतों द्वारा स्वशासन अथवा स्व-सरकार की स्थापना करना हैं। राजस्थान में गांधीजी के ग्राम स्वराज के सपनों को साकार करने तथा राज्य के समग्र विकास के लिए गांवों को समृद्धि, खुशहाल तथा प्रगति की राह में आगे बढ़ाने के लिए ग्राम पंचायत द्वारा स्वशासन की स्थापना किए जाने की आवश्यकता है। जिसे विकास का लाभ अंतिम छोर पर बैठे आदमी तक पहुंचाने का दायित्व पंचायती राज संस्थाओं पर है। राजस्थान के बाड़मेर जिले में पंचायती राज संस्थाएँ वर्तमान वैश्विक महामारी कोविड-19 से संघर्ष में भी अग्रणी भूमिका निभा रही है। आपदा को अवसर में परिवर्तित कर देने की पंचायती राज संस्थाओं की विलक्षण क्षमता का साक्षात उदाहरण कोविड-19 के इस काल को कहा जा सकता है।

राजस्थान के ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना से ग्रामीण विकास में एक नये अध्याय का शुभारंभ हुआ हैं। ग्रामीण लोगों के रहन-सहन के स्तर में सर्वतोन्मुखी सुधार करने का सचेत पर्यत्न ही पंचायती राज संस्थाओं का मुख्य लक्ष्य हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों के संचालन हेतु सबसे उपयुक्त एवं प्रभावी माध्यम पंचायती राज संस्थाओं को ही समझा जाता हैं। आजादी के बाद गांवों का सर्वागीण विकास, सत्ता का विकेंद्रीकरण एवं लोकतंत्र को गांवों के स्तर पर पहुंचाने के उद्देश्य को पूरा करने के लिए ही पंचायती राज संस्थाओं को लागू किया गया।

राजस्थान की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की लगभग 75 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या 44981 गांवों में निवास करती है। उसमें भी राजस्थान के बाड़मेर जिले की 93 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या 2464 गांवों में निवास करती हैं। बाड़मेर जिला दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों, विषम आर्थिक-सामाजिक परिवेश एवं प्राकृतिक आपदाओं से हमेशा जूझता रहा हैं।

इसके अलावा बाड़मेर जिले की शैक्षणिक संरचना भी संतोषप्रद नहीं है। यहां ग्रामीण विकास स्वतंत्रता के बाद बहुत चुनौतीपूर्ण रहा है। योजनाओं का सुदृढ़ क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए भी बहुत प्रयास किए गए हैं। ग्रामीण विकास की अनेक योजनाओं के उपरांत भी राजस्थान के बाड़मेर जिले के अधिकांश गांवों में कुछ आधारभूत सुविधाओं का अभाव हैं। जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वच्छता, शुद्ध पेयजल, बिजली, सड़कों के निर्माण, स्वास्थ्य सेवाओं आदि मूलभूत सुविधाओं की मांग निरंतर बढ़ रही है। ग्रामीण जनसंख्या का पलायन शहरों की ओर होने लगा हैं। फिर भी हमारे सामाजिक आर्थिक परिवेश के दृष्टिगत गांवों का महत्व आज भी बना हुआ हैं। वर्तमान वैश्विक महामारी कोविड-19 के दौरान ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में जन सहभागिता को वास्तविक व मूर्तरूप बनाने में पंचायती राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं।

राजस्थान के बाड़मेर जिलें के ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका अंत्यत महत्वपूर्ण हैं। बाड़मेर जिले में ग्रामीण विकास हेतु क्रियान्वित योजनाओं को सफल बनाने में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत स्पष्ट किया जा सकता है :–

1- **f'k{kk d {k= e %** शिक्षा सभी प्रकार की समस्याओं के समाधान की कुंजी होती हैं। शिक्षा सभी के लिए जीवन में आगे बढ़ने और सफलता प्राप्त करने के लिए बहुत आवश्यक है। यह हममें आत्मविश्वास विकसित करने के साथ ही हमारे सर्वांगीण व्यक्तित्व निर्माण में भी सहायता करती है। आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा बहुत ही महत्वपूर्ण है। सरकार द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा का प्रचार करने के लिए विभिन्न योजनाएं चलाई जा रही हैं जिसमें शिक्षाकर्मी परियोजना, ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड, नवोदय विद्यालय योजना, गुरू मित्र योजना, जनशाला कार्यक्रम, शिक्षा गारंटी योजना, सर्व शिक्षा अभियान, साक्षर भारत कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, राष्ट्रीय एवं राज्य प्रतिभा खोज परीक्षा तथा बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय, गार्गी पुरस्कार, मीना मंच, इंदिरा प्रियदर्शनी पुरस्कार, ट्रांसपोर्ट वाउचर योजना, साईकिल वितरण योजना आदि प्रमुख हैं। इन सभी योजनाओं के सफल संचालन में पंचायती राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका हैं। इक्कीसवीं सदी में ग्रामीण समाज के समग्र विकास के लिए एक ऐसी आबादी की आवश्यकता है जो अच्छी तरह से शिक्षित और कौशल, दृष्टिकोण और ज्ञान से सुसज्जित हो। न्यायपूर्ण और समतावादी समाज बनाने में, शिक्षा की प्रमुख भूमिका होती है।

2- **'k) i; ty lcf/kr ;ktuk, %** राजस्थान का नाम सुनते ही रेगिस्तान की छवि सामने नजर आती है, लेकिन अब सरकार की विभिन्न जन

कल्याणकारी योजनाओं की बदौलत स्थितियां बदल गई हैं। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र के लोग न सिर्फ शुद्ध वातावरण में जीवनयापन कर रहे हैं बल्कि विभिन्न योजनाओं के जरिए उन्हें शुद्ध पेयजल भी मिल रहा है। बाड़मेर जिले के ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल की कमी को दूर करने के लिए जल ग्राम योजना, मुख्यमंत्री जल स्वावलंबन अभियान, जल क्रांति अभियान, एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन आदि योजनाएं पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ही सफल हुईं हैं। यहां ग्रामीण जल संरक्षण की परंपरागत युक्तियां नाड़ी, बावड़ी, टांका, खड़ीन, टोबा, झालरा, बेरी, पालर पानी आदि आज भी पंचायती राज संस्थाओं द्वारा संरक्षित किए जाते हैं।

3- **LoPNrk lac/kh ;kstuk,** % स्वच्छता और स्वास्थ्य का हमेशा से गहरा संबंध रहा है। प्रदूषित वातावरण से कई तरह की बीमारियां जन्म लेती हैं। इसलिए स्वस्थ जीवन जीने के लिए स्वच्छता बहुत जरूरी है। स्वच्छता हमारे जीवन से जुड़ी एक अच्छी आदत हैं। जिसे सभी को अपने जीवन में अपनाना चाहिए, क्योंकि स्वच्छता से मनुष्य के जीवन को मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से अनेक लाभ हो सकते हैं। अच्छा स्वास्थ्य किसी का भी जीवन बेहतर बना सकता है। क्योंकि स्वच्छता अच्छे स्वास्थ्य की कुंजी होती हैं। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र में स्वच्छता बनाए रखने हेतु पंचायत स्तर पर विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम चलाए जाते हैं। स्वच्छ भारत मिशन अभियान सम्पूर्ण भारत में सक्रिय हैं। जिसका उद्देश्य महात्मा गांधीजी की 150वीं वर्षगांठ 2 अक्टूबर 2019 तक भारत को खुले में शौच से मुक्त करना रहा हैं। आज राजस्थान के बाड़मेर जिले के ग्रामीण क्षेत्र में हर घर में शौचालय बना हुआ हैं। पंचायती राज संस्थाओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में सम्पूर्ण साफ-सफाई के लिए वैज्ञानिक ठोस एवं तरल अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए, समुदाय-प्रबंधित प्रणालियों का विकास किया गया हैं। पंचायती राज संस्थाओं ने ग्रामीणों में जागरूकता सृजन और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्थाई स्वच्छता को बढ़ावा मिला हैं।

4- **fctyh vkifrl ;kstuk,** % आज वैश्विक युग में हर कार्य बिजली की सहायता से ही संभव हैं। बिजली की उपयोगिता केवल शहरों तक ही सीमित नहीं है बल्कि ग्रामीण क्षेत्र में भी उसकी उतनी ही उपयोगिता हैं। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र में बिजली आपूर्ति हेतु कई योजनाएं जिसमें उज्जवल डिस्कॉम इंश्योरेंस योजना (उदय), दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना, बिजली सब के लिए योजना, मुख्यमंत्री ग्रामीण घरेलू कनेक्शन योजना, मुख्यमंत्री विद्युत सुधार अभियान, उन्नत ज्योति अफोर्डेबल एल.ई.डी फॉर ऑल (उजाला) आदि योजनाएं पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से सफल सिद्ध हुईं हैं।

आज बाड़मेर जिले का कोई भी दूर दराज गांव भी ऐसा नहीं रहा जहां बिजली आपूर्ति अभी तक नहीं हो पाई हो।

5- LokLF; lfo/kk,a lac/kh ;kstuk,a % स्वास्थ्य एक मौलिक मानव अधिकार हैं। यह मानव जीवन की बेहतर गुणवत्ता के लिए आवश्यक हैं। स्वस्थ नागरिक राष्ट्र एवं समाज की मानवीय सम्पत्ति है। व्यक्ति के अस्वस्थ होने पर उसकी कार्य क्षमता में कमी आती है, जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र एवं समाज के समग्र विकास पर प्रभाव पड़ता है। स्वास्थ्य ऐसा कारक है जो देश के आर्थिक विकास को प्रभावित करता है क्योंकि किसी भी देश का विकास वहां के लोगों के बेहतर स्वास्थ्य का परिणाम हैं। राजस्थान में स्वास्थ्य से जुड़ी कई योजनाएं शुरू की गई है जिसमें आयुष्मान भारत योजना, राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम, राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम, जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम, मिशन इंद्रधनुष, राष्ट्रीय आरोग्य निधि, प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना, स्वास्थ्य बीमा योजना, प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, प्रधानमंत्री भारतीय जन धन योजना, मुख्यमंत्री चिरंजीवी स्वास्थ्य बीमा योजना एवं मुख्यमंत्री निशुल्क दवा योजना आदि योजनाएं प्रमुख हैं। पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से इन योजनाओं का लाभ सभी ग्रामीणों को प्राप्त हो रहा हैं।

6- fu/kurk mUeyu lac/kh ;kstuk,a % निर्धनता को एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें व्यक्ति जीवन के निर्वाह के लिये बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ होता है। इन बुनियादी आवश्यकताओं में भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधाएं आदि सम्मिलित होती हैं। ग्रामीण निर्धनता काफी हद तक कम उत्पादकता और बेरोजगारी का परिणाम है। राजस्थान की ग्रामीण अर्थव्यवस्था व्यापक रूप से कृषि पर निर्भर करती है। लेकिन राजस्थान में खेती अप्रत्याशित मानसून पर निर्भर करती है जिससे उपज में अनिश्चितता की स्थिति बनी रहती है। पानी की कमी, खराब मौसम तथा सूखा भी ग्रामीण इलाकों में निर्धनता का प्रमुख कारण है। चरम निर्धनता कई किसानों को आत्महत्या करने के लिये मजबूर करती है। राजस्थान के बाड़मेर जिलें के ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से निर्धनता उन्मूलन हेतु कई योजनाएं व कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं। इनमें मुख्य रूप से राष्ट्रीय काम के बदले अनाज कार्यक्रम, प्रधानमंत्री रोजगार योजना, ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना, अंत्योदय अन्न योजना, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी (मनरेगा), इंदिरा आवास योजना, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना एवं वृद्धावस्था पेंशन योजना आदि प्रमुख हैं।

7- lMd fuekZ.k lc/kh ;kstuk,a % सड़क परिवहन देश के आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचा है। यह गति, संरचना और विकास के प्रतिरूप को प्रभावित करता है। किसी भी देश एवं प्रदेश में सड़कों, पुलों तथा भवनों का निर्माण उस देश की प्रगति का सूचक है। राजस्थान में यातायात का अधिकांश भाग सड़कों पर ही चलता हैं। राज्य में सड़कें सभी तरह के विकास की एक प्रथम कड़ी हैं। राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क तंत्र को विकसित करने हेतु पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से वर्तमान समय में महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। इसमें प्रमुख रूप से प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, हरित सड़क योजना, महात्मा गांधी राज्य सड़क योजना, एवं भारत निर्माण योजना आदि प्रमुख हैं। राजस्थान सरकार ने राज्य में सड़क तंत्र की कायापलट के लिए राजस्थान रोड विजन-2025 कार्यक्रम तैयार किया हैं। जिसमें पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से राजस्थान के सभी गांवों को सड़कों से जोड़ने के बाद अगले 10 साल में एक्सप्रेस-वे, फ्लाई ओवर व चार लाईन के राजकीय राजमार्ग बनाए जाएगें। इसमें ग्रामीण संपर्क सड़कों व सड़क तंत्र के रखरखाव को सर्वाधिक प्राथमिकता दी जा रही हैं।

निष्कर्ष

भारतीय समाज का सर्वांगीण विकास ग्रामीण क्षेत्र के समन्वित एवं संतुलित विकास में अर्न्तनिहित हैं। ग्राम पंचायतों के माध्यम से गांवों के चहुंमुखी विकास को गति प्रदान करने तथा कल्याणकारी गतिविधियों को लोकप्रिय बनाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। पंचायती राज संस्थाएं स्थानीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में लोक कल्याणकारी प्रशासन की आधारभूत इकाई है। सूचना के अधिकार से पंचायती राज संस्थाओं में पारदर्शिता एवं जवाबदेही आयी हैं। जिसके परिणाम स्वरूप ग्रामीण स्तर पर आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों के विकास में गति के साथ-साथ समस्याओं के समाधान में अभुतपूर्व वृद्धि हुई हैं। वैश्विक महामारी कोविड-19 ने संपूर्ण विश्व के समक्ष नई चुनौतियां और समस्याएं उत्पन्न की हैं। कोरोना महामारी ने न केवल हमारी स्वास्थ्य प्रणाली के सामने संकट खड़ा किया है, बल्कि आर्थिक सामाजिक स्तर पर भी दुनिया में बड़े बदलाव किए हैं। वर्तमान कोविड-19 महामारी के दौरान ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में जन सहभागिता को वास्तविक व मूर्त रूप बनाने में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका सराहनीय हैं। सरकार द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को समय-समय पर सशक्त बनाने का प्रयास किया जाता रहा हैं। जिससे ग्रामीण विकास का मार्ग सुगम होता दिखाई दे रहा हैं। पंचायती राज संस्थाएं सदियों से भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन का अभिन्न अंग रही है इसकी प्रासंगिकता एवं महत्व को संविधान के 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में नया आयाम दिया गया और पंचायतों को व्यापक शक्तियां व अधिकार देने का दायित्व

राज्यों को सौंपा। पंचायती राज संस्थाओं को अपने अधीनस्थ भौगोलिक क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए योजनाओं की पहचान और उसकी प्राथमिकता निर्धारित करने के सिद्धांतों के निरूपण कर सामाजिक एवं आर्थिक विकास के योजना निर्माण की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी दी गई है। राजस्थान की बहुसंख्यक आबादी आज भी गांवों में निवास करती है इसलिए गांवों के समग्र विकास में ही राजस्थान की प्रगति और समृद्धि की कुंजी छिपी है।

संदर्भ

1. कटारिया, सुरेन्द्र : ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, 2003, पृष्ठ संख्या 176
2. मीना, जनक सिंह : ग्रामीण विकास के विविध आयाम, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, 23 मेन अंसारी रोड, दिल्ली, 2010, पृष्ठ संख्या 31-32
3. दांगी, के. एस : पंचायती राज और ग्रामीण विकास– एक सैद्धान्तिक विश्लेषण, आदित्य पब्लिशर्स, बीना, मध्य प्रदेश, 2001, पृष्ठ संख्या 102-103
4. डॉ. महिपाल : पंचायती राज चुनौतियां एवं संभावनाएं, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नेहरू भवन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ संख्या 107
5. मैथ्यू, जॉर्ज : भारत में पंचायती राज : परिप्रेक्ष्य एवं अनुभव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, जनवरी 2015 पृष्ठ संख्या 71
6. आर्य, विमला : पंचायती राज में महिलाओं की भूमिका, राजस्थानी ग्रथांगार, सोजती गेट, जोधपुर, 2013, पृष्ठ संख्या 110-111
7. शर्मा, बी. जी : जन सहभागिता से ग्रामीण विकास, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2000, पृष्ठ संख्या 72
8. यादव, सुबह सिंह व यादव, सत्यभान : ग्रामीण विकास का आधुनिक दर्शन, सबलाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1997, पृष्ठ संख्या 136
9. राजस्थान पंचायती राज वार्षिक प्रतिवेदन 2010 से 2021 तक।
10. दिव्य पंचायत, पंचायत वाणी, दैनिक भास्कर, राजस्थान पत्रिका एवं दैनिक नवज्योति बाड़मेर।
11. www.barmer.rajasthan.gov.in
12. www.rajpanchayt.rajasthan.gov.in



PUBLICATIONS

The Institute disseminates information, analyses, viewpoints and knowledge related to public administration, governance, policy and development through its regular publications viz., monthly digital editions of IIPA e-Newsletters, quarterly editions of Indian Journal of Public Administration (IJPA) in association with Sage Publications, quarterly editions of Nagarlok, quarterly editions of Documentation in Public Administration (DPA), biannual editions of Lok Prashashan (Hindi Journal) and quarterly editions of IIPA Digest.

So far IIPA has published more than 500 books, monographs, reports, working papers, and compendiums in spheres of governance and public administration. A few of the books authored by renowned authors including IIPA faculty members are also available for purchase.

INDIAN JOURNAL OF PUBLIC ADMINISTRATION (IJPA)

(Quarterly since 1955)

Flagship refereed UGC CARE listed journal of IIPA, IJPA in collaboration with SAGE Publications publishes manuscripts covering topics related to Public Administration, Public Policy, Good Governance, Bureaucracy, Leadership, Environment, Law, Social Welfare, etc. Research articles, case studies, book reviews, essays, notes and documents related to themes authored by experts are regularly featured in IJPA. The author of the best article every year is conferred with the prestigious late Shri TN Chaturvedi Award by the Hon'ble Vice President of India.

(LOK PRASHASAN (HINDI

(Bi-annually since 2008)

Lok Prashasan is IIPA's only Hindi journal published with an aim to promote Hindi language and encourage Hindi literature in the field of public administration. Articles and research papers related to Public Administration, Public Policy, Good Governance, Bureaucracy, Leadership, Environment, Law, Social Welfare, etc., are regularly published in this journal.

IIPA DIGEST

(Quarterly since 2019)

The magazine covers news, stories and features related to latest initiatives and trends of government.

NAGARLOK

(Quarterly since 1969)

The journal covers topics related to Urban Studies with a focus on Urban Life, Metropolitan System, Urban Economic Development, Urban Finances, etc.

DOCUMENTATION IN PUBLIC ADMINISTRATION (DPA)

(Quarterly since 1973)

DPA indexes articles/papers/reports/monographs on Public Administration covered by various periodicals.

IIPA NEWSLETTER (Monthly since 1955)

Now only available as an e-newsletter, it features news related to events and programmes conducted in the Institute.

To read more visit our site iipa.org.in

For contribution, subscription and advertisement related queries, please e-mail: chukkathmeghna@gmail.com



INDIAN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान
INDRAPRASTHA ESTATE, RING ROAD, NEW DELHI - 110 002
011-23468300 | 011-23702440
helpdesk.iipa@gmail.com | iipa.org.in | @iipa9

Published by Surendra Nath Tripathi, Director General, IIPA for Indian Institute of Public Administration, New Delhi 110002 and Printed at New United Process, A-26, Naraina Indl. Area, Phase-II, New Delhi 110028